भारत 2023 INDIA
वसुधैव कुटुम्बकम्
ONE EARTH • ONE FAMILY • ONE FUTURE

INTERNATIONAL YEAR OF
MILLETS
2023

आज़ादी का
अमृत महोत्सव

तृण संदेश

राजभाषा वार्षिक पत्रिका

अंक – 18, वर्ष 2022–23

भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय
जबलपुर, (म.प्र.)
(आई.एस.ओ. 9001 : 2015 प्रमाणित)

INTERNATIONAL YEAR OF
MILLETS
2023

G20
भारत 2023 INDIA
वसुधैव कुटुम्बकम्
ONE EARTH • ONE FAMILY • ONE FUTURE

INTERNATIONAL YEAR OF
MILLETS
2023

आज़ादी का
अमृत महोत्सव

तृण संदेश

राजभाषा वार्षिक पत्रिका

अंक – 18, वर्ष 2022–23

भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय

जबलपुर, (म.प्र.)

(आई.एस.ओ. 9001: 2015 प्रमाणित)

भाकृअनुप
ICAR

D W R

तृण संदेश

राजभाषा वार्षिक पत्रिका

अंक–18, वर्ष 2022–23

संरक्षक एवं प्रकाशक

डॉ. जे.एस. मिश्र

निदेशक

प्रधान संपादक

डॉ. पी.के. सिंह

प्रधान वैज्ञानिक

संपादक मंडल

डॉ. वी.के. चौधरी
वरिष्ठ वैज्ञानिक

डॉ. योगिता घरडे
वरिष्ठ वैज्ञानिक

श्री संदीप धगट
मुख्य तकनीकी अधिकारी

श्री जी.आर. डोंगरे
सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी

श्री बंसत मिश्रा
वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी

छायांकन

श्री बंसत मिश्रा

वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी

सम्पर्क सूत्र

भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर, मध्यप्रदेश

फोन : 0761–2353138 फैक्स : 0761–2353129

ई–मेल : Director.Weed@icar.gov.in

वेबसाइट : https://dwr.icar.gov.in

फेसबुक लिंक : https://www.facebook.com/Icar-dwr-jabalpur

ट्विटर लिंक : https://twitter.com/DwrIcar

ISBN : 978-81-958133-7-7

इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

डॉ. हिमांशु पाठक
सचिव (डेयर) एवं महानिदेशक (भाकृअनुप)
Dr. HIMANSHU PATHAK
SECRETARY (DARE) & DIRECTOR GENERAL (ICAR)

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली 110 001
GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION (DARE)
AND
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH (ICAR)
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS WELFARE
KRISHI BHAVAN, NEW DELHI 110 001
Tel.: 23382629: 23386711 Fax: 91-11-23384773
E-mail: dg.icar@nic.in

संदेश

भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा खरपतवारों के प्रबंधन हेतु नवीनतम अनुसंधान किये जा रहे हैं, जो कृषि क्षेत्र में उत्पादन को बढ़ाने के उद्देश्य से अति आवश्यक है। यह वर्ष अन्तर्राष्ट्रीय पोषक अनाज (मिलेट) वर्ष के रुप में मनाया जा रहा है। मिलेट्स (श्री अन्न) आज और भविष्य की आवश्यकता है, अतः इस पर किये जा रहे अनुसंधान की नवीनतम तकनीक को किसानों तक उनकी भाषा में उपलब्ध कराना अति आवश्यक है जिससे आम किसानों को इसका लाभ मिल सके तथा वे इन तकनीकों को अपनाकर अपनी आय में बढ़ोत्तरी कर सके। खरपतवारों के प्रबंधन से संबंधित लेख व कृषि उत्पादन से संबंधित विभिन्न जानकारियों को उल्लेखित करती हुई पत्रिका **"तृण संदेश"** का प्रकाशन किया जाना एक सराहनीय प्रयास है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि खरपतवार अनुसंधान निदेशालय खरपतवारों के प्रबंधन व खरपतवार उन्मूलन के प्रचार–प्रसार हेतु **"तृण संदेश"** पत्रिका के 18 वें अंक का प्रकाशन कर रहा है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह अंक कृषकों, कृषि वैज्ञानिकों/विद्यार्थियों एवं कृषि से सबंधित आम–जनमानस हेतु उपयोगी सबित होगा तथा राजभाषा के प्रचार–प्रसार हेतु प्रेरणादायक होगा।

"तृण संदेश" पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

दिनांक : 14 अगस्त, 2023
नई दिल्ली

हि पाठक
(हिमांशु पाठक)

भाकृअनुप

ICAR

अंक - 18, वर्ष 2022-23

भारत सरकार
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा विभाग
कृषि भवन, नई दिल्ली–110001

GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS' WELFARE
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH AND EDUCATION
KRISHI BHAWAN, NEW DELHI-110001

सत्यमेव जयते

संजय गर्ग
SANJAY GARG
अपर सचिव, डेयर एवं सचिव, आई.सी.ए.आर.
ADDITIONAL SECRETARY, DARE &
SECRETARY, ICAR

संदेश

हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है। यहां की अर्थव्यवस्था का बड़ा भाग कृषि पर आधारित हैं। खेती से अधिक उत्पादन एवं लाभ पाने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि कृषि के क्षेत्र में हो रहे नित नये प्रयोगों, अनुसंधानों एवं तकनीकों की जानकारी कृषकों को उनकी भाषा में प्राप्त हो । इस दिशा में भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदशालय, जबलपुर अपनी वार्षिक पत्रिका तृण संदेश के माध्यम से कृषको को निदेशालय द्वारा विकसित विभिन्न तकनीको की जानकारी सरल भाषा में समय–समय पर उपलब्ध करा रहा है।

इस अवसर पर **तृण संदेश** पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए मैं निदेशालय को अपनी ओर से हार्दिक शुभकामनाएं देता हूं।

दिनांक : 11.08.2023

संजय गर्ग

भाकृअनुप

ICAR

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद,
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
कृषि भवन, नई दिल्ली–100001

Government of India
Department of Agricultural Research & Education and
Indian Council of Agricultural Research
Ministry of Agriculture & Farmer's Welfare
Krishi Bhawan, New Delhi-110001

अलका अरोड़ा
ALKA ARORA
अपर सचिव एवं वित्तीय सलाहकार
Addl. Secretary & Financial Adviser
Phone : 23384360, 23389388
E-mail : asfa.icar@nic.in

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा **"तृण संदेश"** हिंदी पत्रिका के 18वें अंक का प्रकाशन किया जा रहा है। खरपतवार अनुसंधान निदेशालय खरपतवारों के समुचित प्रबंधन हेतु विभिन्न तकनीकी जानकारियों के प्रचार–प्रसार हेतु निरन्तर कार्य कर रहा है तथा कृषि के क्षेत्र में हो रहे नवाचारों की जानकारी कृषकों को राजभाषा हिन्दी के माध्यम से पंहुचा रहा है। इस दिशा में **"तृण संदेश"** राजभाषा पत्रिका का प्रकाशन एक सार्थक पहल है।

इस अवसर पर **"तृण संदेश"** पत्रिका के प्रकाशन के लिए मैं निदेशालय को अपनी हार्दिक शुभकामनाएं देती हूं।

(अलका अरोड़ा)

दिनांक :14.08.2023

भाकृअनुप

ICAR

अंक - 18, वर्ष 2022-23

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कक्ष क्र. 101, कृषि अनुसंधान भवन–II , नई दिल्ली–110 012, भारत
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
Room No. 101, Krishi Anusandhan Bhawan-II, Pusa, New Delhi-110012, India

डॉ. सुरेश कुमार चौधरी
उप महानिदेशक (प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन)
Dr. Suresh Kumar Chaudhari
Deputy Director General (Natural Resource Management)

संदेश

भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधीनस्थ खरपतवार प्रबंधन पर अनुसंधान एवं उन्नत तकनीकों का प्रचार–प्रसार करने वाला देश का प्रमुख संस्थान है। खरपतवारों की समस्या का समय से उचित प्रबंधन न करने की दशा में फसल उत्पादकता एवं गुणवत्ता पर विपरीत असर पड़ता है। इस समस्या के समाधान हेतु संस्थान द्वारा कृषकों को सरल भाषा में तकनीकी जानकारी प्रदान करना एक सराहनीय कदम है।

निदेशालय द्वारा खरपतवारों के उचित प्रबंधन के लिए लगातार किए जा रहे प्रयासो को दर्शाती पत्रिका **"तृण संदेश"** किसानों में जागरूकता लाने के साथ ही राजभाषा के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। इस पत्रिका के माध्यम से किसानों को हिन्दी में खरपतवार प्रबंधन पर तकनीकी जानकारी के इस उत्तम प्रयास की मैं सराहना करता हूं एवं **"तृण संदेश"** पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु शुभकामना देता हूं।

(सुरेश कुमार चौधरी)

दिनांक : 10 अगस्त, 2023
स्थान : नई दिल्ली

भाकृअनुप

ICAR

डॉ. राजबीर सिंह
सहायक महानिदेशक, (सस्य,कृ.वा. एवं ज.प.)
कृषि अनुसंधान भवन-II नई दिल्ली-110012

संदेश

भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर राजभाषा के प्रचार-प्रसार हेतु नये अनुसंधानों एवं तकनीकों की जानकारी समय-समय पर कृषकों को सरल हिंदी भाषा मे प्रदान कर रहा है। कृषि में खरपतवारों के उचित प्रबंधन द्वारा न केवल फसलों की पैदावार बढ़ाई जा सकती है, वरन् उत्पादन लागत मे कमी आने से किसानों की आय में वृद्धि भी की जा सकती है। इस दिशा में **"तृण संदेश"** पत्रिका एक मील का पत्थर साबित होगी।

इस अवसर पर **"तृण संदेश"** पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए मैं निदेशालय को अपनी हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ।

दिनांकः 10 अगस्त, 2023
स्थानः नई दिल्ली

(राजबीर सिंह)

भाकृअनुप

ICAR

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
कृषि भवन, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मार्ग
KRISHI BHAWAN, DR. RAJENDRA PRASAD MARG
नई दिल्ली-110001/NEW DELHI-110001

संजय बोकोलिया
Sanjay Bokolia
निदेशक (जीएसी/राजभाषा)
Director (GAC/OL)

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा खरपतवारों के प्रबंधन से संबंधित लेख व खरपतवार उन्मूलन से संबंधित विभिन्न जानकारियों को उल्लेखित करती हुई पत्रिका **"तृण संदेश"** का प्रकाशन किया जा रहा है। पत्रिका अपनी सरल भाषा में खरपतवार प्रबंधन से संबंधित तकनीकी ज्ञान को कृषकों तक पहुंचाकर उन्हें लाभान्वित करेगी। कृषि की उन्नत प्रौद्योगिकी के प्रचार–प्रसार में राजभाषा हिन्दी का अभूतपूर्व योगदान रहा है।

"तृण संदेश" पत्रिका के माध्यम से खरपतवार प्रबंधन तकनीकों का प्रचार–प्रसार एक सराहनीय प्रयास होगा।

इस अवसर पर मैं निदेशालय को बधाई देता हूँ तथा **"तृण संदेश"** पत्रिका के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ ।

दिनांक 14.08.2023

(संजय बोकोलिया)

भाकृअनुप

ICAR

अंक - 18, वर्ष 2022-23

निदेशक की कलम से

अंतर्राष्ट्रीय पोषक अनाज (मिलेट्स) वर्ष 2023 के अंतर्गत हमारे देश में मिलेट्स (ज्वार, बाजरा, रागी, सांवा, चीना, कोदो, कुटकी एवं कंगनी) के उत्पादन, प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन पर विशेष जोर दिया जा रहा है। वैसे तो हरितक्रांति के पूर्व हमारे देश मे मिलेट्स का उत्पादन एवं उपभोग प्रमुखता से किया जाता था, परन्तु हरितक्रांति के बाद धान एवं गेहूं को प्राथमिकता मिलने से धीरे–धीरे इन फसलों का क्षेत्रफल एवं उत्पादन घटता गया। आज भी विश्व के कुल पोषक अनाज उत्पादन में 15 प्रतिशत की भागीदारी के साथ भारत एक अग्रणी देश हैं। लेकिन इन फसलों की औसत पैदावार काफी कम है। खरीफ मौसम की फसल होने के कारण इनमें खरपतवारों (विशेषकर घास कुल) का काफी प्रकोप होता है, फलस्वरूप पैदावार में 15–83 प्रतिशत तक की कमी पायी गई है। मिलेट फसलों एवं उनमें उगने वाले घास कुल के खरपतवारों में अनुवांशिक स्तर पर काफी समानता होने के कारण प्रचलित शाकनाशियों द्वारा इनका प्रभावी नियंत्रण नहीं हो पाता है। भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर, अखिल भारतीय समन्वित खरपतवार अनुसंधान परियोजना केन्द्रो के साथ मिलकर पोषक अनाज फसलों में समेकित खरपतवार प्रबंधन तकनीक के विकास पर अनुसंधान कार्य कर रहा है, तथा साथ ही साथ प्रशिक्षण एवं प्रचार–प्रसार के माध्यम से इन तकनीकों को किसानों तक पहुंचा रहा है। जिससे इन फसलो मे खरपतवारों से होने वाली हानि को कम करके इनकी उपज, उत्पादन एवं गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकें तथा उत्पादन लागत को कम करके किसानों की आमदनी में वृद्धि की जा सकें।

खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की स्थापना वर्ष 1989 में राष्ट्रीय खरपतवार विज्ञान अनुसंधान केन्द्र के रूप में की गई थी। विगत 34 वर्षो से यह निदेशालय फसलों एवं गैर फसली क्षेत्रों में खरपतवार प्रबंधन की दिशा में लगातार नवाचार कर रहा है। एक संस्थान के रूप में यह निदेशालय अपने 17 नियमित एवं 07 स्वेच्छिक अ.भा.स.अनु.परि. केन्द्रो के माध्यम से पारिस्थितिकी–विशेष अनुसंधान के साथ–साथ तकनीकी हस्तांतरण एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों का भी आयोजन करता है। यह निदेशालय समय–समय पर कृषकों, कृषि वैज्ञानिकों, छात्रों, अधिकारियों एवं अन्य हितधारकों के लिए प्रशिक्षण आयोजित करता है एवं स्नातकोत्तर एवं पी.एच.डी. छात्रों को खरपतवार प्रबंधन में शोध की सुविधा भी उपलब्ध कराता है। तथा विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय शोध संस्थानों एवं खरपतवारनाशी उत्पाद कंपनियों के साथ अनुबंध के तहत नवाचार को और अधिक मजबूती प्रदान कर रहा है। वर्तमान में इस निदेशालय द्वारा नये शाकनाशी रसायनों का मूल्यांकन, जैविक खरपतवार प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन, संरक्षित कृषि आधारित विभिन्न फसल प्रणालियों में टिकाऊ खरपतवार प्रबंधन, नवीनतम निराई उपकरण एवं छिड़काव तकनीक का विकास, जलवायु परिवर्तन के तहत फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा एवं शाकनाशी प्रभावकारिता, जलीय खरपतवार साल्विनिया मोलेस्टा का जैविक नियंत्रण, शाकनाशी रसायनों का पर्यावरणीय प्रभाव, शाकनाशियों के उचित प्रयोग हेतु मोबाइल एप का विकास, प्राकृतिक एवं जैविक खेती में खरपतवार प्रबंधन, ड्रोन से शाकनाशी रसायनों का छिड़काव, शाकनाशी सहिष्णु खरपतवारों का प्रबंधन आदि पर अनुसंधान एवं प्रसार कार्य किया जा रहा है।

निदेशालय द्वारा प्रकाशित **"तृण संदेश"** के अठारहवें अंक को प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष का अनुभव हो रहा है। इस पत्रिका मे खरपतवार प्रबंधन के लेखों के साथ–साथ सामान्य कृषि उत्पादन संबंधी लेखों को सरल भाषा में किसानों तक पहुंचाने का सार्थक प्रयास किया गया है। मुझे पूरा विश्वास है कि इस पत्रिका द्वारा हम ज्यादा से ज्यादा किसानो, छात्रों, वैज्ञानिकों एवं अन्य हितग्राहियों को खरपतवार प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं से अवगत करा पायेंगे। आपके बहुमूल्य सुझाव एवं प्रतिक्रियाओं के लिए हम प्रतीक्षारत रहेगे। मैं इस पत्रिका के संपादक मंडल, लेखको तथा निदेशालय के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों को इस सुन्दर संकलन में सहयोग हेतु धन्यवाद देता हूँ।

जय हिन्द!

(जे.एस. मिश्र)
निदेशक

दिनांक : 10 अगस्त, 2023

भाकृअनुप

ICAR

सम्पादकीय

नवीनतम अनुसंधान के परिणामों को किसानों तथा जन–साधारण तक हिन्दी में पहुँचाना निदेशालय का हमेशा से एक प्रमुख ध्येय रहा है। इस उपलब्धि को हासिल करने हेतु निदेशालय निरंतर प्रयास करता रहा है। जिससे वैज्ञानिक उपलब्धियों को किसानों तक आसानी से उनकी अपनी हिन्दी भाषा में पहुँचाया जा सके, तथा दिन–प्रतिदिन किये जा रहे नए–नए कृषि अनुसंधानों की जानकारी एवं उसका लाभ कृषकों एवं अन्य जनमानस तक सहजता से पहुँच सके। विगत कुछ वर्षो में विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में हमारे देश ने विशेष प्रगति की है, संचार माध्यमों के विशेष प्रचार–प्रसार का सकारात्मक प्रभाव हमारी कृषि पर भी पड़ा है। निदेशालय द्वारा समय–समय पर इलेक्ट्रॅानिक माध्यमों से भी संपर्क कर अथवा संदेश भेजकर कृषकों को कृषि संबंधी समसामयिक जानकारी प्रदान की जा रही है तथा खरपतवार प्रबंधन के विभिन्न वैज्ञानिक तरीकों एवं कृषि विज्ञान की अन्य उपलब्धियों से अवगत कराया जा रहा है। ऐसे समय में निदेशालय द्वारा इस पत्रिका का प्रकाशन एक सराहनीय कदम हैं। कृषि उत्पादन को अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप एवं कृषि विज्ञान को राजभाषा के माध्यम से लक्ष्य की प्राप्ति हेतु कृषि के प्रत्येक क्षेत्र, अर्थात् कृषि शिक्षा, कृषि शोध एवं प्रसार को सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता है। इसी तारतम्य में फसलों में खरपतवारों से होने वाली समस्याओं को दूर करने के लिए इस निदेशालय द्वारा अनेक प्रयास किए जा रहें है। सभी विकसित तकनीकों को कृषकों तक पहुँचाने के लिए राजभाषा का उपयोग सहज है। चूंकि हमारे देश में विभिन्न जनसमुदाय विभिन्न बोलियां बोलते है परंतु हिन्दी एक मात्र ऐसी भाषा है जो विभिन्न बोलियों के बीच सेतु का कार्य करती हैं, जिसके माध्यम से हम अपनी अभिव्यक्ति एवं ज्ञान को दूसरों तक आसानी से पहुँचा सकते है।

''**तृण संदेश**'' पत्रिका के अठारहवें अंक में खरपतवार प्रबंधन में किए गए शोध लेखों के साथ–साथ संरक्षित खेती, मोटे अनाज एवं सामान्य खेती से संबंधित महत्वपूर्ण विषयों को समाहित किया गया हैं। हिन्दी के उन्नयन के प्रति संकल्पित इस पत्रिका में प्रकाशित शोध लेखों व अन्य लेखकों के उत्कृष्ट विचारों से किसान व कृषि जगत से जुड़े लोग निश्चित रूप से लाभान्वित होंगे। हम इस पत्रिका के सफल प्रकाशन में अपना मार्गदर्शन एवं सहयोग प्रदान करने के लिए निदेशालय के निदेशक के प्रति आभार प्रकट करते है। हम सभी वैज्ञानिकों, लेखकों, कवियों के आभारी हैं जिन्होनें अपने शोध निष्कर्षो, अनुभवों तथा विचारों को लेखनीबद्ध कर इस पत्रिका के माध्यम से प्रस्तुत किया हैं। साथ ही साथ हम राजभाषा समिति एवं अन्य उन सभी सहयोगियों के हार्दिक आभारी है जिनके योगदान एवं प्रयासों से पत्रिका के ''अठारहवें संस्करण'' का प्रकाशन संभव हो सका है। आशा है कि आपको हमारे प्रयास पसंद आयेंगे। हम आपके सुझावों एवं प्रतिक्रिया हेतु आशान्वित रहेंगे।

संपादक मण्डल

भाकृअनुप

ICAR

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् महिमा गीत

जय जय कृषि परिषद् भारत की
सुखद प्रतीक हरित भारत की

कृषि धन पशु धन मानव जीवन
दुग्ध मत्स्य फल यंत्र सुवर्धन

वैज्ञानिक विधि नव तकनीकी
परिस्थितिकी का संरक्षण

सस्य श्यामला छवि भारत की
जय जय कृषि परिषद् भारत की

हिम प्रदेश से सागर तट तक
मरू धरती से पूर्वोत्तर तक

हर पथ पर है मित्र कृषक की
शिक्षा, शोध, प्रसार, सकल तक
आशा स्वावलंम्बित भारत की

जय जय कृषि परिषद् भारत की
जय जय कृषि परिषद् भारत की।

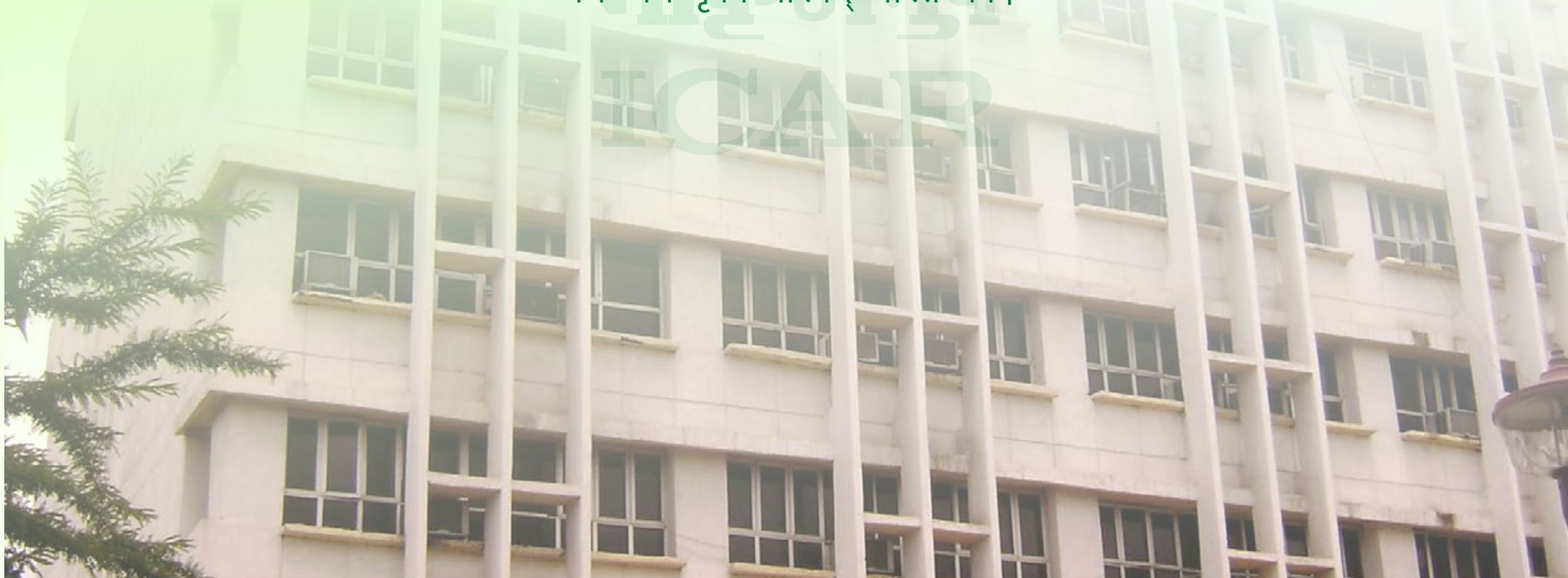

भाकृअनुप

ICAR

अंक - 18, वर्ष 2022-23

अनुक्रमणिका

क्र.	शीर्षक	लेखक	पृष्ठ
	खण्ड–अ		
1.	कदन्न फसल (श्री अन्न) में खरपतवार प्रबंधनः खाद्य एवं पोषण सुरक्षा का एक दीर्घकालिक विकल्प	पी.के. सिंह, वी.के. चौधरी, संतोष कुमार, एस.के. पारे एवं इति राठी भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	1-9
2.	आर्जीमोन मेक्सिकानाः औषधीय पहलू	योगिता घरडे भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	10-12
3.	फ्लेमवीडिंगः जैविक खेती में खरपतवार नियंत्रण के लिए एक विकल्प	अभिषेक उपाध्याय एवं के.पी. सिंह भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल, (म.प्र.)	13-15
4.	रबी फसलों में खरपतवारों का समन्वित प्रबंधन	चन्द्रशेखर खरे[1] एवं जितेन्द्र कुमार खरे[2] [1] कृषि विज्ञान केन्द्र, जांजगीर–चांपा (छ.ग.) [2] कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र, जांजगीर–चांपा (छ.ग.)	16-18
5.	खरपतवार से सुरक्षा के लिए मल्चिंग एक सरल विकल्प	गुंजन झा कृषि विज्ञान केंद्र, राजनांदगांव, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)	19-23
6.	औषधीय फसलों में रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण	प्रवीण दादासाहेब माने एवं पंचम कुमार सिंह नालन्दा उद्यानिकी महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा, (बिहार)	24-25
7.	रबी फसलों में खरपतवार प्रबंधन	तरूण कुर्रे एवं सत्येन्द्र पाटले कृषि विज्ञान केंद्र, मुंगेली (छ.ग.)	26-32
8.	कदन्न फसलों में खरपतवार प्रबंधन क्यो और कैसे?	स्तुति मौर्या, निधि वर्मा, विश्वजीत सिंह, दिनेश साह बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)	33-34
9.	जल कृषि में जलीय खरपतवार एवं शैवाल का नियंत्रण : उन्नत मत्स्य पालन की आधारशिला	मुकेश कुमार[1], सुधीर दास[1] एवं अनुपमा कुमारी[2] [1] कृषि विज्ञान केन्द्र, सुखेत, मधुबनी, बिहार, प्रसारशिक्षा निदेशालय [2] डॉ राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, (बिहार)	35-36
10.	धान की सीधी बुवाई में खरपतवार नियंत्रण	विनोद कुमार[1] एवं सतबीर सिंह पूनिया[2] [1] कृषि विज्ञान केन्द्र, फरीदाबाद (हरियाणा) [2] चौधरीचरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)	37-38
11.	संरक्षित कृषि का खरपतवार बीज बैंक पर प्रभाव एवं कम करने के उपाय	विकास सिंह, वी.के. चौधरी, मुनि प्रताप साहू, नरेन्द्र कुमार, अल्पना कुम्हरे और सोनाली सिंह भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	39-41

क्र.	शीर्षक	लेखक	पृष्ठ
12.	एकीकृत खरपतवार प्रबंधन : खरपतवार नियंत्रण का संयुक्त प्रयास	वरुचा मिश्रा एवं आशुतोष कुमार मल्ल भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उ.प्र.)	42-43
13.	खरपतवार प्रबंधन में शाकनाशी प्रतिरोध की समस्या	सोनाली सिंह, पी.के. मुखर्जी, रितु पांडे, मुनिप्रताप सिंह, विकास सिंह, नरेन्द्र पाटीदार, अल्पना कुम्हरे भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	44-45
14.	दलहनी फसलों में खरपतवार प्रबंधन	उत्तम कुमार, अनिल कुमार डागर, रवि रावत, ज्ञान सिंह एवं सुमित नारायण भाकृअनुप–राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)	46-49
15.	संरक्षित कृषि में लाभदायक कीटों की खरपतवार बीजों को कम करने में भूमिका	मुनि प्रताप साहू, वी.के. चौधरी, विकास सिंह, आरती साहू, नरेन्द्र कुमार, अल्पना कुम्हरे एवं सोनाली सिंह भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	50-53
16.	जलीय खरपतवार ''जलकुम्भी'' : समस्याएँ, समाधान एवं उपयोग	पी.के. सिंह, योगिता घरडे, संतोष कुमार, इति राठी एवं सुधीर कुमार पारे भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	54-58
17.	अश्वगंधा का महत्व एवं खरपतवार प्रबंधन	आनंद सैयाम[1], हिमांशु महावर[1], रितिका चौहान[1], अल्पना कुम्हरे[1], सालिकराम मोहारे[2] [1] भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.) [2] जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)	59-60
18.	बुवाई तिथि का रबी फसल के खरपतवारों पर प्रभाव	मृणाली गजभिये[1], मनीष भान[1], के.के. अग्रवाल[1] एवं नरेंद्र कुमार[2] [1] जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) [2] भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	61-63
19.	समुद्री खरपतवार (सी–वीड) तरल उर्वरक एवं कृषि में इसका महत्व	तरूण कुर्रे कृषि विज्ञान केंद्र, मुंगेली (छ.ग.)	64-66
20.	यांत्रिक विधियों द्वारा खरपतवार प्रबंधन	वी.के. चौधरी, विकास सिंह, मुनि प्रताप साहू, नरेन्द्र कुमार और अल्पना कुम्हरे भा.कृ.अनु.प.– खरपरवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	67-69
	खण्ड–ब		
21.	फीड ब्लॉक के माध्यम से फसल अवशेष प्रबन्धन	अमित कुमार, राजेश कुमार, संजीवकुमार गुप्ता, अभिजीत घटक एवं सूबोर्ना रायचौधरी बिहार कृषि विश्वविद्यालय साबौर, भागलपुर (बिहार)	70-74
22.	जन–जागृति एवं हरीतिमा संवर्धन द्वारा वर्षा–जल का संरक्षण	राम कुमार साहू कृषि अभियंत्रण एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, डॉ. राजेंद्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय पूसा, समस्तीपुर, (बिहार)	75-76
23.	आधुनिक कृषि क्रांति– कृषि 4.0	परिखा प्रकाश सिंह एवं आर.शिवराम कृष्णन जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)	77-81

क्र.	शीर्षक	लेखक	पृष्ठ
24.	लीची के प्रमुख कीट एवं नियंत्रण	प्रवीण दादासाहेब माने एवं पंचम कुमार सिंह नालन्दा उदयानिकी महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा, (बिहार)	82-83
25.	सरसों की उन्नत खेती : खाद एवं उर्वरक	ऋषिकेश तिवारी एवं शिखा उपाध्याय जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)	84-85
26.	जड़ीय औषधीय पौधे : उपयोग एवं लाभ	शोभा सोंधिया, नीलम राजपूत एवं सौम्या मिश्रा भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	86-88
27.	हरे चारे के उत्पादन के लिए सस्य क्रियाएं और पद्धतियां	पी.के. मुखर्जी और जितेन्द्र कुमार दुबे भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	89-94
28.	कुसुम फसल में सल्फर आवश्यक	उमेश कुमार पटेल दाऊ श्री वासुदेव चंद्राकर कामधेनु विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, अंजोरादुर्ग (छ.ग.)	95-97
29.	राजस्थान में आलू की उन्नत खेती एवं वर्तमान परिदृश्य	डी.एल. यादव'[1], प्रताप सिंह[1], बी एल नागर[1], प्रतिक जैसानी[1] एवं रीतू मावर[2] [1] कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, अनुसंधान निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान) [2] केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान)	98-102
30.	किसान करें मोती की खेती– कम निवेश में होगा बंपर मुनाफा	स्तुति मौर्या एवं दिनेश साह बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)	103-104
31.	बाजरा (मोटा अनाज) उत्पादन की उन्नत तकनीक एवं इसके लाभ	मुकेश कुमार मीणा, जी.आर. डोंगरे एवं इति राठी भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर	105-108
32.	जलवायु परिवर्तन : सूक्ष्मजीवों की भूमिका	अपेक्षा बाजपाई[1], स्मृति चौहान[2], हिमांशु महावर[3] [1] भाकृअनुप–भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान, भोपाल (म.प्र.) [2] बरकत उल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) [3] भाकृअनुप–खरपतवार अनुसन्धान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	109-111
33.	संरक्षित खेती : मृदा स्वास्थ में सुधार का एक विकल्प	अल्पना कुम्हरे[1], वी. के. चौधरी[1], मुनि प्रताप साहू[1], विकास सिंह[1], यागिनी टेकाम[2], नरेन्द्र कुमार[1], सोनाली सिंह[1] एवं आनंद सैयाम[2] [1] भा.कृ.अनु.प. – खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, महाराजपुर, जबलपुर, (म.प्र.) [2] जवाहर लाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)	112-117
34.	जैविक कीटनाशक: बाधाएं और चुनौतियाँ	आर.एस. सेंगर एवं वर्णित अग्रवाल सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ, (उ.प्र.)	118-124
35.	उन्नत उत्पादन तकनीक में पौध संरक्षण के उपकरण	नीरज त्रिपाठी व प्रमोद कुमार गुप्ता जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)	125-132

क्र.	शीर्षक	लेखक	पृष्ठ
	खण्ड–स		
36.	भारत में कुपोषण की स्थिति	अरूणिमा कुमारी, कुमारी स्मिता एवं रीचा कुमारी डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर।	133
37.	रतनजोत एक विषाक्त पौधा : जागरूकता आवश्यक	चंन्द्रशेखर खरे, जितेन्द्र कुमार खरे कृषि वैज्ञानिक (प्रक्षेत्र प्रबंधक), कृषि विज्ञान केन्द्र– जांजगीर–चांपा (छ.ग.)	134-135
38.	वृक्ष की अभिलाषा	धर्मेन्द्र कुमार खरे संयुक्त जन जागरूकता अभियान– पामगढ़ जिला–जांजगीर–चांपा (छ.ग.)	136
39.	पूसा, बिहार–कृषि शिक्षा की जन्मस्थली (कविता)	सुशील कुमार डॉ राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)	136
40.	खेती से क्यों भाग रहे है लोग? (कविता)	जी.आर. डोंगरे भाकृअनुप– खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	137
41.	घास की आत्मकथा	मुकुन्द कुमार भाकृअनुप– भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उ.प्र.)	138
42.	फसल में उग आएँ खरपतवार जो ज्यादा, कर देते ये फसल की उपज को आधा	ब्रह्मप्रकाश भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उ.प्र.)	139
43.	मै किसान हूँ	जी.आर. डोंगरे भाकृअनुप– खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)	140
44.	ग्लोबल वार्मिंग एक बढ़ती समस्या	राहुल ओझा, वर्षा गुप्ता, दीप सिंह सासोडे, एकता जोशी एवं निशा सिंह राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर	141-142
45.	वर्ष 2022-23 में भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की गतिविधियों एवं किये गये प्रयासो का संक्षिप्त विवरण		143-146

सरस्वती वंदना

वर दे, वीणावादिनी वर दे!
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत मंत्र नव
भारत में भर दे !
वीणावादिनी वर दे ।।

काट अंध-उर के बंधन स्तर
बह्य जननि, ज्योतिर्मय निर्झर;
कलुष- -वेद तम हर, प्रकाश भर,
जगमग जग कर दे!
वर दे, वीणावादिनी वर दे।।

नव गति, नव लय, ताल-छंद नव,
नवल कंठ, नव जलद्-मंद्र रव,
नव नभ के नव विहग वृंद को,
नव पर, नव स्वर दे!
वर दे, वीणावादिनी वर दे ।।

वर दे, वीणावादिनी वर दे!
प्रिय स्वतंत्र रव, अमृत मंत्र नव
भारत में भर दे।
वीणावादिनी वर दे।।

ॐसरस्वती मया दृष्ट्वा, वीणा पुस्तक धारणीम् !
हंस वाहिनी समायुक्ता मां विद्या दान करोतु में ॐ ।।

Om Saraswati Maya Drishtwa, Veena Pustak Dharnim,
Hans Vahini Samayuktaa Maa Vidya Daan Karotu Me...

भाकृअनुप

ICAR

खंड- अ

कदन्न फसल (श्री अन्न) में खरपतवार प्रबंधन : खाद्य एवं पोषण सुरक्षा का एक दीर्घकालिक विकल्प

पी.के. सिंह, वी.के चौधरी, संतोष कुमार, एस.के. पारे एवं इति राठी
भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारतीय कृषि का एक बड़ा भू–भाग मुख्यतः मानसूनी वर्षा पर निर्भर है। उसकी भौगोलिक दशायें भी विभिन्न प्रकार की है, जहाँ तापमान, वर्षा, मिट्टी के प्रकार, फसल इत्यादि में काफी भिन्नता पाई जाती है। भारत में मुख्यतः गेहूं, चावल, मक्का, गन्ना, सोयाबीन, चना, अरहर, मटर, मूंगफली, उड़द एवं मूंग के साथ–साथ कई प्रकार के मोटे अनाज (श्री अन्न/कदन्न अनाज) उगाये जाते हैं। सामान्यतः दानों के आकार के अनुसार मोटे अनाजों को मूलतः दो भागों में वर्गीकृत किया गया है। प्रथम वर्गीकरण में, मुख्य मोटे अनाज जिसमें बाजरा और ज्वार आते हैं तथा दूसरे वर्गीकरण में छोटे दाने वाले मोटे अनाज जैसे रागी, सांवा, चेना, कंगनी, कोदो और कुटकी सम्मिलित हैं। इन छोटे दाने वाले मोटे अनाजों को ही साधारणतया कदन्न अनाज/श्री अन्न कहा जाता है। मोटे अनाज फसलों के वैश्विक उत्पादन को तालिका 1 में दर्शाया गया है। मोटे अनाज के कुल उत्पादन की दृष्टि से भारत विश्व में प्रथम स्थान रखता है।

तालिका 1. विश्व के प्रमुख कदन्न अनाज उत्पादक देश

क्रमांक	देश	उत्पादन (मिलियन टन)
1.	भारत	8.81
2.	नाइजीरिया	4.89
3.	नाइजर	2.68
4.	माली	1.39
5.	चीन	1.22
6.	बुर्किना फासो	0.97
7.	युगांडा	0.84
8.	सेनेगल	0.81
9.	चाड	0.71
10.	सुडान	0.06
	विश्व	**26.71**

श्री अन्न/कदन्न अनाज एक महत्वपूर्ण अपरिश्कृत अनाज है जिसे सर्वाधिक पोषक तत्व वाला अनाज माना जाता है। कुछ कदन्न अनाज भारत की प्रमुख फसलों में से एक है, जिसका उपयोग भारतीय लोग बहुत लम्बे समय से करते आ रहे हैं। इसकी खेती अफ्रीका और भारतीय उप महाद्वीप में पुरातन काल से की जाती रही है। यह माना जाता है कि ये फसलें मूल रूप से अफ्रीकी महाद्वीप की फसलें हैं, जिनका बाद में भारतीय महाद्वीप में प्रवेश हुआ।

हमारे दैनिक जीवन में ज्यादातर लोग गेहूँ और चावल या इससे बने पदार्थों को भोजन के रूप में इस्तेमाल करते है। जबकि हमें सभी प्रकार के श्री अन्न/कदन्न अनाज जैसे रागी, सांवा, चेना, कंगनी, कोदो, तथा कुटकी के बने खाद्य पदार्थ को भी खाना चाहिये। भारत में रहने वाले ज्यादातर लोगों को इन मोटे अनाजों के बारे में या तो पता नहीं है या इनका इस्तेमाल किन्हीं न किन्हीं कारणो से भोजन के रूप में नहीं करते हैं।

श्री अन्न/कदन्न अनाज मौसम की विपरीत परिस्थितियों में उत्पादित किये जा सकते है। श्री अन्न फसलों का यह विशेष गुण है कि ये बारानी क्षेत्र में भी आसानी से उग जाती है और उच्च तापमान भी सह सकती है। यह सूखे, मिट्टी की कम उर्वरता तथा अधिक तापमान एवं क्षेत्र की विशेषताओं के अनुसार खुद को अनुकूल बना लेती है। यह कम बारिश वाले स्थान पर उगती है जहां पर 50–70 सेमी तक बारिश होती है। 15–35^{0} सेल्सियस का तापमान इसकी प्रगति के लिए सर्वश्रेष्ठ होता है। यह क्षारीय मिट्टी या अम्लीय मिट्टी में भी उगाई जा सकती है क्योंकि विपरीत परिस्थितियों के प्रति यह सहनशील होती है, यह ऐसे स्थानों पर भी उग सकती है, जहाँ पर अन्य फसलें जैसे धान या गेहूँ नहीं उगाई जा सकती।

श्री अन्न/कदन्न अनाज का उत्पादन

भारत में श्री अन्न फसलों का क्षेत्रफल वर्तमान में लगभग 27.12

लाख हैक्टेयर है। इन फसलों का उत्पादन और उत्पादकता क्रमशः 24.94 लाख टन और 920 किलो प्रति हैक्टेयर है (मिलेट विकास निदेशालय, भारत सरकार, 2010)। श्री अन्न फसलों में अकेले रागी का उत्पादन लगभग 19.65 लाख टन है जो कुल श्री अन्न फसल का 80 प्रतिशत भाग है। इसलिए रागी को कई बार श्री अन्न फसल के श्रेणी से अलग दर्शाया जाता है। भारत में उगाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के श्री अन्न/कदन्न अनाज का क्षेत्रफल, उत्पादन और उत्पादकता को तालिका 2 में दर्शाया गया है।

तालिका 2. भारत में विभिन्न प्रकार के श्री अन्न का क्षेत्रफल, उत्पादन और उत्पादकता

श्री अन्न/कदन्न अनाज	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)	उत्पादन (लाख टन)	उत्पादकता (किग्रा/हेक्टेयर)
रागी (फिंगर मिलेट)	16.42	19.65	1197
सांवा (बार्नयार्ड मिलेट)	2.09	1.81	866
चेना (प्रोसो मिलेट)	0.47	0.26	553
कंगनी (फॉक्सटेल मिलेट)	1.04	0.63	606
कोदो (कोदो मिलेट)	4.00	1.46	365
कुटकी (लिटिल मिलेट)	3.10	1.13	365
कुल	**27.12**	**24.94**	**920**

श्री अन्न/मोटे अनाज भले ही गेहूं और चावल के समान न हो लेकिन पोषण स्तर के मामले में उनसे ऊपर ही साबित होते है। विभिन्न प्रकार के मोटे अनाज (कदन्न अनाज) के प्रमुख उत्पादक राज्यों को तालिका 3 में दर्शाया गया है।

तालिका 3. विभिन्न प्रकार के कदन्न अनाज के प्रमुख उत्पादक राज्य

कदन्न फसल	राज्य	उत्पादन (लाख/टन)	फसल का चित्र
रागी (फिंगर मिलेट)	कर्नाटक	13.94	
	उत्तराखण्ड	1.93	
	तमिलनाडु	1.73	
	महाराष्ट्र	1.25	
	आंध्रप्रदेश	0.52	
	भारत	**19.65**	
सांवा (बार्नयार्ड मिलेट)	उत्तराखण्ड	0.91	
	अरूणांचल प्रदेश	0.16	
	नागालैंड	0.14	
	मध्यप्रदेश	0.12	
	उत्तरप्रदेश	0.07	
	तमिलनाडु	0.03	
	भारत	**1.80**	

कदन्न फसल	राज्य	उत्पादन (लाख/टन)	फसल का चित्र
चेना (प्रोसो मिलेट)	महाराष्ट्र	0.17	
	बिहार	0.05	
	ओड़िसा	0.01	
	राजस्थान	0.01	
	तमिलनाडु	0.004	
	भारत	**0.26**	
कंगनी (फॉक्सटेल मिलेट)	आंध्रप्रदेश	0.17	
	कर्नाटक	0.14	
	अरूणांचल प्रदेश	0.05	
	महाराष्ट्र	0.05	
	राजस्थान	0.05	
	तमिलनाडु	0.01	
	भारत	**0.63**	
कोदो (कोदो मिलेट)	मध्यप्रदेश	0.50	
	छत्तीसगढ़	0.17	
	तमिलनाडु	0.12	
	महाराष्ट्र	0.08	
	उत्तरप्रदेश	0.07	
	भारत	**1.46**	
कुटकी (लिटिल मिलेट)	मध्यप्रदेश	0.37	
	तमिलनाडु	0.32	
	कर्नाटक	0.20	
	छत्तीसगढ़	0.12	
	झारखण्ड	0.11	
	भारत	**1.13**	

कदन्न फसलों में खरपतवार प्रबंधन

कदन्न (श्री अन्न) फसलों में खरपतवारों के द्वारा 15–83 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। अतः एक निश्चित अवधि (25–40 दिनों) में खरपतवार प्रबंधन आवश्यक है। खरपतवार प्रबंधन की विभिन्न विधियों से अनुशंसा की गई है, जिनमें सुरक्षात्मक विधि सस्य विधियां (स्टेल सीड बेड दो कतारों के बीच की दूरी कम करते हाथ द्वारा निराई, मल्च बिछाकर, अंतवर्ती फसल, इत्यादि) के साथ यांत्रिक विधि से भी कदन्न फसल में खरपतवार प्रबंधन कर सकते है। इसके साथ–साथ कुछ सावधानी के साथ रासायनिक विधि का भी प्रयोग कर सकते है जो निम्नलिखित है –

ज्वार एवं बाजरा– एट्राजिन 10 किग्रा./हे. अथवा पेन्डीमेथलीन (38.7%) 678 ग्रा./हे. अथवा मेटालाक्लोर 500 ग्रा./हे. की दर से प्रयोग बुआई के 3 दिन के भीतर करके तथा 2.4–D 500 ग्राम / हे. को बुआई के 25 दिन पर करके खरपतवारों का प्रबंधन किया जा सकता है।

रागी, संवा एवं कुटकी– एट्राजिन 1.0 किग्रा./हे. अथवा आक्सीफ्लोरफेन 100 ग्रा/हे. अथवा पायरोजोसल्फ्यूरॉन 20 ग्राम / हे. को रोपाई के 3 दिन के भीतर तथा मेटसल्फ्युरान 4 ग्राम / हे. को बुआई के 20 दिन पर उक्त कदन्न फसलों में प्रयोग कर खरपतवारों पर नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है।

कोदो– पायरोजोसल्फ्यूरॉन 20 ग्राम/हे अथवा पेन्डीमेथलीन (38.7%) 678 ग्राम/हे को रोपाई के 3 दिन के भीतर तथा मेटसल्फ्युरान 4 ग्राम/हे. का 20 दिन पर प्रयोग कर खरपतवारों को प्रबंधित किया जा सकता है। इसके साथ–साथ (30 दिन पर) एक निदाई, की भी सिफारिश की जाती है।

उपरोक्त सभी कदन (श्री अन्न) फसलों में उचित खरपतवार प्रबंधन हेतु 30 दिन पर एक निदाई करना काफी लाभदायक पाया गया है। अनुशंसा के अनुसार उचित खरपतवार प्रबंधन कर कदन्न (श्री अन्न) फसलों की उपज एवं गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकती है।

विभिन्न श्री अन्न/कदन्न फसलों की स्थिति एवं पोषण/ स्वास्थ्य सम्बंधी फायदे

रागी (फिंगर मिलेट): मूलतः रागी का प्राथमिक विकास अफ्रीका के इथोपिया क्षेत्र में हुआ। भारत में रागी की खेती लगभग 3000 साल पहले से की जा रही है। यह एक ऊष्णकटिबंधीय फसल है जिसे समुद्र तल से 3000 मी. तक की ऊँचाई वाले क्षेत्रों में लगाया जा सकता है। भारतीय उपमहाद्वीप और अफ्रीकी देशों में रागी व्यापक रूप से उगाई जाने वाली एक श्री अन्न/कदन्न फसल है। रागी को देश के विभिन्न भागों में अलग–अलग मौसम में उगाया जाता है। वर्षा आधारित फसल के रूप में जून में इसकी बुवाई की जाती है। तमिलनाडु, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश में जुलाई में; महाराष्ट्र, उड़ीसा, बिहार, उत्तराखण्ड, मध्य प्रदेश और गुजरात में जून के दौरान और अप्रैल में; उत्तराखण्ड और हिमाचल प्रदेश के अधिक ऊंचाई वाले पहाड़ी इलाकों में मई में इसकी बुवाई की जाती है। इसके अतिरिक्त कर्नाटक, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश हिस्सों में सितंबर–अक्टूबर में तथा बिहार में जनवरी–फरवरी में इसकी बुवाई की जाती है।

रागी के पोषण/स्वास्थ्य सम्बंधी फायदे:

- रागी में अमीनो एसिड फाइबर काफी मात्रा में होता है जो वजन को नहीं बढ़ने देता है। रागी खाने से कोलेस्ट्रॉल और शुगर लेवल भी कंट्रोल में रहता है। शरीर में खून की कमी दूर होती है।
- रागी इम्यून सिस्टम को मजबूत करता हैं।
- जिन लोगों में खून की कमी है, उनके लिए रागी का सेवन फायदेमंद है।
- हड्डियों को मजबूत बनाता है ।
- कब्ज की समस्या दूर करता है ।
- पाचन शक्ति को बढ़ाकर पेट की सेहत को दुरुस्त रखता है।
- जिन लोगों को त्वचा संबंधित समस्याएं हैं, जैसे मुंहासे, डार्क सर्किल, झाइयां, झुर्रियां उन्हें रागी खाना चाहिए। यह त्वचा को चमकदार बनाता है। इसमें लाइसिन नामक तत्व होता है, जो स्किन में कसावट लाता है।
- रागी एक ऐसा अनाज है, जिसमें फाइबर की मात्रा भरपूर होती है। फाइबर के सेवन से पेट भरे होने का अहसास देर तक रहता है। इससे जल्दी–जल्दी भूख नहीं लगती और शरीर में ब्लड शुगर लेवल स्थिर होता है। इसके सेवन से वजन बढ़ने की समस्या से बचे रहते हैं।
- इसमें प्रोटीन प्रचुर मात्रा में होता है। प्रोटीन मांसपेशियों का निर्माण करता है। इसके नियमित सेवन से भी शरीर में फैट बढ़ने की समस्या नहीं होती है।

सांवा (बार्नयार्ड मिलेट) : करीब 4000 वर्ष पहले इसकी खेती जापान में की जाती थी। इसकी खेती सामान्यतः शीतोष्ण क्षेत्रों में की जाती है। भारत में सांवा, अनाज और चारा दोनों के उद्देश्य से उगाया जाता है। सांवा विशेष रूप से पहाड़ियों और जनजातीय कृषि में काफी लोकप्रिय है। यह बिहार, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, और मध्यप्रदेश में उगाया जाता है।

सांवा के पोषण/स्वास्थ्य सम्बंधी फायदे: स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत ही लाभदायक है। इसमें फाइबर की उच्च मात्रा पाई जाती है जो वजन कम करने में मददगार होता है सांवा चावल के निम्नलिखित लाभ होते हैं :

- खून की कमी में सांवा चावल अति लाभदायक होता है इसमें आयरन की उच्च मात्रा पाई जाती है जो शरीर में खून की कमी नहीं होने देती है।
- सांवा गर्भवती महिलाओं के लिए अति लाभदायक होता है क्योंकि गर्भावस्था में आयरन और कैल्शियम की अत्यधिक जरूरत होती है। जिसकी कमी सांवा चावल खाने से पूरी होती है।
- सांवा विटामिन और मिनरल्स का बहुत अच्छा स्रोत है। इसमें विटामिन–ए एवं विटामिन–बी की उच्च मात्रा पाई जाती है, साथ ही पोटेशियम, कैल्शियम और आयरन भी अच्छी मात्रा में पाया जाता है।

- सांवा का ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होने तथा फाइबर की उच्च मात्रा होने के कारण, यह मधुमेह के रोगियों के लिए फायदेमंद है, साथ ही यह रक्त शर्करा को बहुत धीरे धीरे रिलीज करता है। जिससे रक्त शर्करा सामान्य रहती है, तथा लिपिड प्रोफाइल एकदम सामान्य रहता है।
- सांवा चावल किडनी रोगियों के लिए भी फायदेमंद है। किडनी रोगियों को आहार का विशेष ध्यान रखना पड़ता है जिसमें सोडियम, पोटेशियम एवं प्रोटीन सभी को नियंत्रित रखा जाता है। अगर किडनी रोगी सांवा चावल का भोजन में प्रयोग करते हैं तो उन्हें कमजोरी की शिकायत नहीं रहती है।
- सांवा चावल में फाइबर की कुछ मात्रा होती है जिसके कारण कब्ज की समस्या से निजात मिलती है आपका पेट बहुत आसानी से साफ होता है।
- नियमित रूप से सांवा चावल का प्रयोग करने से कोलेस्ट्रॉल लेबल नियंत्रित रहता है, क्योंकि सांवा में कार्बोहाइड्रेट्स और वसा की मात्रा बहुत कम रहती है। वसा और कार्बोहाइड्रेट कोलेस्ट्रॉल को बढ़ाने वाले दो मुख्य कारक होते हैं।
- सांवा ग्लूटेन फ्री अनाज है इसलिए यह ऐसे लोगों के लिए लाभदायक है, जिन्हें ग्लूटेन से एलर्जी रहती है। ऐसे रोगियों को अपने चिकित्सक से परामर्श लेकर सांवा चावल को अपने आहार में शामिल करना हितकर होगा।

चेना (प्रोसो मिलेट): चेना भी एक प्राचीन फसल है। यह मध्य और पूर्वी एशिया में पाई जाती थी। इसकी खेती यूरोप में नवपाषाण काल में की जाती थी। यह सामान्यतः शीतोष्ण क्षेत्रों में उगाई जाने वाली फसल है लेकिन इसकी खेती उप–उष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सर्दियों के दौरान की जाती है। भारत में चेना की खेती की प्राचीनता स्पष्ट नहीं है। विगत वर्षो से चेना का क्षेत्र काफी घट गया है। इसकी खेती दक्षिण में तमिलनाडु और उत्तर में हिमालय के कुछ क्षेत्रों में की जाती है। इस फसल की कई अनूठी विशेषतायें है जैसे जल्दी परिपक्वता (60–65 दिन) और उच्च सूखा सहिष्णुता ।

चेना के पोषण/स्वास्थ्य सम्बंधी फायदे:

- चेना लेसिथिन से भरा होता है, जो अप्रत्यक्ष रूप से तंत्रिका तंत्र को व्यवस्थित करता है जिससे यह सुचारू रूप से कार्य करता रहता है।
- चेना में फाइटिक एसिड होता है जो अच्छे कोलेस्ट्रॉल (एचडीएल) को बढ़ाने में मदद करता है और खराब कोलेस्ट्रॉल (एलडीएल) को कम करता है। साथ ही, चेना मैग्नीशियम से भरपूर होता है, जो स्वस्थ दिल बनाये रखने में फायदेमंद होता है।
- पेलाग्रा एक त्वचा विकार है जिसमें त्वचा रूखी, पपड़ीदार और खुरदरी हो जाती है। यह नियासिन (विटामिन बी–3) की कमी से होता है । चेना में पर्याप्त मात्रा में नियासिन होता है जो पेलाग्रा को रोकने में मदद करता है।
- सीलिएक रोग एक ऐसी स्थिति है जिसमें व्यक्ति अत्यधिक प्रतिरोधी होता है और ग्लूटेन (लस) से एलर्जी होती है। चेना, लस मुक्त होने के कारण लस संवेदनशील एंटरोपैथी या सीलिएक रोग वाले लोगों के लिए एक बढ़िया विकल्प है।
- चेना एंटी–ऑक्सीडेंट से भरपूर होता है जो शरीर से फ्री रेडिकल्स को बाहर निकालने में मदद करता है। फ्री रेडिकल्स त्वचा पर उम्र बढ़ने, सुस्ती और झुर्रियों के लिए जिम्मेदार होते हैं। अपने दैनिक आहार में चेना की पर्याप्त मात्रा लेने से शरीर स्वस्थ एवं फुर्तीला बना रहता है।
- चेना का दैनिक सेवन टाइप 2 मधुमेह के जोखिम को कम करने में मदद करता है। चेना में उच्च मात्रा में मैग्नीशियम होता है जो रक्त शर्करा के स्तर की जांच करने में मदद करता है और स्वस्थ इंसुलिन के स्तर को नियंत्रित करता है।
- उपर्युक्त स्वास्थ्य लाभों के अलावा, चेना हड्डियों की मजबूती, हृदय और यकृत के स्वास्थ्य, वजन घटाने के लिए एक स्वस्थ विकल्प के रूप में कार्य करता है और पित्त पथरी और कैंसर से भी बचाता है।

कंगनी (फॉक्सटेल मिलेट) : कंगनी भी एक प्राचीन फसल है जिसकी खेती पूर्वी एशिया में की जाती है। यह मुख्य रूप से उप–ऊष्णकटिबंधीय और शीतोष्ण क्षेत्रों की फसल है। कंगनी, पुआल (straw) और अनाज के लिए खेती की सबसे पुरानी फसलों में से एक है। इस फसल को सूखे के प्रति सहनशक्ति के लिए जाना जाता है। यह कभी भारत में अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में वर्षा आधारित भूमि की एक अनिवार्य फसल थी।

कंगनी के पोषण/स्वास्थ्य सम्बंधी फायदे:

- कंगनी बच्चों और गर्भवती महिलाओं के लिए एक अच्छा भोजन है क्योंकि यह आसानी से पच जाता है। इसलिए इसे भोजन के रूप में लेने से पेट दर्द (stomachache) से राहत मिलती है।

- इस मिलेट में फाइबर की मात्रा अधिक होती है। इसलिए इसे खाने से कब्ज के रोग से छुटकारा मिलता हैं।
- कंगनी को खाने से मूत्रविसर्जन के समय होने वाली जलन (burning sensation while urinating) से छुटकारा मिलता है।
- कंगनी अतिसार (diarrhea) के रोगियों के लिए फायदेंमंद होता है।
- कंगनी में प्रोटीन और आयरन की मात्रा अधिक होती है। इसलिए इसे खाने से रक्त हीनता (anemia) का रोग दूर होता है।
- कंगनी जोड़ों के दर्द (arthritis) को दूर करने में फायदेमंद है।
- यह मिलेट मोटे आनाज की श्रेणी में आता है। इनमें फाइवर की मात्रा अधिक होती है। अतः इनको खाने से मोटापे (obesity) से छुटकारा मिलता है।
- कंगनी का पेस्ट बनाकर यदि जले से बने हुए घाव पर लगाया जाए तो जलन में राहत मिलती हैं।
- कंगनी नियासिन (Vitamin B3) का प्रकृतिक स्त्रोत हैं। विटामिन बी–3 (नियासिन) हमारे शरीर के लिए आवश्यक पोषक तत्व हैं। यदि इस तत्व की हमारे शरीर में कमी हो जाए तो हमें कई रोग हो सकते है। कंगनी को भोजन के रूप में लेने से कई साइडइफेक्टस से हमारा बचाव हो सकता है।
- कंगनी में एंटीऑक्सीडेंट तत्व होते हैं। जो फ्री रेडिकल्स के प्रभाव को कम करते हैं। जिससे त्वचा स्वस्थ बनी रहती है।
- कंगनी में कैरोटीन प्रोटीन होती है। जिससे बालों संबंधित समस्याओं से छुटकारा मिलता हैं।
- कंगनी में फाइबर की मात्रा अधिक होने से डायबिटीज रोग से बचाव संभव है।

कोदो (कोदो मिलेट)ः भारत में कोदो को अन्य अनाजों की तरह ही उगाया जाता है। इस फसल की खेती लगभग 3000 वर्ष पूर्व से की जा रही है। स्वस्थ अनाज, मानव स्वास्थ्य के लिए लाभवर्धक होता है। इसकी खेती ज्यादातर खराब पर्यावरण के अधीन जनजातीय क्षेत्रों तक ही सीमित है। कवक (fungus) संक्रमण की वजह से कोदो बारिश के बाद कभी–कभी जहरीला भी हो जाता है।

कोदो के पोषण/स्वास्थ्य सम्बंधी फायदेः

- कोदो मिलेट में फाइबर की अच्छी मात्रा होती है। इस कारण यह भूख को नियंत्रित करता है, इसका ग्लाइसेमिक लोड भी कम है जिससे शरीर में ग्लूकोज एकत्रित नहीं होता। इसे खाने के बाद पेट भरा हुआ रहता है। इस तरह हम अतिरिक्त कैलोरी लेने से बच जाते हैं, फलस्वरूप वजन कम होने लगता है।
- कोदो मिलेट ब्लड प्यूरिफायर का काम करता है। इसके सेवन से रक्त में मौजूद विषाक्त पदार्थ बाहर निकलते हैं यह कफ और पित्त दोष को भी शांत करता है। यह प्रकृति में क्षारीय होता है इसलिए इसके सेवन से रक्त क्षारीय बनता है। ब्लड का pH value मेंटेन होने से त्वचा सम्बन्धी सभी समस्याएं ठीक होती हैं।
- अन्य मिलेट की तरह कोदो मिलेट भी डायबिटीज को रिवर्स करने में मदद करता है। इसमें एंटीडायबिटिक कंपाउंड उपस्थित होते हैं। इसके सेवन से सीरम में इन्सुलिन का लेवल बढ़ता है जिससे फास्टिंग ग्लूकोज लेवल कम हो जाता है। कोदो में मौजूद फाइबर के कारण ब्लड में ग्लूकोज धीरे धीरे रिलीज होता है। इसका ग्लाइसेमिक इंडेक्स 42 और ग्लाइसेमिक लोड 27 है जो गेहूं और चावल से बहुत कम है। यदि मधुमेह के रोगी दिन में एक बार भी गेहूं एवं चावल के जगह कोदो का सेवन करते हैं तो उन्हें भरपूर पोषण प्राप्त होता है और ब्लड में ग्लूकोज का स्तर भी कम हो जाता है। डायबिटिक के मरीज को कोदो मिलेट के साथ अन्य पॉजिटिव मिलेट भी आहार में शामिल करना चाहिए।
- कोदो मिलेट में एंटीऑक्सीडेन्ट्स होते हैं। इसके इस गुण को बनाये रखने के लिए मिट्टी के बर्तन में इसे पकाना चाहिए। फ्री रेडिकल्स की संख्या को कम करने में कोदो बहुत प्रभावी है। फ्री रेडिकल्स की संख्या कम होगी तो कैंसर कोशिकाओं की वृद्धि भी नहीं होगी। फर्मेन्टेड कोदो दलिया कैंसर के रोगी के लिए सुपर फूड होता है।
- कोदो फाइबर का अच्छा स्त्रोत है। आंत को स्वस्थ बनाये रखने में फाइबर का महत्वपूर्ण योगदान होता है। यह आंत में भोजन को आगे बढ़ाने में मदद करता है। जिससे भोजन पाचन के बाद आसानी से अवशोषण के लिए आगे बढ़ जाता है। इस तरह गैस और कब्ज की समस्या नहीं रहती है। कोदो की फर्मेन्टेड दलिया विटामिन बी–12 का बढ़िया

स्त्रोत होता है। अम्लि/फर्मेंटेड आंत में अच्छे बैक्टीरिया को विकसित कर आंत को स्वस्थ बनाता है। यह बहुत ही सुपाच्य होता है। इसे गर्भवती महिला और एक वर्ष से कम उम्र के बच्चे को भी खिलाया जा सकता है।

- कोदो मिलेट को लिवर और किडनी सम्बन्धी समस्या में खिलाया जाये तो बहुत आराम मिलता है। कोदो ब्लड प्यूरीफायर की तरह कार्य करता है और यह क्षारीय भी होता है, इस कारण यह लिवर और किडनी के लिए अच्छा भोजन है। इसमें मौजूद फाइटोकेमिकल्स एंटीऑक्सीडेंट्स का काम करते हैं और शरीर की इम्युनिटी को भी बढ़ाते हैं।
- कोदो मिलेट में मौजूद फाइटोकेमिकल्स एंटी इन्फ्लैमटरी गुण को दर्शाता है। यह इंफ्लामेशन को कम करता है और घाव को भरने में भी मदद करता है। घाव पर कोदो का पेस्ट लगाने से घाव जल्दी भरता है।
- हृदय स्वास्थ्य के लिए यह बहुत बढ़िया आहार है। इसके सेवन से ट्राइग्लिसराइड और कोलेस्ट्रॉल के स्तर में कमी आती है। यह ब्लड प्रेशर को भी सामान्य रखने में मदद करता है।
- कोदो में मौजूद कंपाउंड्स एंटी माइक्रोबियल एक्टिविटी को दिखाते हैं। इनके सेवन से कई प्रकार के बैक्टीरियल ग्रोथ खत्म होते हैं।
- कोदो मिलेट ग्लूटेन फ्री अनाज है। जिन लोगो को सिलिअक डिजीज है या ग्लूटेन एलर्जी है उन्हें इस अनाज का सेवन करना चाहिए। इससे उनके शरीर में पोषक तत्वों की कमी नहीं होगी और वह स्वस्थ रहेंगे।
- यह नर्वस सिस्टम को मजबूती प्रदान करता है। इसके सेवन से अच्छी नींद आती है। अनिद्रा की समस्या में कोदो मिलेट का सेवन से लाभ मिलता है।

कुटकी (लिटिल मिलेट): कुटकी भारत में एक सीमित दायरे में ही उगायी जाती है। समुद्र तल से 2100 मी. की ऊंचाई तक इसकी खेती की जा सकती है। यह उत्तर भारत और दक्षिण–पूर्वी एशिया में जंगली फसलों के रूप में भी पाया जाता है। प्रतिकूल मौसम में चारा तथा अनाज के लिए यह एक उपयोगी फसल है। भारत में कुटकी काफी कम क्षेत्रफल में उगायी जाती है। यह फसल आदिवासी कृषि के साथ जुड़ी हुई है। इस फसल को एक अंतरवर्ती फसल के रूप में भी उगाया जाता है।

कुटकी के पोषण/स्वास्थ्य सम्बंधी फायदे:

- अन्य मिलेट की तरह लिटिल मिलेट भी डायबिटीज को रिवर्स करने में मदद करता है। इसमें मौजूद फाइबर ब्लड में शुगर को धीरे धीरे रिलीज करने देता है। इसका ग्लाइसेमिक इंडेक्स 50 के करीब है और ग्लाइस्मिक लोड 27 है जो गेहूं और चावल की तुलना में बहुत कम है। यदि मधुमेह के रोगी इस अनाज का सेवन करते हैं तो उन्हें भरपूर पोषण प्राप्त होता है। जो उन्हें अपने पूरे दिन के शुगर को मेन्टेन करने में मदद करता है। यदि कुटकी और अन्य मिलेट को डाइट में शामिल किया जाये तो मधुमेह की सम्भावना कम हो जाती है।
- कुटकी एंटीऑक्सिडेंट्स से भरपूर होते हैं। इसलिए इसे कैंसर के रोगी के लिए अच्छा भोजन माना जाता है। इसके एंटीऑक्सिडेंट्स के गुण को बनाये रखने के लिए इसे 6–8 घंटे भिंगोकर, मिट्टी के बर्तन में पकाना चाहिए। कुटकी विटामिन बी–12 का अच्छा स्त्रोत है, इसे कैंसर के रोगी को खिलाया जाता है। इसके साथ 4 अन्य पॉजिटिव मिलेट भी एक क्रम में खिलाये जाते हैं। फ्री रेडिकल्स के दुष्प्रभाव से बचने के लिए इसका सेवन अवश्य करें।
- कुटकी फाइबर का बढ़िया स्त्रोत है। आंत को स्वस्थ बनाये रखने में फाइबर का महत्वपूर्ण योगदान होता है। यह भोजन को आंत में एकत्रित नहीं होने देता, पाचन के बाद भोजन आसानी से आगे अवशोषण के लिए बढ़ जाता है। जिससे न तो गैस एवं कब्ज की शिकायत होती है। इसे पकाने से पहले 6–8 घंटे तक पानी में भिगो कर रखना जरूरी होता है। जिनको पाचन सम्बन्धी समस्या रहती है वे इसे ज्यादा पानी के साथ पकाये। यह इतना सुपाच्य होता है कि इसे शिशु और गर्भवती महिलाओं को भी खिलाया जा सकता है। इसके अम्लि/फर्मेटेंड के सेवन से आंत में अच्छे बैक्टीरिया का विकास होता है जो उचित पाचन और अवशोषण में मददगार साबित होते हैं।
- कुटकी में कार्बोहाइड्रेट और फैट की मात्रा कम होती है जो हृदय के लिए बढ़िया है। इसमें मौजूद पोटैशियम और मैग्निशियम ब्लड प्रेशर और कोलेस्ट्रॉल को मेन्टेन करके रखते हैं। इसके सेवन से गुड कोलेस्ट्रॉल (HDL) में वृद्धि होती है तथा बैड कोलेस्ट्रॉल (LDL) कम होता है। कार्बोहाइड्रेट कम होने, फाइबर ज्यादा होने तथा ग्लाइसेमिक लोड कम होने के कारण यह ट्राइग्लिसराइड

के लेवल को भी कम करता है। इस तरह इसका सेवन हृदय स्वास्थ्य को बनाये रखता है।

- कुटकी माइक्रो नुट्रिएंट्स और मैक्रोन्युट्रिएंट्स समृद्ध है। इसमें एसेंशियल एमिनो एसिड्स की भी मात्रा अच्छी है। इसके सेवन से शरीर को हर प्रकार का पोषण प्राप्त होता है, जिससे शरीर के वजन में उचित वृद्धि, मजबूत माँस पेशी का विकास, हड्डियों का विकास, उचित मानसिक वृद्धि और उचित मेटाबोलिज्म को प्राप्त किया जाना संभव होता है।
- पुरुष और महिलाओं दोनों के रिप्रोडक्टिव सिस्टम को स्वस्थ बनाने का कार्य करता है। हार्मोन के बिगड़ने से कई प्रकार की समस्या उत्पन्न होती है। यह इससे सम्बंधित सभी समस्याओं को दूर करता है। महिलाओं में मासिक धर्म से सम्बंधित समस्याएं गर्भाशय सम्बन्धी समस्याएं, बाँझपन, ल्यूकोरिया जैसी सभी समस्याएं इसके सेवन से दूर होती हैं। पुरुषों में नपुंसकता, स्पर्म की कमी, शीघ्र पतन, स्तम्भन दोष जैसी सभी समस्याएं इसके सेवन से दूर होती हैं। इसके लिए लिटिल मिलेट के साथ अन्य पॉजिटिव मिलेट भी एक क्रम में खाया जाता है।

सामाजिक–आर्थिक संदर्भ

श्री अन्न/कदन्न फसलें एक सूखा प्रतिरोधी फसलें है। इन फसलों को शुष्क और अर्द्ध शुष्क जलवायु जैसी कठोर परिस्थितियों में उगाया जा सकता है। इन फसलों में पानी की आवश्यकता भी कम पड़ती है और निर्बल भूमि में इन्हें उगाया जा सकता है। इसी वजह से इन फसलों को चमत्कारी अनाज या भविष्य की फसल भी कहा जाता है। श्री अन्न/ कदन्न अनाज अत्यधिक पौष्टिक तत्वों से भरा अन्न है। यह लाखों लोगों को खासकर छोटे और सीमांत किसानों के लिए खाद्य और आजीविका सुरक्षा प्रदान करता है। यह फसल वर्षा आधारित क्षेत्र निवासियों विशेष रूप से दूरस्थ आदिवासी क्षेत्र के लिए वरदान है। श्री अन्न फसलों की खेती आमतौर पर मानव के लिए खाद्यान्न और जानवरों के लिए चारा (दोहरे उद्देश्य) फसलों के रूप में लिया जाता है। यह कम वर्षा आधारित क्षेत्र में प्रधान फसल के रूप में भी लिया जाता है।

बारानी खेती का एक समृद्ध संसाधन

भारत में श्री अन्न/कदन्न फसलें बारानी क्षेत्रों में उगाई जाती हैं। वर्षा आधारित कृषि को भारतीय कृषि विकास का प्रमुख आधार माना जाता है क्योंकि देश की गरीब–घरेलू ग्रामीण आबादी इसी वर्षा आधारित क्षेत्र में रहती है। अर्थशास्त्र की खोज भी यही बताती है कि अन्य किसी भी क्षेत्र की तुलना में कृषि वृद्धि दर, गरीबी को कम करने की क्षमता रखती है। कृषि स्थानीय खपत और उत्पादन श्रृंखला को प्रोत्साहित कर सकती है जो स्थानीय अर्थव्यवस्था को मजबूत करने का काम करती है।

वर्षा आधारित क्षेत्र विविधताओं से भरे होते हैं जो जलवायु की व्यापक पहुँच पारिस्थितिक कृषि तथा विभिन्न प्रकार की फसल पद्धति के साथ सामाजिक, सांस्कृतिक क्षेत्र, किसानों की वरीयता, सामाजिक व आर्थिक संकेतक, फसल की क्षमता और स्थान विशिष्ट दृष्टिकोण को अपने दायरे में लेते है।

खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के साधन के रूप में श्री अन्न/ कदन्न फसल

खाद्य सुरक्षा राष्ट्र की मुख्य नीति है। समसामयिक परिभाषा के अनुसार खाद्य सुरक्षा को तब हासिल किया जाता है जब सभी लोगों को समय पर उनकी शारीरिक और आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के साथ–साथ उनके सुरक्षित और पौष्टिक खाद्य की आवश्यकताओं एवं उनके स्वस्थ जीवन के लिए आहार की जरूरतों को पूरा किया जा सके। खाद्य सुरक्षा को समझते हुए इसकी उपलब्धता के साथ–साथ पौष्टिक तत्वों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए। गेहूँ और चावल भारत के प्रमुख अनाज है, किन्तु इनका स्थिर उत्पादन और उत्पादकता भविष्य में अनाज की उपलब्धता को खतरे में डाल रहा है।

श्री अन्न/कदन्न खाद्य पद्धति, अनाज की उपलब्धता में योगदान, मात्रा और गुणवत्ता दोनों प्रकार से उपलब्ध करवाती है। इसकी बेहतर पोषण विशेषताओं को अन्य अनाजों की तुलना में लम्बे समय से जाना जाता है। इनमें काफी मात्रा में प्रोटीन, फाइबर, विटामिन ई, विटामिन बी पाया जाता है तथा आयरन, मैग्नीशियम, कैल्शियम और पोटेशियम भी समुचित मात्रा में पाया जाता है। इनके बीज में फाइटो न्यूट्रियेंट पाया जाता है जिसमें फाइटिक अम्ल होता है, जो कोलेस्ट्रॉल को कम रखता है। फाइटेन की उपलब्धता कैंसर रोग होने के खतरे को भी कम करती है।

मोटे अनाजों/कदन्न अनाजों में प्रोटीन में अच्छी तरह से संतुलित अमीनो एसिड प्रोफाइल होता है और यह मेथिओनिन, सिस्टीन और लाइसिन का भी अच्छा स्रोत है। मोटे अनाज में कार्बोहाइड्रेट का उच्च अनुपात है जो गैर स्टार्च पॉलीसैक्राइड और आहार फाइबर के रूप में शामिल हैं। यह रक्त में कोलेस्ट्रॉल स्तर को कम रखता है और पाचन के दौरान रक्त

प्रवाह में ग्लूकोज की गति को धीमी रखता है जो कि कब्ज की रोकथाम में मदद करता है। श्री अन्न में महत्वपूर्ण विटामिन जैसे थाईमीइन, राइबोफ्लेविन, फोलासिन और नियासिन भी समुचित मात्रा में पाये जाते हैं। इसके नियमित उपभोग करने वालों में हृदय रोग, अल्सर और हाइपरग्लाइसीमिया कम देखा गया है।

यह अनाज पोषक तत्वों के मामले में पारंपरिक खाद्यान्न गेहूं और चावल से अधिक समृद्ध है। जिससे यह सूक्ष्म पोषण के सेवन में भी महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा और पोषण के मुद्दों को मोटे अनाज के उपयोग से समाधान किया जा सकेगा।

इस तरह के अनाज उनकी अधिक भण्डारण अवधि के कारण जाने जाते है। 10–12 प्रतिशत नमी के स्तर पर इन अनाजों को कई वर्षों तक भण्डारण कर रखा जा सकता है। एक रिपोर्ट के अनुसार रागी को उसकी गुणवत्ता के साथ दो दशकों तक रखा जा सकता है। इसके उत्पाद की भी भण्डारण अवधि अधिक होती है।

तालिका 4. प्रमुख मोटे अनाजों (श्री अन्न/कदन्न) के प्रचलित नाम तथा उनके पोषक तत्व

क्र. सं.	कदन्न अनाज		पोषक तत्व (प्रति 100 ग्राम)				
	हिन्दी नाम	अंग्रेजी नाम	प्रोटीन (ग्रा.)	फाइबर (ग्रा.)	खनिज (ग्रा.)	लौह (ग्रा.)	कैल्शियम (ग्रा.)
1	चेना	प्रोसो मिलेट	12.5	2.2	1.9	0.8	14
2	कंगनी	फॉक्सटेल मिलेट	12.3	8.0	3.3	2.8	31
3	सांवा	बार्नयार्ड मिलेट	11.2	10.1	4.4	15.2	11
4	बाजरा	पर्ल मिलेट	10.6	1.3	2.3	16.9	38
5	कोदो	कोदो मिलेट	8.3	9.0	2.6	0.5	27
6	कुटकी	लिटिल मिलेट	7.7	7.6	1.5	9.3	17
7	रागी	फिंगर मिलेट	7.3	3.6	2.7	3.9	344

निष्कर्ष

मोटे अनाज/कदन्न फसलें अनेक लाभकारी गुणों से परिपूर्ण है। निरंतर समावेशी विकास के लिए ये फसलें वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिए काफी उपयुक्त है। बाजरा विशेष रूप से कमजोर वर्ग के लिए खाद्यान्न और पशुओं के लिए चारा की आवश्यकताओं से सुरक्षा प्रदान करता है। राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य सुरक्षा प्रभावी तभी हो सकती है जब महत्त्वपूर्ण क्षेत्रीय फसलों को भी खाद्य और चारे की जरूरतों की पूर्ति हेतु उचित भूमिका निभाने की अनुमति दी जाये। हालांकि यह देखा जा रहा है कि विगत वर्षो से कदन्न अनाजों की मांग घटती जा रही है। एक अध्ययन से पता चला है कि 79 प्रतिशत व्यक्ति अपने भोजन में मुख्य अनाज सहित श्री अन्न/कदन्नों फसलों को शामिल करना चाहते हैं, फिर भी ये अनाज भारत में संकट की स्थिति में है। इन फसलों के लिए बनाई गई पूर्व की नीति एवं इनकी उपेक्षा इसका एक महत्वपूर्ण कारण है। इसलिए नीति संबंधी बाधाओं के समाधान के बिना कदन्न अनाजों के उत्पादन को बढ़ावा नहीं दिया जा सकता है। इन्हीं सब तथ्यो को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने श्री अन्न/कदन्न फसलों को बढ़ावा देने पर विशेष ध्यान दिया है और विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम शुरू किये है। भारत सरकार के आग्रह पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2023 को अंतर्राष्ट्रीय मिलेट वर्ष घोषित किया है, ताकि इसको विश्व स्तर पर बढ़ावा मिल सके।

आर्जीमोन मेक्सिकाना: औषधीय पहलू

योगिता घरडे
भा.कृ.अनु.प.—खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

सत्यानाशी या घमोई *(Argemone mexican)* दक्षिण पश्चिम संयुक्त राज्य अमेरिका और उत्तरी मेक्सिको मूल की वनस्पति है, लेकिन आज यह ऑस्ट्रेलिया, स्पेन, भारत और दक्षिण—पूर्वी एशिया के अन्य देशों के साथ—साथ कई अफ्रीकी देशों में भी पाया जाता है। भारत में भी यह सब स्थानों पर पैदा होता है। सत्यानाशी के किसी भी अंग को तोड़ने से उसमें से स्वर्ण सदृश, पीतवर्ण, पीले रंग का दूध निकलता है, इसलिए इसे स्वर्णक्षीरी भी कहते है। सत्यानाशी का फल चौकोर, कांटेदार, प्याले जैसा होता है, जिनमें राई की तरह छोटे—छोटे काले बीज भरे रहते हैं। इस वनस्पति के सारे अंगों पर कांटे होते है।

इसके बीज जहरीले होते हैं। कुछ कंपनियां सरसों के बीज के साथ इसकी मिलावट कर तेल बनाती है जिसका प्रयोग करने वालों की मृत्यु भी हो जाती है। इसके बीज मिली हुई सरसों के तेल के प्रयोग करने वालो को पेट की झिल्ली (पेरिटोनियम) में पानी भरने का एक रोग एपिडेमिक ड्रॉप्सी भी हो जाता है।

सत्यानाशी के बारे में कुछ लोगों का ऐसा भी सोचना हैं कि जिस पौधे का नाम ही सत्यानाशी है वह केवल नुकसान ही पहुंचाता होगा। परन्तु सच यह है कि सत्यानाशी एक बहुत ही गुणी पौधा है और सत्यानाशी का उपयोग औषधि के रूप में किया जाता है। कितना भी पुराना घाव, खुजली, कुष्ठ रोग आदि हो, सत्यानाशी का प्रयोग कर रोग से छुटकारा पा सकते हैं।

यह वनस्पति आम तौर पर बेकार जमीन में उगती है। इसमे काँटे होते है और इसे इसके नाम की ही तरह बेकार समझा जाता है। घर के आस—पास यदि यह दिख जाये तो लोग इसे उखाडना पसन्द करते है। इसका वैज्ञानिक नाम *आर्जीमोन मेक्सिकाना* यह इशारा करता है कि यह मेक्सिको का पौधा है। वास्तव में यह दक्षिण पश्चिम संयुक्त राज्य अमेरिका और उत्तरी मेक्सिको मूल का पौधा है परन्तु प्राचीन भारतीय चिकित्सा ग्रंथो मे इसके औषधीय गुणों का विस्तार से वर्णन मिलता है। इसका संस्कृत नाम 'स्वर्णक्षीरी' है। आयुर्वेदिक ग्रंथ 'भावप्रकाश निघण्टु' में इस वनस्पति को स्वर्णक्षीरी या कटुपर्णी जैसे सुंदर नामों से सम्बोधित किया गया है। यह कांटों से भरा हुआ, लगभग 2—3 फीट ऊंचा और वर्षाकाल तथा शीतकाल में पोखरों, तलैयों और खाइयों के किनारे लगा पाया जाने वाला पौधा होता है। किसी भी बेकार पडी जगह पर यह उग जाता है। इसके बीज कुछ—कुछ सरसों से मिलते जुलते होते हैं और संख्या में अनेक होते हैं। इसका फूल पीला और पांच—सात पंखुड़ी वाला होता है। इसके पत्तों व फूलों से पीले रंग का दूध निकलता है, इसके जड़, बीज, दूध और तेल को उपयोग में लिया जाता है। इसका प्रमुख उपयोग 'स्वर्णक्षीरी तेल' के रूप में होता है। यह तेल सत्यानाशी के पंचांग (सम्पूर्ण पौधे) से ही बनाया जाता है। इस तेल की यह विशेषता है कि यह किसी भी प्रकार के घाव को भरकर ठीक कर देता है।

सत्यानाशी के उपयोगी भाग

- पंचांग
- पत्ते
- फूल
- जड़
- तने की छाल
- दूध

अनेक भाषाओं में सत्यानाशी के नाम

सत्यानाशी का वानस्पतिक नाम *Argemone mexicana* L. है और यह पेपेवरेसी कुल का है। सत्यानाशी को अनेक नामों से जाना जाता है, जैसेः

- हिंदी– सत्यानाशी, उजर कांटा, सियाल कांटा
- अंग्रेजी– प्रिकली पॉपी, मैक्सिकन पॉपी, येलो थिसल
- संस्कृत– कटुपर्णी
- उरिया– कांतादृकुशम
- उर्दू– ब्रह्मदंडी
- कन्नड़– अरसिन–उन्मत्ता
- गुजराती– दारूडी
- तमिल– पोन्नुम्मटाई, कुडियोट्टि, कुरुक्कुम–चेडि
- तेलुगु – पिची कुसामा चेट्टु
- बंगाली– स्वर्णक्षीरी, शियाल कांटा, बड़ो सियाल कांटा
- पंजाबी– कण्डियारी, स्यालकांटा, भटमिल, सत्यनाशा, भेरबण्ड
- मराठी – कांटेधोत्रा, दारुरी
- मलयालम – पोन्नुम्मत्तुम्

सत्यानाशी के औषधीय गुण

आर्युर्वेद में सत्यानाशी को बहुत ही फायदेमंद औषधि माना गया है। इसके उपयोगी भागों का इस्तेमाल कई बीमारियों को ठीक करने के लिए होता है। जिसका वर्णन एवं उपयोग निम्नानुसार हैः

(I) रतौंधी में सत्यानाशी से लाभ

सत्यानाशी पंचांग (संपूर्ण पौधे) से दूध निकाल लें। 1 बूंद (पीले दूध) में तीन बूंद घी मिलाकर आंखों में काजल की तरह लगाने से मोतियाबिंद और रतौंधी में लाभ होता है।

(II) सफेद दाग में सत्यानाशी से फायदा

सत्यानाशी फूल को पीसकर अथवा सत्यानाशी दूध का लेप करने से सफेद दाग में लाभ होता है।

(III) आंखों के रोग में सत्यानाशी से फायदा

1 ग्राम सत्यानाशी दूध को 50 मिली गुलाब जल में मिला लें। इसे रोजाना दो बार दो–दो बूंद आंखों में डालें। इससे आंखों की सूजन, आंखों का लाल होना आदि नेत्र विकारों में फायदा होता है। 2–2 बूंद सत्यानाशी के पत्ते के रस को आंखों में डालने से सभी प्रकार के नेत्र रोग में लाभ होता है।

(IV) सांसों के रोग और खांसी में सत्यानाशी का उपयोग लाभदायक

500 मिग्रा से 1 ग्राम सत्यानाशी जड़ के चूर्ण को गर्म जल या गर्म दूध के साथ सुबह–शाम पीने से कफ बाहर निकल जाता है। इससे सांसों के रोग और खांसी में लाभ होता है। इसका पीला दूध 4–5 बूंद बतासे में डालकर खाने से लाभ होता है।

(V) दमे की बीमारी में सत्यानाशी का प्रयोग फायदेमंद

सत्यानाशी का उपयोग ब्रोन्कियल अस्थमा के इलाज में फायदा पहुंचाता है, क्योंकि इसमें एंटीएलर्जिक गुण पाया जाता है। इस गुण के कारण ही यह अस्थमा के लक्षणों को कम करने में मदद करता है।

इसका उपयोग करने के लिए सत्यानाशी पंचांग का रस निकालकर उसको आग पर उबालें। जब वह रबड़ी के समान गाढ़ा हो जाय तब 500 मिली रस, 60 ग्राम पुराना गुड़ और 20 ग्राम राल (रेजिन) मिलाकर, कूट लें। इसकी 250 मिग्रा की गोलियां बना लें। 1–1 गोली दिन में तीन बार गर्म पानी के साथ लेने से दमा पीड़ित के लिए बहुत लाभदायक होता है।

(VI) पेट के दर्द में सत्यानाशी के प्रयोग से लाभ

सत्यानाशी के 3–5 मिली पीले दूध को 10 ग्राम घी के साथ मिलाकर पीने से पेट का दर्द ठीक होता है।

(VII) जलोदर (Ascites) में सत्यानाशी के उपयोग से फायदा

5–10 मिली सत्यानाशी पंचांग रस को दिन में 3–4 बार पिलाने से पेशाब खुलकर आता है तथा जलोदर रोग में लाभ होता है।

(VIII) पीलिया रोग में सत्यानाशी से लाभ

10 मिली गिलोय के रस में सत्यानाशी तेल की 8–10 बूंद डाल लें। इसे सुबह और शाम पिलाने से पीलिया रोग में लाभ होता है।

(IX) मूत्र–विकार में सत्यानाशी से फायदा

पेशाब में जलन हो तो सत्यानाशी के 20 ग्राम पंचांग को 200

मिली पानी में भिगो लें। इसका काढ़ा बनाकर 10–20 मिली मात्रा पीड़ित को पिलाएं। इससे मूत्र विकारों में लाभ होता है।

(X) कुष्ठ रोग में सत्यानाशी के प्रयोग से लाभ

कुष्ठ रोग और रक्तपित्त (नाक–कान अंगों से खून बहने की समस्या) में सत्यानाशी के बीजों के तेल से शरीर पर मालिश करें। इसके साथ ही 5–10 मिली पत्ते के रस में 250 मिली दूध मिलाकर सुबह और शाम पिलाने से लाभ होता है।

(XI) त्वचा रोग में सत्यानाशी का प्रयोग

सत्यानाशी पंचांग के रस में थोड़ा नमक डालकर लम्बे समय तक सेवन करने से त्वचा के विकारों में लाभ होता है। रोजाना 5 से 10 मिली रस का सेवन लाभकारी होता है।

(XII) दाद में सत्यानाशी का उपयोग

सत्यानाशी में कवकरोधी (एंटीफंगल) गुण पाया जाता है, इसलिए दाद की समस्या में इसका उपयोग फायदेमंद है। कवकरोधी (एंटीफंगल) गुण होने के कारण ये दाद के लक्षणों को कम करके दाद को और फैलने से रोकता है। इसके लिए सत्यानाशी की पत्तियों का रस या तेल को दाद वाली जगह पर लगाएं।

(XIII) घाव सुखाने के लिए सत्यानाशी का प्रयोग

सत्यानाशी के दूध को घाव पर लगाने से पुराने और बिगड़े हुए घाव ठीक होते हैं। साथ ही सत्यानाशी रस को घाव पर लगाने से घाव जल्दी ठीक होता है। सत्यानाशी दूध को लगाने से कुष्ठरोग तथा फोड़ा ठीक होते है। सत्यानाशी पंचांग के पेस्ट को पीसकर पुराने घाव एवं खुजली में लगाने से लाभ होता है। छाले, फोड़े, फुंसी, खुजली, जलन, सिफलिस आदि रोग पर सत्यानाशी पंचांग का रस या पीला दूध लगाने से लाभ होता है।

सत्यानाशी से नुकसान

सत्यानाशी का उपयोग करते समय निम्न सावधानियां रखनी चाहिएः–

- सत्यानाशी के बीजों का केवल शरीर के बाहरी अंगों पर ही प्रयोग करना चाहिए, क्योंकि यह अत्यधिक विषैले होते हैं।
- इसके बीज मिले सरसों के तेल का प्रयोग से मृत्यु तक हो सकती है।

इसलिए सत्यानाशी का प्रयोग करते समय विशेष सावधानी बरतना चाहिए ।

सत्यानाशी को हम सभी एक खरपतवार के रूप में जानते हैं परन्तु आयुर्वेद में इसके कई औषधीय उपयोग होने के कारण इसके फायदे भी है। अतः इसका विवेक पूर्वक उपयोग कर अनेक बीमारियों को ठीक करने हेतु इसका लाभ उठाया जा सकता है।

> राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।

महात्मा गांधी

फ्लेमवीडिंग: जैविक खेती में खरपतवार नियंत्रण के लिए एक विकल्प

अभिषेक उपाध्याय[1], के पी सिंह[1], के बी झाला[2] एवं नरेंद्र सिंह चंदेल[1]
[1] भा.कृ. अनु. प.–केंद्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल, (म.प्र.)
[2] जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय, जूनागढ़, (गुजरात)

बदलते सामाजिक–आर्थिक संदर्भ में, भारतीय कृषि, कृषि अभियांत्रिकी के ज्ञान को लागू करने की आधुनिक प्रक्रिया के साथ जीवित रहेगी। मशीनरी के उपयोग से कृषि उत्पादकता बढ़ती है, मुनाफा बढ़ता है और कृषक समुदाय के जीवन की गुणवत्ता में सुधार होता है। जलवायु परिवर्तन के साथ कीट और व्याधियां जैसे कई कृषि मुद्दे हैं, लेकिन खरपतवार, भारत के कृषि क्षेत्रों में घटती पैदावार के मुख्य कारणों में से एक है। फसल और स्थान के आधार पर अलग–अलग खरपतवारों के कारण उपज में कमी का अनुमान 16–42% है, जिसमें कृषि लागत का 1/3 भाग शामिल है। खरपतवार सामान्य एवं जैविक फसल उत्पादन प्रणालियों दोनों में एक बड़ी समस्या है। इस समस्या का समाधान करने के लिए, दुनिया भर के खरपतवार वैज्ञानिक एकीकृत खरपतवार प्रबंधन उपायों के आधार पर वैकल्पिक खरपतवार नियंत्रण विधियों का अध्ययन कर रहे हैं ताकि शाकनाशियों पर निर्भरता को कम करने और जैविक कृषि करने वाले कृषकों को एक प्रभावी खरपतवार नियंत्रण प्रणाली प्रदान करने में मदद मिल सके। ज्वाला प्रौद्योगिकी में हालिया प्रगति के कारण, वैज्ञानिकों ने हाल ही में ज्वलनशील आग में अपनी रुचि को नवीनीकृत किया है। खरपतवार नियंत्रण का उद्देश्य केवल मौजूदा खरपतवारों को किसी प्रकार के भौतिक या रासायनिक तरीकों से मिटाना है, जबकि खरपतवार नियंत्रण एक व्यवस्थित दृष्टिकोण है जहां खरपतवारों के आक्रामक तरीकों को कम करने और पौधों को अधिक शक्ति देने, खरपतवार प्रजातियों पर प्रतिस्पर्धात्मक लाभ देने के लिए वैश्विक उपयोग की योजना पहले से बनाई जाती है।

ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण हेतु अच्छे उपकरण उपलब्ध हैं जिनका उपयोग तब किया जाता है जब पर्यावरण या स्वास्थ्य के मुद्दे महत्वपूर्ण होते हैं। अनियोजित वनस्पति की गैर–विशिष्ट क्षति महत्वपूर्ण होती है और अपरंपरागत रोपण प्रणालियों के एकीकरण में अतिरिक्त रुचि अर्जित करती है। ऊर्जा के विभिन्न स्त्रोत जैसे मानव ऊर्जा, पशु ऊर्जा और यांत्रिक ऊर्जा का उपयोग बागवानी में किया जाता है। आमतौर पर हाथ से, जानवरों अथवा ट्रैक्टरों द्वारा खीचें जाने वाले उपकरणों से खरपतवारों की निराई जाती है। ये विधियां उन क्षेत्रों हेतु महत्वपूर्ण हैं, जहां अप्रत्याशित भूस्खलन का उच्च जोखिम रहा है तथा अपरंपरागत रोपण प्रणालियों के एकीकरण में अतिरिक्त रुचि अर्जित करते हैं। रासायनिक अवशेषों की अनुपस्थिति, बाढ़ का कोई खतरा और खरपतवार प्रतिरोधी खरपतवार जैसे जड़ी–बूटियों पर जलने के फायदे हैं। जैविक खेती में शाकनाशी से खरपतवार नियंत्रण संभव नहीं है। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण की तुलना में, फ्लेमवीडर (ज्वाला द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने वाला यंत्र) कई लाभ प्रदान करता है क्योंकि यह भूजल, मिट्टी और हवा को दूषित नहीं करता है और मानव/पशु में कीटनाशक अवशेषों के संभावित जोखिम को समाप्त करता है। इसलिए, कुछ का मानना है कि प्रत्यक्ष खरपतवार को नियंत्रित करने के लिए फ्लेमवीडर या इंफ्रारेडहीट के उपयोग से अधिक ऊर्जा की बचत होगी और यह रासायनिक खरपतवार नियंत्रण से बेहतर है।

यांत्रिक निराई के लिए एक मजबूत फ्रेम की आवश्यकता होती है, जो इनपुट शक्ति को बढ़ाता है जबकि ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण के लिए उच्च इनपुट शक्ति की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण में मिट्टी के संरचना में हस्तक्षेप नहीं करती है। यंत्रीकृत रोपण प्रक्रिया नए खरपतवार के बीजों को भी सतह पर ला सकती है, जिन्हें बाद में मौसम में कई बार लगाने की आवश्यकता हो सकती है। यह विधि रोपण के बाद नए खरपतवारों को रोक सकती है और मिट्टी के कटाव के जोखिम को कम कर सकती है। ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण मानव की मेहनत को कम करने और खरपतवारों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने में मदद करती है। यह अन्य खरपतवारों को भी फैलने से रोकती है, यह उस स्थिति में भी खरपतवारों का प्रभावी ढंग से नियंत्रण करती है जब खेतों की जुताई न की गयी हो। ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण पर्यावरण में मानव सुरक्षा के लिए खतरा पैदा नहीं करती है क्योंकि वे रासायनिक उपचार के रूप में और कीटनाशकों के विपरीत प्रभाव का खतरा पैदा नहीं करते हैं। ऊष्मीय खरपतवार प्रबंधन उन खरपतवारों को नियंत्रित करने का एक विकल्प प्रदान करती हैं जिनका रसायनों के प्रति प्रतिरोध उत्पन्न होने के कारण शाकनाशियों से नियंत्रण संभव नहीं है।

ज्वलंत प्रभावकारिता का निर्धारण:

एक साधारण 'फिंगरप्रिंट परीक्षण' आयोजित करके क्षेत्र स्तर पर ज्वाला उपचार की प्रभावशीलता आसानी से निर्धारित की जा सकती है। ज्वलन के तुरंत बाद, अंगूठे और तर्जनी के बीच एक पत्ता रखें, और इसे मजबूती से दबाएं। यदि पत्ती की सतह पर एक गहरा छाप (फिंगरप्रिंट) दिखाई दे रहा है, तो यह संभवतः कोशिका जल रिसाव के कारण आंतरिक दबाव में कमी का प्रमाण है। कोशिका भित्ति के टूटने और निर्जलीकरण के कारण पौधों की मृत्यु हो जाती है।

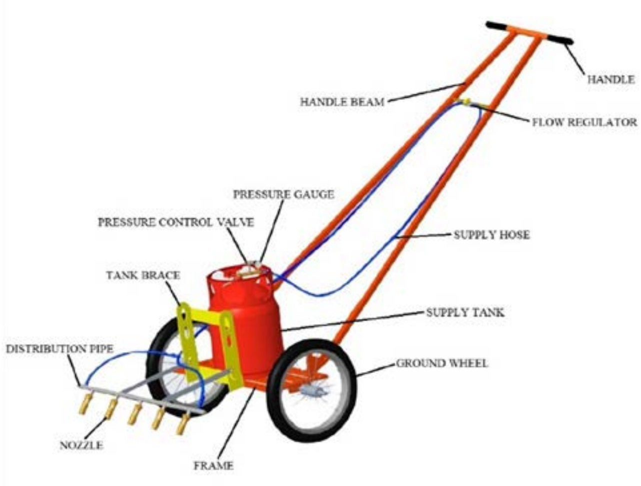

फ्लेमवीडरः फ्लेमवीडिंग (ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण) के लिए यंत्र

ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण के फायदे:

किसी भी शाकनाशी और सतत् जुताई की तुलना में ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण के कुछ प्रमुख फायदे हैं:

1. शाकनाशी के विपरीत, ऊष्मीय उपचार का सतह या भूमिगत जल की गुणवत्ता पर कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता।
2. ऊष्मीय उपचार मिट्टी की संरचना प्रभावित नहीं करती जबकि यांत्रिक निराई में मृदा संरचना प्रभावित होती है ।
3. यह पाया गया है कि बार–बार मिट्टी में कर्षण करने से महीन कणों के रूप में मृदा कार्बन का ह्रास होता है तथा वर्षा के कारण मृदा क्षरण को बढ़ावा मिलता है।
4. ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण, मानव अथवा जैविक विधि के तुलना में कम खर्चीली तथा अधिक प्रभावी विधि है।
5. ऊष्मीय उपचार द्वारा उत्पन्न उच्च स्तर की तात्कालिक गर्मी के लिए खरपतवारों में प्रतिरोध को विकसित करने की कोई संभावना नहीं होती।
6. कृषिगत विधियों की तुलना में ऊष्मीय खरपतवार प्रबंधन गीली या पथरीली मृदा में भी की जा सकती है तथा मृदा सतह में छेड़छाड़ न होने के कारण सतह के नीचे के खरपतवार बीज ऊपर नहीं आते हैं।

ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण के नुकसान:

पारंपरिक विधियों की तुलना में ऊष्मीय खरपतवार नियंत्रण के नुकसान निम्नलिखित हैः

1. खरपतवार नाशियों की तुलना में उपकरण की उच्च लागत।
2. फसल सुरक्षा हेतु चयनात्मकता की कमी।
3. छोटे कवरेज के कारण आवेदन की कम गति (जैसे अधिकांश फ्लेमर केवल 4–8 पंक्तियों का उपचार कर सकते हैं)।
4. चयनात्मक खरपतवार नियंत्रण में कमी।
5. रासायनिक स्प्रेयर की तुलना में कम कवरेज क्षमता।
6. उच्च ऊर्जा आवश्यकता के कारण जीवाश्म ईंधन का अप्रभावी उपयोग जलवायु परिवर्तन हेतु जिम्मेदार साबित हो सकती है।

फ्लेमिंग के पर्यावरणीय प्रभाव:

मिट्टी और पर्यावरण पर ऊष्मीय उपचार के संभावित प्रभावों में शामिल हो सकते हैं:

1. ट्रेक्टर और ज्वलनशील उपकरणों के आवागमन के परिणामस्वरूप मिट्टी संघनन की तुलना में आम तौर पर ज्वलन के रूप में रासायनिक नियंत्रण को शाकनाशी आवेदन की तुलना में अधिक बार आयोजित करने की आवश्यकता होती है।
2. ज्वाला उपचार के दौरान मिट्टी की सतह के तापमान में अस्थायी वृद्धि।
3. सामान्य कार्बन पदचिह्न जो समग्र ग्लोबलवार्मिंग में योगदान कर सकते हैं।

ऊष्मीय उपचार, रासायनिक नियंत्रण की तुलना में हवा की गुणवत्ता को काफी हद तक प्रभावित कर सकती है, क्योंकि ईंधन जलने के दहनोत्पाद (जैसे कार्बन मोनो ऑक्साइड CO, कार्बन डाइ ऑक्साइड CO_2, नाइट्रस और सल्फर ऑक्साइड) वायु प्रदूषक हैं। इस तरह के प्रभावों को ग्लोबलवार्मिंग के दृष्टिकोण से अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है, जो कि

शाकनाशी के उपयोग से जुड़े होते हैं जैसे कि वाष्पीकरण और स्प्रे बहाव। हालांकि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि 60 किलो प्रति हैक्टेयर फ्लेमिंग, उपचार क्षेत्र के 100% को कवर करता है। एक बैंडेड फ्लेमिंग उपचार जो फसल पंक्ति के पास गर्मी को केंद्रित करता है, आवश्यक ईंधन खुराक को 20 किलो प्रति हैक्टेयर तक कम कर सकता है। यह ऊर्जा उपयोग और CO_2 उत्सर्जन को लगभग 67% कम करता है; बैंडेडफ्लेमिंग उपचार द्वारा उपचारित क्षेत्र को बाद के खेती उपचार के साथ नियंत्रित नहीं किया जा सकता है। इस तरह के उपचार से 1.35 गीगाजूल प्रति हैक्टेयर की ऊर्जा के उपयोग से 90.8 किग्रा CO_2 प्रति हैक्टेयर (ईंधन दहन से 60.0 किग्रा CO_2 प्रति हैक्टेयर और डीजल की खपत से 30.8 किग्रा CO_2 प्रति हैक्टेयर) का उत्पादन होता है।

पारंपरिक और जैविक फसल उत्पादन प्रणालियों के लिए उपलब्ध तीन अलग–अलग वैकल्पिक खरपतवार नियंत्रण विधियों के बीच CO_2 उत्सर्जन और ऊर्जा उपयोग की तुलना

खरपतवार नियंत्रण विधि	CO_2 उत्सर्जन (किग्रा प्रति हेक्टेयर)	ऊर्जा (गीगाजूल प्रति हेक्टेयर)	समय (घंटे प्रति हेक्टेयर)
फ्लेमिंग			
फ्लेमिंग ईंधन	180.0	2.78	0.51
फ्लेमिंग–डीजल	8.9	0.12	
बैंडेडफ्लेमिंग	60.0	0.93	0.51
रासायनिक छिड़काव			
छिड़काव –ग्लाइफोसेट	95.9	0.48	0.13
छिड़काव – डीजल	2.3	0.03	
यांत्रिक निराई			
यांत्रिक निराई–डीजल	21.9	0.30	0.68
कुल			
प्रसारित फ्लेमिंग	188.9	2.90	0.51
बैंडेड फ्लेमिंग	90.8	1.35	1.19
रसायनिक छिड़काव	98.2	0.51	0.13
यांत्रिक निराई	21.9	0.30	0.68

फ्लेमवीडर द्वारा खरपतवार नियंत्रण

निष्कर्ष:

यदि दोपहर के दौरान, ईंधन की खुराक की परवाह किए बिना ऊष्मीय उपचार किया जाता है, तो अधिक प्रभावी होती है, लेकिन फसल की क्षति अधिक होगी। इस प्रकार, न्यूनतम फसल क्षति के साथ अधिकतम खरपतवार नियंत्रण प्राप्त करने के लिए दोपहर के आसपास ऊष्मीय उपचार की जा सकती है। फ्लेमवीडिंग, जैविक उत्पादकों द्वारा उपयोग की जाने वाली कई अन्य खरपतवार नियंत्रण विधियों की तुलना में बहुत अधिक सस्ती है, विशेष रूप से हाथ से निराई और जैविक शाकनाशियों के लिए। ऊष्मीय उपचार में तीन फसलों मक्का, ज्वार और सोयाबीन की जैविक फसल उत्पादन प्रणालियों में प्रभावी ढंग से उपयोग करने की क्षमता होती है, जब इसे सबसे सहिष्णु विकास चरण में ठीक से किया जाता है। मशालों के कोणों को समायोजित करने और ज्वाला के लपटों को फसल की कैनोपी के नीचे रखने से पूरे पौधे की गर्मी में कमी आएगी और इसलिए, फसल की क्षति कम होगी और उपज में कमी आएगी। इसके अलावा, कुछ आधुनिक सटीक कृषि तकनीकों जैसे पंक्ति का पता लगाना और खरपतवार का पता लगाने वाली प्रणालियाँ भी फसल क्षति के जोखिम और ईंधन की खपत को कम करने में मदद कर सकती हैं।

यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि गैर–रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए ऊष्मीय उपचार एकमात्र तरीका नहीं होना चाहिए; हालाँकि, यह एक एकीकृत खरपतवार प्रबंधन कार्यक्रम का हिस्सा हो सकता है। वृद्धि के मौसम के दौरान बाद में उभरने वाले खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए अन्य उपायों की अभी भी आवश्यकता है। संभवतः नए ज्वलनशील उपकरणों और विधियों को विकसित करने के लिए, या किसी भी महत्वपूर्ण फसल क्षति और उपज में कमी से बचने के लिए मशालों की विभिन्न स्थितियों की जांच करने के लिए और अधिक शोध की आवश्यकता है। इस तरह की जानकारी जैविक और पारंपरिक फसल उत्पादन प्रणालियों दोनों के लिए एकीकृत खरपतवार प्रबंधन कार्यक्रम के हिस्से के रूप में ज्वलंत विकल्पों का विस्तार करेगी।

रबी फसलों में खरपतवारों का समन्वित प्रबंधन

चंन्द्रशेखर खरे[1], जितेन्द्र कुमार खरे[2]
[1]कृषि विज्ञान केन्द्र– जांजगीर–चांपा (छ.ग.)
[2]कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंन्द्र–जांजगीर–चांपा (छ.ग.)

यह बात पूर्णतया सत्य है, कि फसलों में उपस्थित अनावश्यक, अवांछनीय पौधों (खरपतवारों) से फसल उत्पादन में कमी होती है। ये खरपतवार फसलों से पोषक तत्व, नमी, स्थान, प्रकाश आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करके फसल की बढ़वार, उपज एवं गुणवत्ता में कमी करते हैं। साथ ही ये खरपतवार फसलों में लगने वाले रोगों के जीवाणुओं एवं कीट–व्याधियों को भी आश्रय देते हैं। खरपतवारों से हुई हानि अन्य कारणों जैसे कीड़े–मकोड़ों एवं रोग–व्याधि हानि की अपेक्षा अधिक होती है। खरीफ मौसम की फसलों की तुलना में रबी फसल में खरपतवारों से कम हानि होती है। क्षति का स्तर खरपतवारों की सघनता, उनकी वृद्धि एवं फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करने की अवधि आदि पर निर्भर करते है।

विभिन्न रबी फसलों में पाये जाने वाले प्रमुख खरपतवार निम्नलिखित हैं।

- **चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार :–** बथुआ *(चिनोपोडियम एल्बम)*, सेंजी (*मेलीलोट्स प्रजाति)*, कृष्णनील *(एनागेलीस आर्वेन्सिस)*, हिरणखुरी *(कानवोनवुस आर्वेन्सिस)*, पोहली *(कार्थेमस ऑक्सीकैंथा)*, सत्यानाशी *(आर्जीमोन मैक्सीकोना)*, अकरी (*विसिया* प्रजाति), जंगली मटर *(लेथायरस अफाका)*, जंगली पालक *(रुमेक्स डेंटेटस)*, कासनी *(चिकोरियम इंटाइबस)*, खट्टी बटी *(आक्सेलिस कोर्नीलुकेटा)*, जंगली लूसर्न *(मेडिकागो हिस्पडा)*, वन सोया *(फ्यूमेरिया परबीफ्लोरा)*, दूधी (*यूफोरबिया* प्रजाति), *ट्रायएंथिमा मोनोगायना*, गाजरघास, *(पार्थेनियम हिस्टेराफोरस)*, विर्शखपरा, मरगोजा / भुफाडा *(आरोबंकी इजिटका)*, जंगली गोभी *(लानिया एसप्लेनफोलिया)*।

तालिकाः रबी फसलों में फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा का क्रांतिक समय एवं उपज में कमी।

क्र. सं.	फसल	खरपतवार प्रतिस्पर्धा का क्रांतिक समय (बुआई के बाद दिन)	उपज में कमी (%)
1.	गेहूँ	30 – 45	25 – 45
2.	चना	30 – 60	15 – 25
3.	मटर	30 – 45	20 – 30
4.	मसूर	30 – 60	20 – 30
5.	सरसों / तोंरिया	15 – 40	15 – 30
6.	अलसी	20 – 40	30 – 40
7.	कुसुम	15 – 45	35 – 60
8.	सूरजमुखी	30 – 45	35 – 50
9.	गन्ना	15 – 60	20 – 30
10.	आलू	20 – 40	30 – 60
11.	धनिया	25 – 50	30 – 60
12.	प्याज	30 – 60	60 – 90

- सकरी पत्ती वाले खरपतवारः— गेहूं का मामा *(फेलेरिस माइनर), जंगली जई (अवेना लुडोविसियाना), दूबघास (सायनोडान डेक्टिलोन), प्याजी (एसफोडिलस टेन्यूफोलियस)।*

मोथा कुल के खरपतवारः— मोथा *(साइप्रस रोटन्डस)।*

खरपतवार नियंत्रण का सही समयः— प्रायः खरपतवारों की प्रारम्भिक वृद्धि फसल की तुलना में अधिक होती है। फसलों से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये खरपतवारों को समय पर नियंत्रित करना आवश्यक है। फसल को पूरी अवधि के लिए खरपतवार मुक्त रखा जाना कठिन होता है और ऐसा करना न ही आर्थिक दृष्टि से लाभकारी होता है। अतः फसल की वह प्रारंभिक अवस्था (क्रांतिक) जिसमें खरपतवार नियंत्रण कर उनसे होने वाली हानि को अधिकतम सीमा तक कम किया जा सकता है, इसलिए क्रांतिक अवस्था में खरपतवारों को नियंत्रित करना चाहिए। विभिन्न फसलों में खरपतवार प्रतिस्पर्धा के क्रांतिक समय को **तालिका** में दर्शाया गया।

खरपतवारों की रोकथाम कैसे करे?

अ. निवारक विधिः— यह आम धारणा है, कि इलाज से बचाव बेहतर है। इस विधि में वे क्रियाएं शामिल की जाती हैं जिनके द्वारा खेतों में खरपतवारों के प्रवेश को रोका जा सकता है, जैसे प्रमाणित बीजों का प्रयोग, अच्छी सड़ी गोबर एवं कम्पोस्ट खाद का प्रयोग, सिंचाई नालियों की सफाई, खेत की तैयारी और जुताई में प्रयोग किये जाने वाले यंत्रों के प्रयोग से पूर्व अच्छी तरह से सफाई एवं खरपतवारों के अवशेष नष्ट करना इत्यादि।

ब. सस्य विधियाँ :—

1. फसल चक्र/अन्तर्वतीय फसलें :— क्षेत्र विशेष में एक ही तरह से फसल चक्र अपनाने से विशेष प्रकार के खरपतवारों की संख्या बढ़ती है, अतः फसल चक्र को बदलने तथा इसमें क्षेत्र की सिफारिश के अनुसार विपरीत स्वभाव वाली फसलों के समावेश से खरपतवारों की काफी हद तक रोकथाम की जा सकती है जैसे – एक वर्ष गेहूं की फसल के बाद दूसरे वर्ष सरसों/चना लगाना चाहिए। साथ ही जहां सम्भव हो बहुफसली एवं अन्तर्वतीय फसलों को प्राथमिकता के तौर पर लगायें।

2. बुवाई का समय एवं उचित पौध संख्या :— इसमें फसल की बुवाई या तो खरपतवारों के उगने के बाद करते हैं, जिसमें खरपतवार पहले उग आये फिर उन्हें जुताई करके नष्ट करने के बाद फसल की बोनी करे। खेत में फसल के पौधों की उपयुक्त पौध संख्या रखें ताकि खरपतवारों को बढ़ने का कम मौका मिले।

3. पलवार आदि :— फसल की दो लाइनों के बीच खाली पड़े स्थानों को पुआल, पत्तियों या प्लास्टिक की चादरों से ढकने से उस स्थान पर खरपतवार नहीं उग पाते हैं, सघन बुआई करके तथा जल्दी बढ़कर फैलने वाली प्रतियोगी फसलों की बुवाई करके भी खरपतवार नियंत्रण किये जा सकते हैं।

4. उचित उर्वरक एवं जल प्रबंधक :— उर्वरकों का प्रयोग कूड़ में करने से फसल की वृद्धि अच्छी तथा खरपतवारों की बढ़वार कम होती है, जिससे फसलों को नुकसान कम होता है। उचित जल प्रबंधन से भी खरपतवारों को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है।

5. कार्बनिक खादों का प्रयोग :— अच्छी कम्पोस्ट, गोबर की खाद एवं हरी खाद आदि का प्रयोग करने से इनके द्वारा मृदा में जो कार्बनिक अम्ल छोड़े जाते हैं वे खरपतवारों के राइजोम, बल्ब, ट्यूमर आदि की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

स. यांत्रिक विधियां :— इन विधियों में ग्रीष्म भूपरिष्करण (गर्मी की जुताई) एवं मृदा सौर्यीकरण, हाथ द्वारा निंदाई, खुदाई, मिट्टी चढ़ाना, हसिये द्वारा खरपतवारों की कटाई, कोपर आदि को चलाकर खरपतवारों को नियंत्रित किया जाता है। मशीन, पशुधन तथा मानव शक्ति चलित उन्नत निंदाई–गुड़ाई यंत्रों तथा औजारों द्वारा खरपतवार नियंत्रण की यांत्रिक विधि है जो एक सुगम तथा आसान विधि है। निंदाई के परम्परागत उपयोग में आने वाले औजारों में खुरपी, दांतेदार खुरपी, हांसिया, दांतेदार कुदारी, फावड़ा एवं सादा फावड़ा आते हैं जो मानव चलित औजार हैं। इसके अलावा खींचकर चलाये जाने वाले औजारों में पुल टाइप वीडर, थ्री टाइन हैण्ड कल्टीवेटर (जीन फालों वाला निंदाई यंत्र) व्हील ब्लेड हैण्ड हो, आगे पीछे खींचकर चलाए जाने वाले निंदाई फसलों में हाथ से एक या दो निंदाई करें, प्रथम निंदाई बुवाई के 20–25 दिन पर एवं दूसरी निंदाई 35–40 दिन पर करने से खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण होता है।

द. जैविक विधियां :— इन विधियों में खरपतवारों को विशेष कीट, रोग में कीटाणुओं एवं अन्य जैविक उपायों से ग्रसित कर नष्ट किया जा सकता है। इस विधि के विकास हेतु शोध कार्य चल रहे हैं। उदाहरण के लिये गाजर घास को मैक्सिकन बीटल द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

ई. रासायनिक विधियॉं :– यह विधि कम परिश्रम लागत एवं समुचित तथा त्वरित प्रभाव के कारण वर्तमान में अधिक लोकप्रिय हो रही है। खरपतवार नियंत्रण में जिन रसायनों का प्रयोग किया जाता है उन्हें खरपतवारनाशी कहते हैं। खरपतवारनाशी दवाओं के बारे में समुचित जानकारी होना अति आवश्यक है अन्यथा त्रुटिपूर्ण प्रयोग से फसल को हानि के साथ–साथ पर्यावरण भी प्रदूषित होगा। इस विधि का विशेष लाभ यह है कि हाथ से डोरा चलाकर निंदाई फसल के कुछ बढ़ने पर करते हैं। इन क्रियाओं में खरपतवार जड़ से समाप्त न होकर ऊपर से ही टूट जाते हैं जो बाद में वृद्धि कर जाते हैं साथ ही फसलों की कतारों में उगने वाले नींदा (खरपतवार) पूरी तरह नियंत्रित नहीं हो पाता जबकि खरपतवारनाशी के प्रयोग में यह परिस्थितियां उत्पन्न नहीं होती क्योंकि ये रसायन फसल बोने के पूर्व या बोने के बाद एवं अंकुरण पूर्व या खड़ी फसल में प्रयोग किये जाते हैं। फलस्वरुप नींदा अंकुरण के समय या खड़ी फसल में ही नष्ट हो जाते हैं अतः इस विधि में खरपतवारनाशियों के प्रयोग से पूर्व फसल विशेष के लिए खरपतवारनाशी का नाम मात्रा, प्रयोग का समय एवं विधि का भली प्रकार से ज्ञान होना चाहिए।

एकीकृत खरपतवार नियंत्रण विधि :– वर्तमान में विभिन्न फसलों एवं फसल पद्धतियों की परिस्थितियों में खरपतवार नियंत्रण की केवल एक ही विधि से खरपतवारों का नियंत्रण संभव नहीं है, अपितु खरपतवार नियंत्रण के अच्छे परिणाम हेतु दो या दो से अधिक विभिन्न विधियों को समायोजित/एक साथ अपनाना प्रयोग करना चाहिए। जैसे–गेहूं में शून्य/बिना जुताई के साथ आइसोप्रोट्यूरान शाकनाशी का प्रयोग, गेहूं की शीघ्र वृद्धि करने वाली किस्म पी.बी.डब्लू.–343 लगाना, गेहूं की क्रास एवं सघन बोनी आदि। चना, मटर, मसूर एवं अलसी में एक बार शाकनाशी रसायनों पर निर्भरता कम होकर पर्यावरण को भी सुरक्षित रखने में मदद मिलती है।

शाकनाशी रसायनों के प्रयोग में सावधानियां :–

1. शाकनाशी रसायनों की फसल अनुशंषित मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिए।
2. शाकनाशी रसायनों को उचित समय पर छिड़काव करें।
3. शाकनाशी रसायनों के छिड़काव में फ्लेट फेन या फ्लड जेट नोजल को ही उपयोग में लाएं।
4. शाकनाशी रसायनों का घोल तैयार करने के लिए पानी की सही मात्रा (375–500 ली./हे.) का उपयोग करना चाहिए।
5. अवर्णात्मक शाकनाशी रासायनों के घोल में चिपकने वाले पदार्थों को मिलाना चाहिए जिससे यह पत्तियों पर भली प्रकार से चिपक जाये। इसके लिये आमतौर पर टीपोल का प्रयोग किया जा सकता है।
6. बुवाई से पहले या बुवाई के तुरन्त बाद मृदा में प्रयोग किये गये शाकनाशी रासायनों के लिए आवश्यक है कि मृदा में नमीं पर्याप्त मात्रा में हो।
7. शाकनाशी रसायनों का छिड़काव पूरे खेत में एक समान होना चाहिए।
8. छिड़काव करते समय ध्यान रहे कि आपका चेहरा हवा के बहाव के विपरित न हो।
9. शाकनाशी रसायनों का छिड़काव तेज हवा में नहीं करना चाहिये।
10. छिड़काव के समय मौसम साफ होना चाहिये, बादलों वाला मौसम नहीं होना चाहिए।
11. शाकनाशी रसायनों के प्रयोग में सुग्राही फसलों का हमेशा ध्यान रखें। छिड़काव इतना व्यवस्थित होना चाहिए कि इन फसलों को कोई हानि न पहुंचे।
12. प्रयोग करते समय पम्प में उचित दबाव रखना चाहिये जिससे कि छिड़काव समान रूप से हो पाये।
13. छिड़काव करते समय पूरे कपड़े पहनें एवं नॉक में मास्क का प्रयोग करें।
14. छिड़काव समाप्त होने बाद साबुन से अच्छी तरह हाथ, मुंह अवश्य धो लें। अच्छा हो यदि स्नान भी कर लें क्योंकि शाकनाशी रसायन जहरीले होते हैं।
15. शाकनाशी रसायनों के उपयोग के पश्चात इसके खाली डिब्बे/पैकेट आदि नष्ट करें।

कृषक बंधु अधिक जानकारी के लिए अपने स्मार्ट मोबाइल से राइस आई.एफ.सी./क्रॉप डॉक्टर/ कवकनाशी, कीटनाशी, खरपतवारनाशी केलकुलेटर का प्रयोग करें अथवा नजदीकी कृषि विज्ञान केंन्द्रों तथा कृषि महाविद्यालयों, कृषि विश्वविद्यालयों एवं कृषि विभाग से संपर्क करें या निःशुल्क नं. 1551 पर परामर्श करें।

खरपतवार से सुरक्षा के लिए मल्चिंग एक सरल विकल्प

गुंजन झा
कृषि विज्ञान केंद्र, राजनांदगांव
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

प्रस्तावना– पलवार का उपयोग विश्व में सर्वप्रथम डॉ.एमरी एम.के.इमर्ट ने केटंकी के विश्वविद्यालय में किया एवं गीली घास का उपयोग पलवार के रूप में 1950 में किया गया। पलवार वह तकनीक है जिसमें पौधों के चारों तरफ की मृदा सतह को ढकना, जिससे कि पौधों की जड़ों के पास नमी को संरक्षित किया जा सके, खरपतवारों के नियंत्रण आदि के द्वारा पौधों की वृद्धि व विकास ठीक से हो सके। पलवार के रूप में कई प्रकार के प्राकृतिक पलवार जैसे–भूसा, कम्पोस्ट, सूखी पत्तियां, पत्थर आदि का उपयोग किया जाता है। किन्तु आज के युग में आसानी से विघटित होने वाले पॉलीथीन पेपर के विकास होने से फसल उत्पादन के बाद इन मल्चिंग पदार्थो को खेत की मिट्टी में ही दबाकर अपघटित कर नष्ट कर सकते है। इस प्रकार इनकों खेत में लगाने पर आने वाले खर्च को कम किया जा सकता है।

पलवार के लाभ :– खेती में पलवार अपनाने से निम्नलिखित लाभ मिलते है

1. मृदा तापमान में बढोतरी :– मृदा में दो इंच की गहराई में काली पॉलीथिन से 45–55 फैरनहाईट तथा पारदर्शक मल्च के उपयोग से 8–10 फैरनहाईट तापमान बढता है।
2. मृदा का भुरभुरी होना :– पलवार के उपयोग से मृदा ढीली भूरभूरी तथा वायु युक्त हो जाती है, जिससे पौधों की जड़ो को पर्याप्त आक्सीजन मिलता है तथा सूक्ष्मजीवी गतिविधियां अच्छी तरह से होती है।
3. उर्वरको रिसाव में कमीः– पलवार से पानी बहकर बाहर कम जा पाता है अतः पलवार द्वारा उर्वरकों को जड़ क्षेत्रों में लिप्त किया जा सकता है। अतः पोषक तत्व जड़ क्षेत्र से बाहर नहीं जा पाते। इसलिये पलवार करने से उपयोगी पोषक तत्वों का नुकसान नहीं हो पाता।
4. जलमग्नता में कमी :– पलवार में भूमि का अधिकांश क्षेत्र मल्च से ढका होने से अतिरिक्त पानी बहकर बाहर निकल जाता है। जिससे फसल को जल भराव से होने वाले दुष्प्रभाव से बचाया जा सकता है।
5. वाष्पन दर में कमी :– आच्छादन/ आवटन (मल्च) के इस्तेमाल से प्रकाश का मृदा से सीधे सम्पर्क को रोका जा सकता है जिससे वाष्पन द्वारा जल हानि में कमी आती है।
6. जीवाश पदार्थ में बढोतरी :– जैविक आच्छादन के उपयोग से भूमि में जीवाश पदार्थ में बढोतरी होती है। जिससे मृदा स्वास्थ्य में सुधार होता है।
7. उत्पाद गुणवत्ता में सुधार :– फल सब्जियों वाली फसलों में आच्छादन उपयोग में लाने से फल भूमि के सीधे सम्पर्क में नहीं आते है। परिणाम स्वरूप इनके रंग व गुण में कोई ह्रास नही होता तथा सड़ने से भी बचाया जा सकता है।
8. मजबूत जड़ो का विकास :– पलवार मृदा में कार्बन की मात्रा में वृद्धि करती है जिससें मृदा मुलायम हो जाती है तथा जड़ो के विकास में आसानी होती है।
9. खरपतवारों की समस्या में कमी :– फसलों की लाइनों के बीच खाली पंक्तियों में बिछाने से खरपतवारों पर नियंत्रण किया जा सकता है।
10. फसल शीघ्र तैयार होना :– काली आच्छादन हेतु पॉलीथीन के उपयोग से 2 स 14 दिन पूर्व फसल उत्पाद ले सकते है। जबकी पारदर्शी मल्च से 21 दिन पूर्व फसल उत्पादन तैयार हो जाता है।
11. फसलों की वृद्धि में बढ़ोत्तरीः– प्लास्टिक आच्छादन व्यावहारिक रूप से कार्बन डाई आक्साईड के लिए प्रतिरोधी है, यह गैस पौधों की बढ़वार तथा प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक है। प्लास्टिक मल्च के नीचे अत्यधिक सीमा में कार्बन डाईआक्साईड बढ जाती है।
12. मृदा रोगों में कमी :– मल्चिंग से तापमान बढने तथा फलों के सीधे सम्पर्क में न आने से मृदा द्वारा फैलने वाले रोगजनकों से फसलों को बचाया जा सकता है।
13. कीडो से बचाना :– परावर्तक मल्च से कुछ कीड़े फसल क्षेत्र से दूर चले जाते है।

हानियां :–

1. शुरूवाती खर्चीली :– प्लास्टिक मल्च बिछाने में बहुत महंगी पड़ती है जिससे फसल की लागत बढ़ जाती है इसलिए वर्तमान में महंगी फसले–मसाले फलो आदि में प्लास्टिक आवरण का उपयोग किया जा रहा है।
2. प्रबन्धन कार्य में बढ़ोत्तरी :– मल्च के उपयोग में लाने पर उसकी सफलता तभी है जब उचित प्रबन्धन किया जाये।
3. आवरण को इस्तेमाल के बाद हटाना एक मंहगी प्रक्रिया :– प्लास्टिक मल्च को प्रति वर्ष जमीन से हटाना पड़ता है, काली मल्चभूमि में नष्ट नहीं हो पाती अतः जुताई करते समय भूमि में दबाने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

मल्चिंग का प्रयोग क्षेत्र :–

1. शुष्क क्षेत्रों में नमी के संरक्षण के लिए।
2. शुष्क क्षेत्रों में सिंचाई की संख्या को कम करके पानी की बचत करने के लिए।
3. ग्रीन हाउस में भूमि के तापमान को बनाये रखने के लिए।
4. मृदा सौर्यीकरण द्वारा मृदा जनित रोगों के रोकथाम के लिए।
5. जिन फसलों का बाजार मूल्य अधिक होता है, उनके उत्पादन के लिए।

आच्छादन के प्रकार :–

1. आच्छादन या धूल आच्छादन :– यदि मृदा उपरी सतह को ढीली कर दी जाये तो इससे अपरदन कम हो जाती है तथा यह आच्छादन की तरह कार्य करने लगती है। इस भूरभूरी या ढीली सतह को मृदा या धूल आच्छादन कहते है।
2. फसल अवशेष आच्छादन :– फसल अवशेष जैसे गेंहू के बूढ या कपास के डंठल को भूमि पर छोड़ देना फसल अवशेष आच्छादन कहलाता है, इस प्रकार आच्छादन से मृदा अपरदन कम होता है, तथा वाष्पन द्वारा होने वालीमृदा नमी की हानि को कम किया जा सकता है।
3. भूसा आच्छादन/पलवार :– जब मल्च के रूप में भूसा को भूमि पर फैला दिया जाता है। इसे मृदा अपरदन कम होता है। इसे भूसा पलवार कहते है।
4. संश्लेषित आच्छादन :– आजकल इस प्रकार की मल्च का उपयोग हो रहा है, इससे संश्लेषण पदार्थ पॉलीथीन वाली बिनायल क्लोराईड (पी.वी.सी.) की बहुत पतली (30–120) माइकोन झिल्ली को भूमि की सतह पर मल्च के रूप में बिछा दिया जाता है, यह झिल्ली भू–सतह को 30–60 प्रतिशत ढक लेती है, इस प्रकार के मल्य उत्पादन की विभिन्न महत्वपूर्ण कारक जैसे – मृदा तापमान, आर्द्रता, मृदा संरचना, खरपतवार नाइट्रोटन एवं कार्बन डाईऑक्साईड को नियंत्रित करती है, इससे जड़ों का समुचित विकास होता है, जिससे पौधों की उचित बढवार होती है।

क. काली प्लास्टिक आच्छादन– ऐसी काली प्लास्टिक फिल्म जो सूर्य की रोशनी को पार नहीं करने देती जिससे कि फिल्म के नीचे फोटोसिन्थेसिस की क्रिया नही हो पाती और इस प्रकार से पूरी तरह से खरपतवार का नियंत्रण हो जाता है यह आच्छादन आर्द्रता को भी संरक्षित करके मृदा के तापमान को नियंत्रित करती है।

ख. पारदर्शी आच्छादन – इसका मुख्य उपयोग पहाड़ी क्षेत्रों में मृदा का तापमान बढ़ाने के लिए किया जाता है एवं मैदानी क्षेत्रों में इसका उपयोग गर्मी के मौसम में किया जाता है। इस प्रकार की मल्च का प्रयोग मृदा में उपस्थित मृदा जनिक रोगों को नियंत्रित करने के लिए मृदा सौर्यीकरण के रूप में किया जाता है।

ग. दोनो तरफ से रंगीन आच्छादन – ऐसी मल्च को तरंग दैर्ध्य या प्रकाश सेल्किटिव फिल्म के नाम से भी जाना जाता है। इस मल्व की यह खासियत होती है कि यह सूर्य की रोशनी में से चुनी हुई तरंग दैर्ध्य को भी अवशोषित करके पौधों तक पहुचाती है एवं जब की रोशनी इस फिल्म से होकर गुजरती है तो उसका स्पेक्ट्रम् परिवर्तित हो जाता है जो पौधों की वृद्धि व विकास में अच्छा प्रभाव डालता है। इस प्रकार कि फिल्म का उपयोग मृदा का तापमान बढ़ाने, खरपतवार नियंत्रण, विकसित होते फलों के रंगों के विकास एवं उसमें कार्बोहाइड्रेड के परिवहन में भी उपयोगी होती है।

लम्बवत आच्छादन :– एक निश्चित गहराई तक लगातार जुताई आदि करने से भूमि के नीचे एक कठोर सतह को तोड़ा जा सकता है। जिससे जड़े आसानी से गहराई में चली जाती है तथा मृदा वायु का विकास होता है इस क्रिया से जलमग्नता से बचा जा सकता है, सब – सोय लिंग के प्रभाव अधिक समय बाद इस प्रकार बनायी गयी नालियां बंद होना प्रारम्भ हो जाती है। इस प्रकार सब – सोय लिंग की प्रक्रिया दोहराने की आवश्यकता रहती है। सब – सोय लिंग के गुणकारी प्रभावों को अधिक समय तक बनाये रखने की विधि को लम्बवत आच्छादन कहते है।

6. परावर्तन करने वाली प्लास्टिक आच्छादन :– प्रकाश को परावर्तन करने के गुण के कारण माहू को प्रवेश करते में अवरोध पैदा करते है। जो कि तरबुजा खरबुज वर्गीय फसलों में मोजेक वायरस–2 को फैलाते है इस पलवार के प्रयोग से किसान कम तापमान की स्थिति में उत्पादन को अधिक दूरी तक ले जा सकते है यदि प्लास्टिक मल्य को एल्युमिनियम से पेंट कर दिया जाये तो सफेद रंग के कारण उनका परावर्तन करने का गुण बढ़ जाता है, जिससे देरी से लगने वाली फसल ढकी रहती है, परिणाम स्वरूप उच्च गुणवत्ता का उत्पादन प्राप्त होता है, इसे चमकीली प्लास्टिक पलवार कहते है।
7. इनफ्रा रेड संसरण पलवार :– इसे अवरकल भी कहते है। इनका विकास अभी हुआ है, इनमें ये गुण होता है। कि सूर्य की प्रकाश की उन तरंग लम्बाई की किरणों को पार जाते है, जिनसे तापमान बढता है, परन्तु उनको नहीं जाने देते है। जिनसे खरपतवार उगते है परिणाम स्वरूप ये पदार्थ काली प्लास्टिक मल्व की तुलना में ठण्डा रखते है। इससे खरपतवारों का उगना कम हो जाता है इनमें पैदा की हुई फसल काली प्लास्टिक मल्व की तुलना में 7 से 10 दिन पहले तैयार हो जाती है।

आच्छादन का प्रभाव :– फसलों के के लिए मल्च का चुनाव विभिन्न परिस्थिति पर निर्भर करता है। जैसे

1. वर्षा ऋतु – प्रिफोरेटेड मल्च का प्रयोग
2. बगीचा– मोटे फिल्म वाले मल्च का प्रयोग
3. मृदा सौर्यीकरण – पतला पारदर्शी किल्म का प्रयोग
4. खरपतवार नियंत्रण – काली फिल्म का प्रयोग
5. रेतीली मिट्टी – काली फिल्म का प्रयोग
6. लवणीय जल – काली फिल्म का प्रयोग
7. कीट रिपलेन्ट – चांदी कलर की फिल्म का प्रयोग
8. जल्दी अंकुरण – मोटे फिल्म का प्रयोग

आच्छादन करने से पूर्व भूमि की तैयारी :– आच्छादन लगाने से पहले मिट्टी के दो नमुने उसी खेत से ले जहां मल्चिंग करना है तथा मृदा का परीक्षण करवाये। उनमें से एक नमूना मृदा में उपस्थित पदार्थ के लिए व दुसरा निमेटोड के लिये आवश्यकतानुसार मृदा सुधारक चुना, मैगनिशियम, जिप्सम आदि डालना हो उसे डाल दे ताकि उसका पी.एच. 6–6.5 तक आ जावे। यदि निमेटोड की समस्या है तो मल्चिंग के समय ही प्लास्टिक मल्य बिछाने के साथ–साथ धूमण मिथाईल ब्रोमाइड आदि से कर दे। इससे निमेटोड,खरपतवार व मृदा जनित बीमारियां कम हो जाती है । मल्चिंग और धुमण करने स पूर्व भूमि कचरे से मुक्त अच्छी भौतिक दशा में होना चाहिये।

मेढ़/बेड बनाना :– ट्रेक्टर चलित चौड़ी रगड़ बनाने वाली मशीन उपलब्ध है, जिनसे एक या अधिक बेड बनाए जा सकते है। उसके बाद ही ड्रिप की लेटरल वाली करना एवं प्लास्टिक मल्व बिछाते है। इसके कई फायदे होते है। इससे कम श्रम और कार्यजल्दी होता है, एवं मल्च व ड्रिप की स्थापना ठीक तरह से हो जाती है।

उर्वरक डालना :– मृदा परीक्षण रिपोर्ट के आधार पर बैड बनाते समय खादों का प्रयोग कर लेना चाहिये यदि ड्रिप सिंचाई पद्वति का प्रयोग कर रहे हो तो प्लास्टिक मल्व के बाद भी घुलनशीन खादों का प्रयोग किया जा सकता है इनमें कैल्शियम, नाइट्रेट, सोडियम, नाइट्रेट व पोटेशियम नाइट्रेट प्रमुख है।

मल्च की मोटाई :– उपयोग किये जाने वाले पदार्थ के आधर पर मल्च की मोटाई 5–6 से.मी. रखी जाती है। इस गहराई पर मल्च के मुलभूत उद्देश्य जैसे खरपतवार नियंत्रण मृदा नमी का संरक्षण तथा तापमान नियंत्रण आदि भरपूर मिलते है। 5–6 से.मी. से कम मोटी मल्च संतोषप्रद कार्य नहीं करती है।

मल्च की मोटाई (माईक्रोन)	फसल
20–25	वार्षिक एवं कम अवधि वाले फसलें
40–50	द्विवर्षीय एवं मध्यम अवधि फसलें
50–100	बहुवर्षीय एवं लंबी अवधि फसलें

सिंचाई करना :– टपक सिंचाई प्लास्टिक मल्च के साथ प्रयोग के लिए अनुशंसित है, इसके अलावा सिंचाई की अन्य विधियों द्वारा भी अच्छी तरह से सिंचाई कार्य संभव है। 6,9 एवं 12 इंच गहराइयों पर टेन्शियोमिटर या अन्य नमी को नापने वाले यंत्र लगा देना चाहिये ताकि सिंचाई कब करना है, कितनी करना है, यह साफ होता रहे। इन्ही टयुब के माध्यम से निर्धारित घुलनशील खादों को भी फसलों में डालते है, इसे फर्टीगेशन कहते है।

द्वि–फसलीय फसल प्लास्टिक मल्च से लेना :– एक बार जब प्रथम फसल ले ली जाती है उसकी जगह का द्वितीय फसल लेने की भी अनुशंसा की जाती है। इसमें उसी जमीन के टुकड़े से सघन खेती कर सकते है। द्वितीय फसल में खाद टपक विधि से देते है।

धूमण तथा प्लास्टिक मल्च व ड्रिप की लेटरल लाईन को लगाना :– प्लास्टिक मल्च का उपयोग करने के दौरान रसायनों की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि बेड की चौड़ाई क्या है, लाईन की चौड़ाई क्या है, कि बेड की चौड़ाई क्या है धूमण के दौरान मृदा का तापमान कम से कम 10 से.ग्रेट. होना चाहिये। इसमें कम तापक्रम पर गैस नहीं बनती है। खेत में कचरा नहीं होना चाहिये, मृदा में नमी पर्याप्त होनी चाहिए।

मल्चिंग का प्रभाव :– मल्चिंग का निम्नलिखित प्रकार से प्रभाव है :–

1. फसलों के उत्पादन पर प्रभाव
2. मृदा गुणों पर मल्च का प्रभाव
3. खरपतवारों पर मल्च का प्रभाव

1. फसलों के उत्पादन पर प्रभाव

पैमाने पर उपयोग करने से पूर्व देख लेना चाहिये। प्रयोग के आधार पर निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए है –

क्र.	फसल का नाम	मोटाई (माइक्रोन)	चौड़ाई (मीटर में)	उत्पादन में वृद्धि (प्रतिशत)	कीमत प्रति हे.	अन्य
1	तरबुज – खरबुज	30–40	1.2	50.60	20000	इसमें पारदर्शक काली और धुसर एल.एल. डीपी. ई. प्लास्टिक झिल्ली का उपयोग किया जाता है।
2	सेमवर्गीय	50–200	.	–		
3	स्ट्रॉबेरी	40–80	1.0	40–50	20000	
4	टमाटर	40	1.6	45–50	20000	
5	खीरा वर्गीय	30	1.2	–	20000	बीमारियों तथा माहु के प्रकोप से भी फसल को बचाया जा सकता है। माहु के आक्रमण से अन्य वायरस जनित बीमारियों का प्रकोप बढ़ जाता है।
6	मिर्च	25	4.0	50–60	20000	
7	फलियां	40	1.2	12–15	20000	
8	आलु	40	1.2	35–40	20000	
9	मक्का	25–130	1.5	45–50		
10	अंगूर	100–120	1.0	.	14000	
11	नींबू वर्गीय	100	1.0	45–50	14000	
12	अर्धशुष्क क्षेत्र	150	1.0	35–40	14000	
13	फलबाग	100–120	1.6	–	14000	

2. **मृदा गुणों पर आच्छादन का प्रभाव :–** मल्चिंग से मृदा गुणों में विभिन्न प्रकार से सुधार होता है–

क. **मृदा नमी :–** आच्छादन से वाष्पन, वर्षा जल के बहाव की दर तथा खरपतवारों की संख्या कम होती है और भूमि में जल अधिक उतरने से मृदा नमी में बढ़ोतरी होती है।

ख. **मृदा तापमान :–** पारदर्शक प्लास्टिक आवरण से मृदा ताप दिन मे 2–10 डिग्री सेन्टिग्रेट बढ़ता है जबकि रात्रि में 2–40 डिग्रीसेन्टिग्रेट तक बढ़ाया जा सकता है।

ग. **मृदा क्षारीयता :–** शुष्क रोगों की मृदाओं में क्षारों ंकी अधिकता होती है। इनमें से अधिकांशत क्षार पानी में आसानी से घुलनशील तथा पानी के साथ चलते है। यदि बरसात पर्याप्त होती है। तो ये क्षार निक्षालन के द्वारा भूमि दूर हो जाते है। लेकिन अपर्याप्त बरसात की स्थिति में ये क्षार सीमित क्षेत्र तक ही जा पाते है तथा वाष्पन होने पर शीघ्र ही मृदा सतह पर क्षार पंहूच जाते है तथा वाष्पन होने पर शीघ्र ही मृदा में पानी अधिकाधिक प्रवेश हो तो मृदा सतह पर क्षारों का एकत्रीकरण कम किया जा सकता है।

घ. **मृदा संरचना :–** कार्बनिक या जैविक आच्छादन जैसे भूसा फसल अवशेष आदि सड़ गल कर मृदा जीवांश पदार्थ की मात्रा बढाते है जिसमें मृदा संरचना में सुधार आता है।

3. **खरपतवारों पर मल्च का प्रभाव :–** काले रंग की पालीथीन फिल्म का खरपतवारों पर नाशी प्रभाव पूर्ण रूप सेर हता है। ये धूसर रंग की पालीथीन का परत एवं पारदर्शी पालीथीन मल्च का नगण्य रूप नही ंके बराबर खरपतवारों को खत्म करने का प्रभाव रहता है। जिसमें उत्पादन में 30 से 50 प्रतिशत तक की वृद्धि की जा सकती है।

मल्च की लागत का लेखा जोखा :– आच्छादन में मुख्यतः जमीन को ढकने की विधि उपयोग में लाई जाती है। यदि समतल खेत में आच्छादन लगाना हो तो उसका क्षेत्रफल पूरे खेत के क्षेत्रफल के बराबर होता है, यदि खेत में नालियां व मेड बनी हो व पूरे खेत में मल्च लगाना हो तो मल्च का क्षेत्रफल खेत के क्षेत्रफल से अधिक होता है अतः मल्च समान्यतः पट्टियों के रूप में लगाई जाती है, जो कि 40 से 60 प्रतिशत तक अतिरिक्त हो सकती है।

खेत में जमीन को मल्च से ढकने का प्रतिशत	फसल
20–25	सभी लतायें वाली फसलें ।
40–50	फल बाग–बगीचे वाली फसलों की प्रारंभिक अवस्था
40–60	कद्दू वर्गीय सब्जियां एवं फल वाली फसलें
70–80	सब्जियां, पपीता एवं अनानाश

भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है। हिंदी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है।

नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

औषधीय फसलों में रसायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण

प्रवीण दादासाहेब माने एवं पंचम कुमार सिंह,
नालन्दा उद्यानिकी महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा, (बिहार)

अनचाहे पौध अर्थात् खरपतवार से मानव का परिचय उतना ही प्राचीन है जितना कृषि का इतिहास। इनके आर्थिक महत्व की जानकारी नई नहीं है। किसान इनसे छुटकारा पाने के लिए प्राचीन काल से संघर्ष करता आ रहा है। खरपतवार फसल की उपज को घटाते ही नहीं वरन् फसल की गुणवत्ता को भी कम कर देते हैं। इसलिए वह उनसे आदिकाल से जूझता चला आ रहा है। पहले उसने उन्हें हाथ से उखाड़ फेंकने का उपक्रम अपनाया, फिर खुरपी एवं अन्य यंत्रों से निकालकर नष्ट करते थे इस प्रकार खरपतवार नियंत्रण की दिशा में मानव आगे बढ़ा और आज विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी के युग में पहुंचते–पहुंचते व जिस प्रकार अन्य दिशाओं में आगे बढ़ा है वैसे ही खरपतवार उन्मूलन की दिशा में भी उसने बड़ी प्रगति की है। ऐसे रसायनों का विकास किया गया है जो खेत में ही खरपतवारों को नष्ट कर देते हैं। इससे कृषि उत्पादन के क्षेत्र में एक नई क्रान्ति का उदय हो रहा है और खरपतवारों का नियंत्रण का महत्व दिनोदिन बढ़ता जा रहा है।

धान्य फसलों के समान खरपतवार औषधीय फसलों को भी हानि पहुंचाते हैं। प्रायः सभी प्रकार के औषधीय फसलें मौसमी खरपतवारों से ग्रस्त रहती हैं। ग्रसता की मात्रा उपज में होने वाली कमी को निर्धारित करती है। औषधीय फसलों में खरपतवार एकवर्षी या बहुवर्षी होते हैं तथा क्यारियों में बुआई या रोपाई के बाद अंकुरित होते हैं। औषधीय फसलों की बुआई या रोपाई पंक्तियों में और पर्याप्त दूरी पर की जाती है। जिसके फलस्वरूप उन स्थानों पर खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है। तथा प्राकृतिक संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा करते है। इसका अन्दाजा किसान नहीं लगा पाता है। जिससे फसलों को अधिक नुकसान होता है। इसलिए समय रहते खरपतवारों को प्रबंधित करना बहुत ही आवश्यक हो जाता है।

आमतौर पर निराई–गुडाई करके खरपतवार निकाले जाते हैं। परन्तु निराई गुड़ाई करने में मेहनत और समय अधिक लगता है। कई बार प्राकृतिक तथा अन्य कारणों से किसान व्यस्त रहने या मजदूर नहीं मिलने पर निराई–गुड़ाई समय पर सम्पन्न नहीं हो पाता। तथा विलम्ब से यह कार्य करने पर लाभ नहीं मिल पाता है। क्योंकि तब तक खरपतवार काफी नुकसान पहुँचा चुके होते हैं। अन्य कई प्रदेशों में प्रगतिशील किसान खरपतवार नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशियों का यथोचित उपयोग करना शुरू कर दिया है।

रोपाई या बुआई के समय के अनुसार औषधीय फसलों को खरीफ, रबी अथवा वसन्त ऋतु में बुआई करते हैं। रबी एवं बसन्त ऋतु के फसलों में अधिकतर चौड़ी पत्ती वाले खर जैसे बथुआ, पीली सेंजी, सफेद सेंजी, चौलाई, कटीली चौलाई, पारचुलाका, जंगली भांग, महकउआ, गजरी, चटरी मटरी, कृष्णनील इत्यादि तथा सकरी पत्ती वाले खरो में दूब, मोथा प्रमुख रूप से खेतों में पाये जाते हैं। खरीफ मौसम में सकरी पत्ती वाले खरपतवारों में दूब, मोथा, संवा, सामी, बजरी तथा चौड़ा पत्ती में वन पालक, कंटीली चौलाई, सिलोसिवा (मुर्गाघाग), अगरा, दुद्धी बड़ी व छोटी इन फसलों में पाई जाती है। अक्टूबर से आगे औषधीय फसलें जैसे पुदिना, लेमन घास, अजवाईन, मेथी, पेपर, आइसबगोल, सौंफ तथा जून– जुलाई में सिट्रानेला, इत्यादि औषधीय फसलें लगाई जाती हैं।

खरपतवार नियंत्रण : पुदीना की फसल जनवरी माह में जड़ों के टुकड़ों को मिट्टी में रोपाई करके की जाती है। इसके बाद खेत में 15–20 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करते रहते हैं। खेत में उचित तापमान व लगातार नमी रहने के कारण खरपतवारो का बाहुल्य रहता है। ये खरपतवार पुदीने की उपज का 50–70 प्रतिशत कम कर देते हैं। आमतौर पर किसान भाई पुदीने के खेत को खरपतवार मुक्त रखने के लिए पहली सिंचाई के 25–30 दिनों के बाद पहली निराई करते हैं। इसके बाद हर 20–25 दिनों बाद निराई–गुड़ाई करनी पड़ती है। परन्तु यह कार्य बहुत ही खर्चीला है। अब बहुत सी शाकनाशियों का अविष्कार हो चुका है जिसके मदद से औषधीय फसलों में खरपतवार समय से नियंत्रित किया जा सकता है ।

पुदीना, अदरक, हल्दी तथा अन्य रबी औशधीय फसलों में प्रमुख शाकनाशी जैसे एलाक्लोर, टर्बोसिस, आइसोप्रोट्यूरान का प्रयोग किया जा सकता है। पुदीने में शाकनाशियों का प्रयोग रोपाई के पहले किया जाता है। टर्बोसिल नामक शाकनाशी के 1.0–1. 5 कि.ग्रा. (सक्रिय तत्व)/हे. की दर से 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर रोपाई के पहले बने हुए खेत में छिड़काव या एलाक्लोर रसायन का 1.5 किलोग्राम सकिय तत्व/हे. रोपाई के बाद उपरोक्त पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। इसी प्रकार अगर ये दोनों शाकनाशी नहीं उपलब्ध हो तो आइसोप्रोट्यूरान का 0.75 कि.ग्रा./हे. की दर से पानी की मात्रा में घोल बनाकर छिड़काव करने से सभी प्रकार के चौड़ी पत्तीवाले खरों का जमाव नहीं हो पाता तथा खेत 1.5 से 2 माह तक खरपतवार मुक्त हो जाती है वासालिन (फ्लोक्लोरीन) का

10 किलोग्राम/ हे. के लिए 500–600 लीटर पानी में घोलकर बुआई के पहले छिड़काव करके मिला देने से अधिक प्रभाव पड़ता है। जिससे खरपतवारों का जमाव ही नहीं होता है।

सिट्रोनेला : इसमें खरपतवार अधिक उगता है क्योंकि इसकी बुआई जून–जुलाई में की जाती है। इसमें एकवर्षीय एवं बहुवर्षीय दोनों प्रकार के खरपतवार उग आते हैं। इन खरपतवारों से उपज मे 20 प्रतिशत की कमी पायी गई है। इस फसल में भी अधिकतर खुरपी द्वारा ही खरपतवार निकालने की प्रथा थी पर अब शाकनाशियो द्वारा खरपतवारों का निराकरण उचित और कम खर्च में किया जा सकता है। इस फसल में खरपतवार नियत्रण के लिए एट्राजिन रसायन का 1.0 कि. ग्रा./हे. की दर से 500–600 ली. पानी में घोलकर छिड़काव कर देने से करीब दो माह तक खेत में खरपतवार नहीं आ पाते हैं। इस रसायन का छिड़काव बुआई के दूसरे या तीसरे दिन फसल व खरपतवार के जमाव के पूर्व करना चाहिए। इसके अलावा एलाक्लोर रसायन का भी प्रयोग किया जा सकता है। इसका प्रयोग 1.0 से 1.5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर के हिसाब से

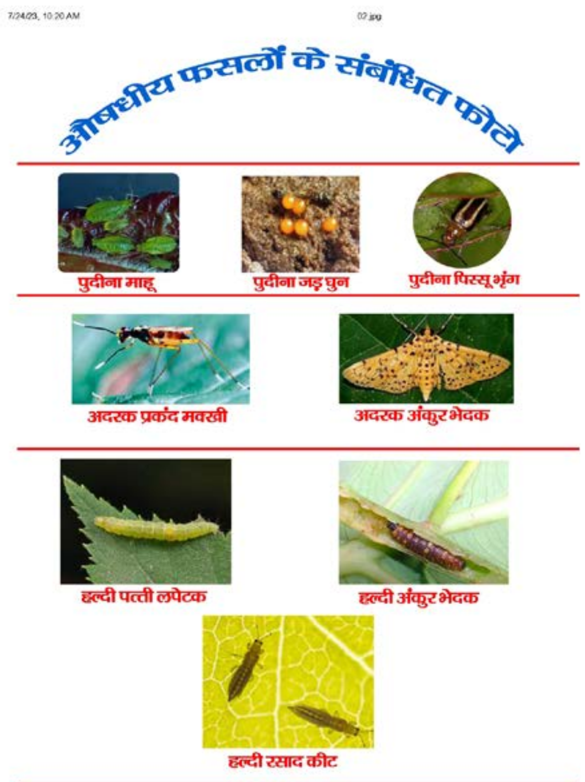

बुआई या रोपाई के दो दिन बाद कर सकते हैं। आइसोप्रोटयूरान का 0.75 कि.ग्रा./हे. की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

सतावर, इसबगोल इत्यादि औषधीय फसलों में खरपतवार नियंत्रण के लिए मेट्रीब्यूजीन रसायन का 0.75 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर की दर से फसल के बुआई या रोपाई के बाद छिड़काव करने से उचित लाभ प्राप्त होता है। इसके अलावा आइसोप्रोटयूरान 0.5 कि.ग्रा./हे. की छिड़काव कर खरपतवार पर नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है।

पेपर : इस फसल में बासालीन खरपतवारनाशी के 0.75 से 1.0 कि.ग्रा./हे. की दर से प्रति हेक्टर में छिड़काव बुआई या रोपाई के तुरन्त बाद किया जाता है। जिससे सभी प्रकार के चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार का जमाव नहीं हो पाता है। मिट्टी में रसायन को मिला देने से इसका प्रभाव अधिक पाया गया है।

खरपतवारनाशी रसायनों का छिड़काव के लिए घोल बनाना : बताई गई मात्रा के अनुसार खरपतवारनाशी रसायन को लेकर उसे पहले थोड़े पानी में अच्छी तरह घोलना चाहिए। फिर गाढ़े घोल को आवश्यक पानी की सम्पूर्ण मात्रा में घोलना चाहिए। एक हेक्टर खेत में छिड़काव के लिए 500–600 लीटर पानी में घोल पर्याप्त होता है।

खरपतवारनाशी रसायनों के उपयोग में सावधानियाँ : शाकनाशी रसायनों के प्रयोग का मुख्य उद्देश्य खरपतवारों की रोकथाम है। परन्तु इनके प्रयोग से जहाँ फसलों की सुरक्षा होती है, वही उनका प्रभाव भूमि, जीवाणुओं, आदमियों, पशुओं, मछलियों आदि पर भी पड़ता है।

अतः इन रसायनों के प्रयोग में प्रर्याप्त सावधानी बरते :

1 सही मात्रा में शाकनाशी रसायन का प्रयोग करें अन्यथा सिफारिस की गई माता से अधिक रसायन छिड़कने पर खरपतवारों के अतिरिक्त फसलों को भी हानि हो सकती है और कम मात्रा से खरपतवार नष्ट नहीं होते।

2 रसायन उपयोग करने के पहले कन्टेनर पर लगे लेबिल को ध्यान से पढ़े और उसमें बताई गई सावधानियों पर अमल करें ।

3 सही प्रकार की शाकनाशी दवा का प्रयोग करें ।

4 शाकनाशी का प्रयोग बताए गये उचित समय पर ही करें।

5 शाकनाशी दवा का छिड़काव करने के लिए (फ्लैटफैन नोजल) का प्रयोग करें।

6 तेज हवा में छिड़काव न करें। अन्यथा तेज हवा के साथ दवा उड़कर पास की अन्य फसलों को नुकसान पहुंचा सकती है।

7 छिड़काव करने से पहले और छिड़काव करने के बाद में मशीन (स्प्रेयर) को अच्छी तरह साफ कर लें।

8 दवा का छिड़काव घुटने की उँचाई से एक समान करें।

रबी फसलों में खरपतवार प्रबंधन

तरूण कुर्रे एवं सत्येन्द्र पाटले
कृषि विज्ञान केंद्र, मुंगेली (छ.ग.)

कृषि में खरपतवार आज की समस्या नहीं अपितु मनुष्य ने जब से कृषि कार्य प्रारम्भ किया तभी से यह उसके साथ है, जो फसल की वृद्धि रोक अधिकतम पैदावार लेने में बाधक होते हैं इन्हीं अवांछित पौधों को जो बिना बोये ही फसलों के साथ उग आते हैं खरपतवार कहलाते है। यदि किसान को अपनी फसल से भरपूर उपज प्राप्त करनी है तो अपनी फसल के प्रमुख शत्रु, खरपतवारों पर नियंत्रण कर उनको समय से नष्ट करना होगा। खरपतवारों की उपस्थिति फसल की उपज को लगभग 37 प्रतिशत तक कम करती है।

खरपतवारों से हानियां :– आमतौर पर विभिन्न फसलों की पैदावार में खरपतवारों के प्रकोप एवं परिस्थितियों कि आधार पर 5 से 85 प्रतिशत तक की कमी आंकी गयी हैं। कभी कभी तो यह शत–प्रतिशत तक हो जाती है। खरपतवार फसलों के लिए भूमि में निहित पोषक तत्व एवं नमी का एक बड़ा हिस्सा शोषित कर लेते हैं तथा साथ ही साथ फसल को आवश्यक प्रकाश एवं स्थान से भी वंचित रखते हैं। फलस्वरुप पौधे की विकास गति धीमी व गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। यह भी देखा गया है कि जहां खरपतवारों का प्रकोप ज्यादा होता है वहां कीटों एवं बीमारियों का आक्रमण भी बढ़ जाता है। इसलिए खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवस्था में इन पर नियंत्रण पाना अति आवश्यक है। खरपतवारों द्वारा पोषक तत्वों का पलायन एवं पैदावार में कमी एवं हानि का विवरण क्रमशः (सारणी 1–2) में दिया गया है।

रबी फसलों के मुख्य खरपतवार

सारणी 1. भारत में विभिन्न कारकों द्वारा कृषि में वार्षिक हानि का विवरण

कारक	करोड. (रूपये)	प्रतिवर्ष हानि (प्रतिशत)
खरपतवार	51,800	37
रोग एवं बीमारी	40,600	29
कीट	30,500	22
अन्य विवरण	16,800	12
योग	1,39,700	100

सारणी 2. विभिन्न फसलों में खरपतवारों द्वारा पोषक तत्वों का पलायन

फसल	नत्रजन (किग्रा/हे.)	स्फुर (किग्रा/हे.)	पोटाश (किग्रा/हे.)
गेहूं	20–90	2–13	28–54
चना	29–55	3–8	15–72
मसूर	39.0	5.0	21.0
मटर	61–72	7–14	21–105
सरसों	22.0	3.0	12.0
अलसी	32.0	3.0	13.0

खरपतवारों की रोकथाम :– प्रायः देखा गया है कि किसान फसल में कीड़े–मकोड़ों एवं रोगों की रोकथाम की ओर तुरन्त ध्यान देते हैं लेकिन खरपतवारों के प्रति उदासीनी रहते हैं। यहां पर महत्वपूर्ण ध्यान देने योग्य बात यह है कि फसल को हमेशा न तो खरपतवार मुक्त रखा जा सकता है और न ही ऐसा करना आर्थिक दृष्टि से लाभकारी है। अतः क्रान्तिक (नाजुक) अवस्था (सारणी–3) में विशेषकर खरपतवार नियंत्रण के तरीकों को अपनाकर फसल पैदावार में हो रही कमी को रोका जा सकता है, साथ ही किसान इस बात का ध्यान विशेष रुप से रखें कि उखाड़े गए खरपतवार मेंढों पर न छोड़ें उन्हें एक जगह गड्ढे में इकट्ठा करें अन्यथा उनके बीज गिरकर पुनः हवा, कीट, वर्षा जल आदि से खेतों में पहुंचकर हानि पंहुचाते हैं।

सरणी 3. खरपतवारों द्वारा उपज में हानि एवं फसल – खरपतवार प्रतिस्पर्धा का क्रान्तिक समय

रबी की प्रमुख फसलें	उपज में कमी (प्रतिशत)	क्रान्तिक समय (बुवाई के बाद दिन)
खाद्यान्न फसलें		
गेंहू	20–40	30–45
जौ	10–30	10–30
दलहनी फसलें		
चना	15–25	30–60
मसूर	20–30	30–60
मटर	20–30	30–45
तिलहनी फसलें		
सरसों	15–30	15–40
अलसी	30–40	20–45
सूर्यमुखी	30–50	30–45
कुसुम	35–60	35–60
अन्य फसलें		
गन्ना	20–30	20–30
आलू	30–60	20–40
कपास	40–50	15–60

रबी फसलों के प्रमुख खरपतवारः– किसी स्थान पर खरपतवारों की उपस्थिति वहां की जलवायु, भूमि, संरचना, भूमि में नमी की मात्रा, खेतों में बोई गई पिछली फसल आदि पर निर्भर करती है। इसलिए एक ही फसल में अलग–अलग स्थानों पर अलग–अलग प्रकार के खरपतवार पाये जाते हैं। विभिन्न रबी फसलों में उगने वाले प्रमुख खरपतवारों का विवरण सारणी–4 में दिया गया है।

सरणी 4. रबी फसलों में पाये जाने वाले प्रमुख खरपतवार

फसलें	प्रमुख खरपतवार
गेहूं एवं जौ	गेंहू का मामा, बथुआ, कृश्णनील, चटरी–मटरी, गेगला, मुनमुना, हिरनखुरी, सैंजी, प्याजी, कंटीली, जंगली जई, मोथा, व दूब घास
चना, मसूर एवं मटर	बथुआ, कृष्णनील, चटरी–मटरी, गेगला, हिरनखुरी, सैंजी, प्याजी, कंटीली, गजरी, मोथा, व दूब घास
सरसों	ओरोबंकी (भुंई फोड.) हिरनखुरी, सैंजी, प्याजी, मोथा, व दूब घास

रबी फसलों में खरपतवारों की रोकथामः– खरपतवारों की रोकथाम के लिये खरपतवारों का नियंत्रण सही समय पर करें। ताकि खरपतवारों का हानिकारक प्रभाव फसलों पर न पड़े। खरपतवारों की रोकथाम निम्नलिखित तरीकों से की जा सकती है।

1. **निवारण विधिः–** इस विधि में वे सभी क्रियाएं शामिल हैं जिनके द्वारा खेतों में खरपतवारों के प्रवेश को रोका जा सकता है। जैसे–प्रमाणित बीजों का प्रयोग, अच्छी सड़ी गोबर एवं कम्पोस्ट खाद का प्रयोग, सिंचाई की नालियों की सफाई, खेत की तैयारी एवं बुवाई में प्रयोग किये जाने वाले यंत्रों की प्रयोग से पूर्व अच्छी तरह से सफाई इत्यादि।
2. **सस्य विधिः–** गर्मी में खेत की गहरी जुताई, स्टेल सीड बेड विधि, जीरो टिल सीड ड्रिल अथवा हैप्पी सीडर का प्रयोग, फसल चक्र, अन्तरवर्ती फसल इत्यादि का प्रयोग भी खरपतवारों के नियंत्रण में मदद करता है।
3. **यांत्रिक विधिः–** अच्छी पैदावार के लिए फसल को प्रारंभिक अवस्था में बुवाई के 15–45 दिन के मध्य तक खरपतवार से मुक्त रखना चाहिये। सामान्यतः दो निराई–गुड़ाई, पहली 20–25 व दूसरी 45 दिन बाद करने से खरपतवारों का नियंत्रण प्रभावी ढंग से होता है। इसके लिए परम्परागत कृषि यंत्रों के अतिरिक्त उन्नत नीदानाशक यंत्रों जैसे खींचकर अथवा ढकेलकर चलाये जाने वाले सस्ते हल्के एवं प्रभावी वीडरों, हैण्ड हो, खुरपी इत्यादि का प्रयोग किया जा सकता है। इन यंत्रों का प्रयोग कतार में बोई गई फसलों में ही सम्भव है।
4. **रासायनिक विधिः**

   शाकनाशी रसायनों का प्रयोगः– वर्तमान समय में प्रतिकूल मौसम जैसे वर्षा अथवा मजदूरों की कमी की समस्या को देखते हुए खरपतवारों का नियंत्रण शाकनाशी रसायनों द्वारा करने से जहां एक ओर खरपतवारों का उचित समय पर नियंत्रण हो जाता है वहीं दूसरी ओर लागत एवं समय की भी बचत होती है शाकनाशी दवाएं खरपतवारों को उगते ही शीघ्र नष्ट कर देती हैं जिससे उनकी पुनः वृद्धि एवं फूल व बीज न बनने पाने से प्रसारण नहीं हो पाता है। जिससे अगले वर्ष फसलों में खरपतवारों का प्रकोप काफी कम हो जाता है। लेकिन शाकनाशियों का उपयोग करते समय यह ध्यान रखना होगा कि उसकी फसल अनुसंषित मात्रा को उचित विधि द्वारा उपयुक्त समय पर प्रयोग करें ताकि इनसे समुचित लाभ प्राप्त हो सके अन्यथा लाभ के बजाय हानि भी हो सकती है। फसलों में उपयोग किये जाने वाले रसायनों का प्रयोग मुख्यतः तीन तरीकों से किया जा सकता है।

(अ) बुवाई से पूर्व भूमि में मिलाकरः– इस प्रकार के शाकनाशी को फसल की बुवाई के पहले खेत में अंतिम जुताई करते समय छिड़काव कर भूमि में मिला देते हैं जो कि खरपतवारों को उगने से रोकते हैं या कुछ उग भी जाते हैं तो शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। इन शाकनाशियों का प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि खेत में पर्याप्त नमी हो। जैसे–फ्लूक्लोरेलिन

(ब) अंकुरण पूर्व एवं बुवाई के तुरंत बाद छिड़कावः– इस तरह के शाकनाशी बुवाई के तुरंत बाद (24–36 घंटे) किन्तु फसल व खरपतवार के अंकुरण के पहले खेत में छिड़क दिये जाते हैं । चूंकि खरपतवार फसल से पहले उग जाते हैं अतः यह उगते हुए या उगे हुए खरपतवारों को नष्ट कर देते हैं। तथा अन्य खरपतवारों को उगने से रोकते हैं अतएव जहां तक हो सके इनका प्रयोग फसल बोने के 3 दिन के भीतर कर देना चाहिए। जैसे–पेन्डीमेथालिन, एलाक्लोर व एट्राजीन।

(स) अंकुरण पश्चात खडी फसल में छिड़कावः– इस प्रकार के शाकनाशी रसायनों का प्रयोग बुवाई के 25–30 दिन बाद खड़ी फसल में खरपतवार नियंत्रण के लिए किया जाता है। जैसे 2,4–डी , क्लोडिनाफॉप, फेनाक्साप्राप, सल्फोसल्फ्यूरॉन, क्विजालोफॉप, इमाजिथापायर इत्यादि खरपतवारनाशी रसायनों का विस्तृत विवरण (सारणी–5 व 6) में दिया गया है।

सारणी 5. रबी के फसलों में प्रमुख शाकनाशी रसायन

फसल	शाकनाशी दवा	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्रा. अथवा मिली/हे.)	व्यापारी मात्रा (ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय	खरपतवारों के प्रकार
गेहूं	2, 4– डी इथाइल इस्टर 38% (ई. सी.)	500–1000	1500–3000	बुवाई के 30–35 दिन बाद	चौड़ी पत्ती
	678	796	1750	बुवाई के तुरंत बाद	समस्त खरपतवार
	सल्फोसल्फ्युरान 75% + मेटासल्फोसल्फ्युरान 5% डब्लू.जी (टोटल)	32	40	बुवाई के 25–30 दिन बाद	संकरी एवं चौडी पत्ती
	मिजोसल्फ्युरान 3% + आइडोसल्फ्युरान मिथाइल सोडियम 0.6% डब्लू.डी.जी (अटलांटिस)	12+ 2-4	400	बुवाई के 25–30 दिन बाद	संकरी एवं चौडी पत्ती
	क्लोडिनोफॉप प्रोपारजाईल 15% + मेटासल्फोसल्फ्युरान मिथाइल 1% डब्लू.पी. (वेस्टा)	60+4	400	बुवाई के 25–30 दिन बाद	संकरी एवं चौडी पत्ती
दलहनी फसलें					
चना, मसूर,	पेंडीमेथालिन (30 ई.सी.)	750–1000	2500–3325	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	मेट्रीब्युजिन (70% डब्लू.पी .)	770–1162	1100–1660	बुवाई के पूर्व	समस्त खरतपवार
	क्विजालोफॉप इथाईल (5% ई.सी.)	40–50	800–1000	बुवाई के 15–30 दिन बाद	संकरी पत्ती
	ऑक्सीफ्लोरफेन (23.5% ई.सी.)	100–150	425–640	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	क्लोडिनोफॉप प्रोपारजाईल 15%	60	400	बुवाई के 25–30 दिन बाद	संकरी पत्ती
मटर, राजमा	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	750–1000	2500–3325	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	क्विजालोफॉप इथाईल (5% ई.सी.)	40–50	800–1000	बुवाई के 15–30 दिन बाद	संकरी पत्ती
	ऑक्सीफ्लोरफेन (23.5% ई.सी.)	100–750	425–640	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	इमाजेथापायर (10% एस.एल.)	100	1000	बुवाई के 20–25 दिन बाद	संकरी एवं चौडी पत्ती
	क्लोडिनोफॉप प्रोपारजाईल 15%	60	400	बुवाई के 25–30 दिन बाद	संकरी पत्ती
तिलहनी फसलें					
सरसों	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	750–1000	3325	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	क्विजालोफॉप इथाईल (5% ई.सी.)	40–50	800–1000	बुवाई के 15–30 दिन बाद	संकरी पत्ती
	ऑक्साडाइजोन (25% ई.सी.)	500	2000	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार

फसल	शाकनाशी दवा	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्रा. अथवा मिली/हे.)	व्यापारी मात्रा (ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय	खरपतवारों के प्रकार
सूरजमुखी	फ्लूक्लोरेलिन (45% ई.सी.)	1000	2220	बुवाई के पूर्व	समस्त खरतपवार
	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	750–1000	3325	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	एलाक्लोर (50% ई.सी.)	700–200	2000–4000	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	750–1000	2500–3325	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	क्विजालोफॉप इथाईल (5% ई.सी.)	40–50	800–1000	बुवाई के 15–30 दिन बाद	संकरी पत्ती
	ऑक्सीफ्लोरफेन (23.5% ई.सी.)	250	425–640	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	क्लोडिनोफॉप प्रोपारजाईल 15%	60	400	बुवाई के 25–30 दिन बाद	संकरी पत्ती
कुसुम	क्विजालोफॉप इथाईल (5% ई.सी.)	40–50	800–1000	बुवाई के 15–30 दिन बाद	संकरी सकरी
	फ्लूक्लोरेलिन (45% ई.सी.)	1000–1500	2220–3330	बुवाई के पूर्व	समस्त खरतपवार
	एलाक्लोर (50% ई.सी.)	1000–1500	2000–3000	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	ट्राईफ्लूरेलिन (48% ई.सी.)	1000–1500	2080–3125	बुवाई के पूर्व	समस्त खरतपवार
अलसी	आइसोंप्रोट्यूरान 75% (डब्लू.पी.)	750–1000	1000–1250	बुवाई के 30–35 दिन बाद	मुख्य रूप संकरी पत्ती वाले खरपतवार एवं कुछ चौडी पत्ती वाले खरपतवार
	2, 4– डी सोडियम लवण 80% (डब्लयू.पी.)	500	625	बुवाई के 30–35 दिन बाद	चौडी पत्ती
	फ्लूक्लोरेलिन (45ः ई.सी.)	750	1660	बुवाई के पूर्व	सकरी एवं चौडी पत्ती
	क्लोडिनोफॉप प्रोपारजाईल (15% डब्लयू. पी.)	80	530	बुवाई के 30–35 दिन बाद	संकरी सकरी
	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	750–1000	2500–3325	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	ऑक्साडाइजोन (25% ई.सी.)	500	2000	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार

सारणी 6. रबी के सब्जियों में प्रमुख शाकनाशी रसायन

सब्जियां	शाकनाशी दवा	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्रा. अथवा मिली/हे.)	व्यापारी मात्रा (ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय	खरपतवारों के प्रकार
भिण्डी	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	500–1000	1500–3000	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	फलूजीफॉप ब्यूटिल(13.4% ई.सी)	250	1800–1850	बुवाई के 20–25 दिन बाद	मुख्य रूप संकरी पत्ती वाले खरपतवार
	ऑक्सीफ्लोरफेन (23.5 % ई.सी.)	150	425–640	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	मेटोलाक्लोर (50 % ई.सी.)	750	1500	बुवाई के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
धनिया	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	1000–1500	3333–5000	बुवाई के तुरंत बाद (0–8) दिन	समस्त खरतपवार
	क्विजालोफॉप इथाईल (5% ई.सी.)	40–50	800–1000	बुवाई के 20–25 दिन बाद	संकरी सकरी
प्याज एवं लहसुन	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	1000–1500	3333–5000	राईजोम लगने के तुरंत बाद (0–8) दिन	समस्त खरतपवार
	क्विजालोफॉप इथाईल (5% ई.सी.)	40–50	800–1000	राईजोम लगने के 20–25 दिन बाद	संकरी
	ऑक्साडाइजोन (25% ई.सी.)	500	2000	राईजोम लगने के तुरंत बाद (0–3) दिन	समस्त खरतपवार
	हैलॉक्सीफॉपयूटिल(13.4% ई.सी)	100		राईजोम लगने के बाद (10–15) दिन	संकरी एवं सेज
आलु	ब्यूटाक्लोर (5% ई.सी.)	750–1000	1500–2000	कंद लगने के 0 से 4 दिन बाद	समस्त खरतपवार
	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	1000–1500	3333–5000	कंद लगने के तुरंत बाद (0–8) दिन	समस्त खरतपवार
	मेट्रीव्यूजिन (70% डब्ल्यू.पी.)	525	750	कंद लगने के 0 से 3 दिन या 15 से 20 दिन बाद	चौडी पत्ती एवं सेजेस
टमाटर	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	1000–1500	3333–5000	पौधा लगने के तुरंत बाद (0–8) दिन	समस्त खरतपवार
	मेट्रीव्यूजिन (70% डब्ल्यू.पी.)	525	750	पौधा लगने से पहले अथवा सुरक्षा करते हुए स्प्रे	सकरी एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	क्विजालोफॉप इथाईल (5% ई.सी.)	40–50	800–1000	पौधा लगने के 20–25 दिन बाद	संकरी पत्ती
फूलगोभी एवं पत्ता गोभी	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	1000–1500	3333–5000	रोपा के तुरंत बाद (0–3) दिन	संकरी एवं चौडी पत्ती
	ऑक्सीफ्लोरफेन (23.5 % ई.सी.)	200–300	850–1277	रोपा के पहले	संकरी एवं चौडी पत्ती

सब्जियां	शाकनाशी दवा	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्रा. अथवा मिली/हे.)	व्यापारी मात्रा (ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय	खरपतवारों के प्रकार
मिर्च,बैगन एवं मेथी	पेंडीमेथालिन (30% ई.सी.)	1000–1500	3333–5000	पौधा लगने के तुरंत बाद (0–8) दिन	समस्त खरपतवार
	क्विजालोफॉप इथाईल (5% ई.सी.)	40–50	800–1000	पौधा लगने के 20–25 दिन बाद	संकरी पत्ती
	ऑक्साडाइजोन (25% ई.सी.)	500	2000	पौधा लगने के 20–25 दिन बाद	संकरी एवं चौडी पत्ती
कुकुरबिट्स (परवल, कुदरू, करेला, ककड़ी, कद्दू, तरोई, डोढका एवं लौकी)	ऑक्सीफ्लोरफेन (23.5 % ई.सी.)	200–300	850–1277	बीज या पौधा लगने के 0–5 दिन बाद	समस्त खरपतवार (पौधे या बीज के सीधे सम्पर्क में ना डाले)
	मेट्रीव्यूजिन (70% डब्ल्यू.पी.)	525	750	बीज या पौधा लगने के 0–5 दिन बाद	समस्त खरपतवार

खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग में सावधानियां:–

- रसायन की जिस फसल के लिए अनुशंसा की गई है उसी में प्रयोग करें। शाकनाशी रसायनों की अनुशंसित मात्रा को सही समय पर छिड़काव करें।
- छिड़काव के समय खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक है एवं पानी की उचित मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।
- छिड़काव यंत्र को छिड़कने से पहले व बाद में अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिए। तथा स्प्रेयर की कार्यक्षमता को जांच प्रयोग में लेना चाहिये। छिड़काव के लिये हमेशा फ्लैट फैन नोजल का ही प्रयोग करें।
- शाकनाशी एवं पानी के घोल को छानकर छिड़काव करना चाहिये।
- छिड़काव करते समय विशेष पोशाक दस्ताने तथा चश्मे आदि का प्रयोग करना चाहिये ताकि रसायन शरीर पर न पड़े।
- छिड़काव के समय मौसम साफ तथा हवा की गति तेज नहीं होनी चाहिये, छिड़काव वायु गति की दिशा को ध्यान में रखकर करना चाहिए।
- रसायन के खाली डिब्बों को नष्ट करके जमीन में दबा देना चाहिये।
- शाकनाशी रसायन को खाने की चीजों से दूर रखना चाहिये।
- शाकनाशी के छिड़काव के बाद शरीर को अच्छी तरह से धो लेना चाहिये। छिड़काव करते समय खाने की वस्तुओं जैसे तंबाकू, गुटका आदि का सेवन नहीं करना चाहिये।

> भारतीय सभ्यता की अविरत धारा प्रमुख रूप से हिंदी भाषा से ही जीवांत तथा सुरक्षित रह पाई है।

अमित शाह, गृह मंत्री

कदन्न फसलों में खरपतवार प्रबन्धनः क्यों और कैसे?

स्तुति मौर्या, निधि वर्मा, विश्वजीत सिंह एवं दिनेश साह
बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बाँदा (उ.प्र.)

आज पोषक तत्वों से भरपूर मोटे अनाजों की खूबियों के बारे में पूरी दुनिया जान चुकी है, चाहे कुपोषण के खिलाफ लड़ाई हो या फिर किसानों को मोटे अनाजों की खेती के प्रति जागरूक करना हो इस काम में अब स्वंय भारत सरकार आगे आई है। ये मुहिम इसलिये भी तेज हो रही है, क्योंकि देश में अभी भी कुपोषण की समस्या पूरी तरह से खत्म नही हुई है। ऐसे में लोगों को मोटे अनाजों का सेवन करने और किसानों को मोटे अनाजों की खेती करने के लिये प्रेरित किया जा रहा है।

कदन्न की खेती वर्षा आधारित कृषि का आधार है जो कि ग्रामीण जनसंख्या के करीब 50 प्रतिशत लोगों के लिये जीविका का साधन है। जितने भी हमारे सूक्ष्म खनिज पोषक तत्व हैं, जैसे–प्रोटीन, रेशे, कैल्शियम, लोहा, जिंक तथा खनिज ये प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

कदन्न में सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने के लिये जैव संर्वधन (सूक्ष्म पोषक तत्वों से युक्त फसल किस्मों का विकास करना) के वर्तमान संर्वधन प्रयासों से अच्छे परिणाम आने शुरू हो गये है। मोटे अनाज में मक्का *(जिया मेज),* ज्वार *(सोरघम बाइकोलर),* जई *(एवेना सैटिवा),* जौ *(होर्डियम बुलगेयर),* बाजरा *(पेनिसेटम ग्लोकम)* शामिल है और अन्य छोटे मिलेट्स जैसे कि फिंगर मिलेट, कोदो मिलेट, प्रोसो मिलेट, फॉक्सटेल मिलेट और बर्नयार्ड मिलेट, ब्राउन टॉप मिलेट, लिटिल मिलेट इत्यादि सम्मिलित हैं। छोटे मोटे अनाज फास्फोरस और आयरन के अच्छे स्त्रोत हैं। इन पोषक गुणों को देखते हुये, इन मोटे अनाजों को हाल ही में "न्यूट्रीसीरियल्स" के रूप में नामित किया गया है।

मिलेट्स परिदृश्यः– विश्व व भारत में

भारत विश्व में कदन्न फसलों का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। भारत में लगभग 12.45 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्रफल पर कदन्न की खेती की जा रही है। जिसका उत्पादन लगभग 1247 किग्रा0/हैक्टेयर आ रही है। हमारे राज्य जैसे– राजस्थान, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, केरल, मध्यप्रदेश, हरियाणा तथा गुजरात आदि कदन्न फसलों के उत्पादन के लिए विख्यात है। भारत ने संयुक्त राष्ट्र को 2018 में मिलेट्स का अन्तराष्ट्रीय वर्ष घोषित करने का अनुरोध किया था, जो कि 2023 को पूर्णतया अन्तर्राष्ट्रीय पोषक अनाज वर्ष घोषित कर दिया गया।

भारत में मिलेट्स का उत्पादन–

कृषि मंत्रालय से पूछे गये एक सवाल पर केन्द्रीय कृषि मंत्री ने संसद के बजट सत्र के दौरान बताया था कि देशभर में मिलेट्स यानी मोटे अनाज का उत्पादन बढ़ रहा है। आकड़ों के मुताबिक 20 से अधिक राज्यों में 2018–19 में मोटे अनाज बाजरा सहित 43059.45 टन पैदा हुआ है। 2019–20 में इसकी मात्रा 47798.37 टन रही जबकि 2020–21 में 513233.8 टन मोटे अनाज का उत्पादन हुआ। इस आधार पर कहा जा सकता है कि भारत में मिलेट्स की लोकप्रियता बढ़ती जा रही है।

क्यो महत्वपूर्ण है कदन्न फसलेः

1. यह ज्यादा सूक्ष्म पोषक तत्व प्रदान करने के लिये दीर्घावधि कार्यनीति है। सूक्ष्म पोषक तत्व कुपोषण को दूर करने के लिये एक शक्तिशाली साधन है।
2. ये आहार ऊर्जा, विटामिन सूक्ष्म पोषक तत्व (विशेष रूप से लौह और जस्ता जैसे सूक्ष्मपोषक तत्व) अघुलनशील आहार और एंटीऑक्सीडेण्ट गुणों वाले फाइटोकेमिकल्स (2000) से भरपूर है।
3. रागी कैल्सियम का सबसे बड़ा स्त्रोत है। (300 से 350 मिलीग्राम/100ग्राम अनाज)।
4. कदन्न ऐसे यौगिकों से समृद्ध है जो इस्केमिक स्ट्रोक, हृदय रोग, कैंसर, मोटापा और टाइप 2 मधुमेह जैसी कई पुरानी बीमारी के खिलाफ मदद करती है। (जोन्स एटऑल 2000, जोन्स 2006)
5. अधिक संतुलित अमीनो एसिड प्रोफाइल (मेथियोनिन सिस्टीन और लाइसिन का अच्छा स्त्रोत) के साथ प्रोटीन के अपने उच्च स्तर के कारण गेंहू एवं चावल जैसे प्रमुख अनाजों से पौष्टिक रूप से तुलनात्मक बेहतर है।

कदन्न फसलों के प्रमुख खरपतवार एवं उसका नियंत्रणः

खरपतवार वे अवांछित पौधें हैं जो किसी स्थान पर बिना बोये उगते हैं और जिनकी उपस्थिति किसान को लाभ की तुलना में हानि पहुंचाती है। खरपतवार मुख्य फसल के साथ प्रकाश, स्थान और पोषक तत्वों इत्यादि के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। मिलेट की अच्छी पैदावार के लिए समय से खरपतवार नियंत्रण अति आवश्यक है अन्यथा उपज में बहुत अधिक नुकसान पहुँचता है। निराई–गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण के साथ ही पौधो की जड़ो में ऑक्सीजन का संचार होता है जिससे वह दूर तक फ़ैल कर भोज्य पदार्थ एकत्र कर पौधो को देती है। खरपतवार व मुख्य फसलों में सभी प्रकार के पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा होती है। जिसके कारण मुख्य

फसलों के पैदवार में हानि होती है। मिलेटस में ये हानिया निम्न है, जो कि ज्वार में 15 से 83% पैदावार में खरपतवार के वजह से कमी आती है। बाजरा में 16 से 94% तथा रागी में 55 से 61%पैदावार में कमी आती है। कदन्न फसलों में मुख्यतः निम्न खरपतवार पाए जाते हैं जैसेः चौलाई, दूब घास, गाजर घास, गुमा, पत्थरचट्टा, हजारदाना इत्यादि। ये खरपतवार कदन्न फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा कर मुख्य फसलो के उत्तरजीविता में कठिनाई उत्पन्न करते हैं ।

समाकलित खरपतवार प्रबन्धन

खरपतवार नियंत्रण की रसायनिक विधियाँ हालांकि अधिक प्रभावी रही है, क्योकि इनके द्वारा खरपतवार को आसानी से नियंत्रण किया जा सकता है। पर रसायनिक विधियो में कमियां होने के कारण समस्या साल दर साल नई होती जा रही है। इसलिये समेकित खरपतवार प्रबन्धन का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। खरपतवार नियंत्रण विधियों का समावेश करते हुये खरपतवारों की संख्या को हानि रहित स्तर के नीचे लाना जिससे कि फसल उत्पादन में कमी ना हो साथ–साथ कोई विशाक्ता तथा उत्पाद पर कोंई संकट न खड़ा हो समाकलित खरपतवार प्रबन्धन कहलाता है। समन्वित खरपतवार प्रबंधन उन समस्त आर्थिक परिस्थिकी तथा विषाक्ता रहित खरपतवार नियन्त्रण विधियों का समावेश है जिससे की खरपतवार घनत्व को हानिरहित स्तर के नीचे लाकर प्राकृतिक संसाधनों की सतत उपयोगिता को बनाये रखना है। यांत्रिक, भौतिक तथा रसायनिक नियन्त्रण का मेल–जोल ही समन्वित खरपतवार प्रबंधन कहलाता है।

यांत्रिक व भौतिक नियंत्रण –

सामान्यता दो निराई–गुड़ाई 15–20 दिवस के अंतराल पर पर्याप्त है। कदन्न फसलों में पहली निराई जमाव के 15 दिन बाद कर देना चाहिए और दूसरी निराई 35–40 दिन बाद करनी चाहिए। कदन्न फसलों में निराई–गुड़ाई हाथ से अथवा हस्त चलित हो या पहिया हो से किया जाता है। परन्तु यह एक मंहगी तथा अधिक श्रम शक्ति चाहने वाली विधि है इस कारण खेती की लागत घटाने के उद्देश्य से रसायनिक विधि उत्तम होती है इसमें समय भी कम लगता है।

रसायनिक नियन्त्रण–

अनिश्चित मौसम की स्तिथि के कारण मानव द्वारा खरपतवार प्रबंधन अतः सस्मन में देरी हो सकती है। अतः कदन्न फसलों की खरपतवार नियन्त्रण रणनीति में रसायनिक खरपतवार नियन्त्रण का स्थान है। श्रम की अनुपलब्धता या हाथ से निराई के लिए श्रम की बहुत अधिक लागत के मामले में रसायनिक नियन्त्रण या शाकनाशी का उपयोग फायदेमंद है।

सही शाकनाशियों के प्रयोग से फसलों में खरपतवार की समस्या को कम किया जा सकता है। शाकनाशियों के प्रयोग के लिए रसायनों के प्रयोग के बारे में कुछ ज्ञान की आवश्यकता होती है। शाकनाशियों के अनुचित प्रयोग से फसल का पूर्ण नुकसान भी हो सकता है। इसके लिए निम्न सुझाव हैं–

कदन्न	शाकनाशी	मात्रा (कि.ग्रा./हे.)	उपयोग का समय	खरपतवार नियंत्रण
बाजरा	एट्राजिन या प्रोपाजिन	0.5+1HW	PE/POE+ 30 DAS	ब्राडस्पेक्ट्रम
	2–4–डी	0.5-0.75	POE	चौड़ी पत्ती के खरपतवार
	पेंडिमेथिलीन	1	PRE	समस्त खरपतवार
	ऑक्साडायजोन	1	PRE	समस्त खरपतवार
रागी	आइसोप्रोटयूरान	0.50-0.75	PRE	घास कुल
	ऑक्साडायजोन	1	PRE	समस्त खरपतवार
	ब्यूटाक्लोर	0.75	PRE	समस्त खरपतवार
कोदो	आइसोप्रोटयूरान+ इंटर कल्टीवेशन	0.50+1+1	PRE+ 20 DAS+ 40 DAS	ब्राडस्पेक्ट्रम
चेना	एट्राजिन	0.28-0.56	PRE	समस्त खरपतवार
	प्रोपाजिन	0.28-0.56	PRE	समस्त खरपतवार

किसानों को कदन्न फसलों में खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए प्रयोग करने से पहले शाकनाशियों के उचित उपयोग और अनुपयोग को समझने की आवश्यकता है। समय पर खेती, फसल चक्र और शाकनाशियों के प्रयोग से संतोषजनक नियन्त्रण प्राप्त किया जा सकता है। हालांकि शाकनाशियों के संयोजन या निदाई और शाकनाशी नियंत्रण विधियों के संयोजन का उपयोग करके कशल और लागत प्रभावी खरपतवार नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है।

जल कृषि में जलीय खरपतवार एवं शैवाल का नियंत्रण : उन्नत मत्स्य पालन की आधारशिला

मुकेश कुमार[1], सुधीर दास[1] एवं अनुपमा कुमारी[2]
[1] कृषि विज्ञान क्रेंद्र, सुखेत, मधुबनी (बिहार) एवं डॉ राजेन्द्र प्रसाद क्रेन्दीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर (बिहार)
[2] डॉ राजेन्द्र प्रसाद क्रेन्दीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर (बिहार)

भूमिका

जलीय पौधे एवं जलीय खरपतवार, जल कृषि के लिए एक आवश्यक अंग है, यदि नियंत्रित मात्रा में तालाब में उपलब्ध हो तो पानी की गुणवत्ता और उसके उत्पादन क्षमता को वृद्धि करने में सहायक होते हैं। किंतु यदि इनकी अत्यधिक बढ़वार हो जाती है, जल कृषि की उत्पादकता एवं पानी की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। आवश्यकता से अधिक जलीय खरपतवार मछलियों से ऑक्सीजन, पोषक तत्वों, सूर्यप्रकाश आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं जिससे मछलियों की वृद्धि दर प्रभावित होती है। साथ ही यह मछलियों में बीमारी करने वाले परजीवी आश्रय स्थल का भी काम करने लगते हैं, जिसे मछलियों के बीमार होने की संभावना बढ़ जाती है। अंतः हमें जलीय खरपतवार खरपतवार नियंत्रण करना चाहिए, जिससे जल कृषि की उत्पादकता और गुणवत्ता प्रभावित नहीं हो।

जलीय खरपतवार के विभिन्न प्रकारः

वनस्पति विज्ञान के अनुसार जलीय खरपतवारों को शैवाल एवं पुष्पीय पौधों में विभाजित किया गया है।

जलीय शैवाल बहुत ही साधारण संरचना वाले होते हैं तथा इनमे पत्तिया एवं तने जैसी संरचना नहीं होती है, कुछ जलीय शैवाल पुष्पीय पौधों की तरह दिखाई देते हैं। जलीय पुष्पीय खरपतवारों को सामान्यता निम्न प्रकार में विभक्त किया जाता है।

क. उत्पलक खरपतवार,

ख. जलमग्न खरपतवार,

ग. सीमांत खरपतवार,

घ. उभरते हुए खरपतवार।

जलीय शैवालो एवं खरपतवार को निम्नलिखित एक से अधिक विधियों का प्रयोग कर समाप्त किया जा सकता है।

रोकथाम के उपायः

1. **मानव शक्ति आधारित विधि–** पानी पर तैरने वाले जलीय खरपतवारों को हाथ से हटाया जाता है, तथा उभरते हुए खरपतवारों को हंसीया या चाकू की सहायता से काटकर बाहर निकाला जाता है। यह विधि छोटे तालाबों, तथा नर्सरी तालाबों के लिए बहुत ही उपयुक्त है। इस विधि में किसी रसायन का प्रयोग नहीं किया जाता, मछलियों के छोटे बच्चों के रखने वाले हो तो तालाबों के लिए यह विधि उपयुक्त है।
2. **जाल द्वारा–**जाल की सहायता से जलीय खरपतवारों को पहले इक्कठा किया जाता है, फिर बाहर निकाला जाता है। समय–समय पर जाल चला कर तैरने वाले एवं जलमग्न खरपतवारों को हटाया जाता है।
3. **जैविक विधि द्वारा–**यह पद्धति सामाजिक और पर्यावरण दृष्टि से अत्यंत उपयुक्त है। कुछ मछलियां यथा ग्रासकार्प जलीय खरपतवारो को खाकर समाप्त करने में सहायता करती है। यह जलीय खरपतवारों की अनेक प्रजातियों को समाप्त करने में सहायक होती है, एक हैक्टेयर के जल क्षेत्र के लिए सौ ग्राम आकार की 1500 ग्रासकार्प मछलियों का उपयोग करना चाहिए। बतख जलीय खरपतवार को खाकर नष्ट करते हैं, 400 से 500 प्रति हैक्टेयर की दर से तालाब में संचयन करना चाहिए।
4. **यांत्रिक विधि–**इस पद्धति में मशीनों की सहायता से जलीय खरपतवारों को हटाया जाता है। यह बड़े जलाशयों के लिए उपयुक्त विधि है।
5. **रसायनिक विधि–** इस पद्धति में विभिन्न रसायनों का उपयोग कर जलीय खरपतवारों को नष्ट किया जाता है। हमें उन्ही रसायनो का उपयोग करना चाहिए जो कि मनुष्य, जलीय जीवो एवं पर्यावरण के हिसाब से सुरक्षित हो। इन रसायनों का प्रयोग करने के पहले हमें विशेषज्ञ की सहायता लेनी चाहिए। साथ ही जब खरपतवार अपनी प्रारंभिक अवस्था में हो उस समय इन रसायनों का प्रयोग उपयुक्त माना जाता है।

क.सं.	खरपतवार का प्रकार	खरपतवारनाशी	मात्रा	उपचार का तरीका
1	जलकुंभी	2,4–डी सोडियम साल्ट, 2,4–डी एमीन साल्ट, 2,4–डीइस्टर (किसी एक प्रयोग करें)	0.5–1.0 कि.ग्रा./हे.	पर्ण छिड़काव
2	आईपोमिया	2,4–डी सोडियम साल्ट, 2,4–डी एमीन साल्ट, 2,4–डीइस्टर (किसी एक प्रयोग करें)	2–4 कि.ग्रा./हे.	पर्ण छिड़काव
3	क्मल और लिली	2,4–डी सोडियम साल्ट, 2,4–डी एमीन साल्ट, 2,4–डी इस्टर (किसी एक प्रयोग करें)	0.5–1.0 कि.ग्रा./हे.	जड़ प्रक्षेत्र उपचार
4	ओटेलिया	2,4–डी सोडियम साल्ट, 2,4–डी एमीनसाल्ट, 2,4–डीइस्टर (किसी एक प्रयोग करें)	1.0–1.5 कि.ग्रा./हे.	जड़ प्रक्षेत्र उपचार
5	जलीय घास	पैराक्वेट	1.5–2.0 कि.ग्रा./हे.	पर्ण छिड़काव
6	माइक्रोकिस्टिस, अन्य प्लैंकटोनिक और फिलामेंटस शैवाल	कॉपरसल्फेट	शैवाल प्रस्फुटन– 0.1पीपीएम, चारा शैवाल के लिए – 5 पीपीएम	छिड़काव
7	जलमग्न खरपतवार	अमोनिया	5–15 पीपीएम	जड. प्रक्षेत्र उपचार। पानी के स्तंभ में फैलाव
8	नाजस, हाइड्रिला, भेलिसनेरिया	फलोरिडोन	30–50 पीपीबी	जल में छिड़काव

"हिंदी राष्ट्रीयता के मूल को सींचती है और उसे दृढ़ करती है।"

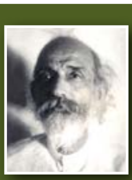

पुरूषोत्तम दास टंडन

धान की सीधी बुवाई में खरपतवार नियंत्रण

विनोद कुमार[1] एवं सतबीर सिंह पूनिया[2]
[1] कृषि विज्ञान केन्द्र, फरीदाबाद (हरियाणा)
[2] चौधरीचरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

साल 2020 में हरियाणा में 35000 एकड व पंजाब में लगभग 13 लाख एकड पर धान की सीधी बुआई की गई। इस विधि द्वारा पानी व श्रम की बचत होती है। सीधी बुआई भूमिगत जल को रिचार्ज करने में भी सहायक सिद्ध होती है। धान की सीधी बुआई वाली फसल रोपाई करके लगाई गई धान की फसल की तुलना में 7 से 10 दिन पहले पक कर तैयार हो जाती है। जिस कारण धान की पराली संभालने व कनक की बुआई करने के लिए अधिक समय मिल जाता है। नई तकनीक में पहला पानी बुआई के लगभग 21 दिन बाद लगाया जाता है जिसके कई फायदे हैं जैसे कि

- पानी की बचत।
- खरपतवारो की कम समस्या।
- जड़े गहरी चले जाने के कारण लोह तत्व की समस्या बहुत कम आती है।
- राज्य का 87 प्रतिशत इलाका बुआई के अनुकूल है।

धान की सीधी बुआई के खरपतवार

खरपतवारों की रोकथाम:

सीधी बुआई के तुरंत बाद स्टॉम्प 30 ई.सी. (1.3 लीटर) को 200 लीटर पानी के हिसाब से प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। अगर बुआई के लिए लक्की सीड ड्रील का उपयोग कर रहे हों तो खरपतवारनाशी का छिड़काव बुआई के साथ संभव है। खरपतवारनाशी का छिड़काव सुबह व शाम के समय करें। स्टॉम्प खरपतवारनाशी के प्रयोग से घास जाति व कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है, इसके बाद अगर आवश्यकता पड़े तो गुडाई द्वारा व नीचे दी गई तालिका में से उपयुक्त खरपतवारनाशी के प्रयोग द्वारा खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

तालिका 1. धान की सीधी बुआई में खरपतवार नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशक

क्रमांक	खरपतवारनाशक प्रति एकड़	मात्रा/एकड़	खरपतवारों की रोकथाम
1.	बिस्पाइरीबेक सोडियम	25 ग्रा.	सांवक, डीला
2.	राइसस्टार 6.7ई.सी (फेनोक्साप्रोप पी ईथाइल)	100 ग्रा.	चीनी घास, चिड़िया घास, तकडी घास
3.	अलमिक्स 20 डब्ल्यूपी (क्लोरिम्यूरॉन ईथाइल़ मेटसल्फ्यूरॉन मिथाइल)	8 ग्राम	चौड़ीपत्ती वाले खरपतवार, गांठवाला डीला
4.	विवाया 6 ओडी (साइफलॉफ–ब्यूटाइल 5.1 प्रतिशत पेनॉक्ससॉलम 1.02 प्रतिशत)	900 मि.ली.	सांवक, डीला, चीनी घास, चौड़ीपत्ती वाले खरपतवार,
5.	कौंसिल एक्टिव (ट्राइफामोन 20 प्रतिशत एथोक्सीसल्फ्यूरॉन 10 प्रतिशत डब्ल्यूजी)	90 ग्राम	सांवक, चीनी घास, डीला, चौड़ीपत्ती वाले खरपतवार

ऊपर दिए गए किसी भी खरपतवारनाशक का प्रयोग सीधी बुवाई के 15 से 20 दिन बाद जब खरपतवार दो से चार पत्तियों की अवस्था में हो तो 150 लीटर पानी के हिसाब से प्रति एकड़ में छिड़काव कर सकते हैं।

नोट: फसल के अंत में अगर खरपतवार उग जाते हैं तो इससे पैदावार पर अधिक असर नहीं पड़ता है, परंतु इन खरपतवारों को बीज बनने से पहले खेत से बाहर निकाल देना चाहिए ताकि अगली फसलों में खरपतवारों की समस्या को कम किया जा सके।

धान की सीधी बुआई के लिए आरजी स्प्रेसिस्टम

धान की सीधी बिजाई के तुरंत बाद खरपतवारो की रोकथाम के लिए उगने से पहले मारने वाले उद्‌मन पूर्व (प्री. एमर्जेंस) खरतपतवारनाशी का छिड़काव करें। जीरो टिल ड्रिल या हैप्पी सीडर वाले बक्से की पिस्टल की सेटिंग व आर.जी. स्प्रे सिस्टम लगया जा सकता है।

जीरो टिलड्रिल या हैप्पीसीडर के साथ स्प्रे सिस्टम लगाने की विधि –

1. ट्रेक्टर के सामने 200 लीटर कैपेसिटी वाला टैंक की गोलाई के हिसाब से तैयार करके ट्रेक्टर के सामने फिट किया जा सकता है।
2. डियाफ्रैगम पंप (8 लीटर प्रति लीटर, 200 पी. इस. आई. 12 वॉल्टडी. सी.) को पानी वाले ड्रम पर फिट करके ट्रेक्टर वाली बैटरी के साथ जोड़ दे।
3. दोनों पंप के ऊपर आउटलेट व इनलेट के निशान देख कर इनलेट वाली साइड 5–5 फुट पाइप लगा दे व आउटलेट वाली साइडरंतनतज के हिसाब से पाइप लगादे।
4. 6 कटवाली नोजल को 50 सेंटीमीटर की दुरीपर, टीपलंगपर फिटकर दे व इस बूम को जीरो टिल ड्रिल या हैप्पीसीडर के साथ फिट कर दे।
5. दोनों पंप के साथ 3–3 नोजल जोड़ दे।
6. स्प्रे सिस्टम व नोजल को सही ढंग से चलने के लिए दोनों पंपों के इनलेट पर फिल्टर लगा दे।

चीनी घास

मकड़ा

मोथा

लेप्टोक्लोआ

चौलाई

सांवक

> हिंदी भाषा एक ऐसी सार्वजनिक भाषा है, जिसे बिना भेद-भाव प्रत्येक भारतीय ग्रहण कर सकता है।

मदन मोहन मालवीय

संरक्षित कृषि का खरपतवार बीज बैंक में प्रभाव एवं कम करने के उपाय

विकास सिंह, वी.के चौधरी, मुनि प्रताप साहू, नरेन्द्र कुमार, अल्पना कुम्हरे और सोनाली सिंह
भा.कृ.अनु.प.–खरपरवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

संरक्षित कृषि की शुरुआत वर्ष 1930 में अमेरिका से हुई। संरक्षित कृषि में खेतो की न्यूनतम जुताई, स्थायी मृदा आच्छादन और फसल चक्र को सम्मिलित किया गया है। संरक्षित कृषि को दुनिया के कई हिस्सों में लगातार बढ़ती पैदावार के लिए एक प्रभावी कृषि पद्धति के रूप में पहचाना गया है। संरक्षित कृषि को अपनाने वाले कृषको को कई प्रबंधकीय परिवर्तनों का सामना करना पड़ रहा है, जिसमे खरपतवार नियंत्रण को सबसे चुनौतीपूर्ण माना गया है। खरपतवार आक्रामकता और फसल की उपज में विपरीत संबंध होता है। इसलिए संरक्षित कृषि में उचित खरपतवार प्रबंधन, अच्छी एवं गुणवत्तायुक्त प्राप्त करने के लिए अति आवश्यक है। संरक्षित कृषि में खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए प्रभावी उपायों की जानकारी होना महत्वपूर्ण है।

खरपतवार, संरक्षित खेती में फसल की पैदावार को प्रभावित करने वाली एक प्रमुख बाधा है। खरपतवार के प्रकोप की भविष्यवाणी करने के लिए खरपतवार बीज बैंक विश्लेषण कृषि प्रणाली की स्थिरता का आकलन करने के लिए एक महत्वपूर्ण पद्धति हो सकती है। संरक्षित कृषि को अपनाकर नत्रजन निक्षालन, मृदा कटाव को कम और अत्यधिक ईंधन की खपत के कारण होने वाले कृषि प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

खरपतवार बीज बैंक क्या है ?

खरपतवार बीज बैंक, मृदा में खरपतवारों के बीजों का भंडार स्रोत है, जो खरपतवारों की अलग–अलग प्रजातियों की संगठन को निर्धारित करता है। बीज बैंक खरपतवारों का सबसे महत्वपूर्ण स्त्रोत है और खरपतवारों के प्रसार व आक्रामकता निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। खेतो में खरपतवारों की संख्या सीधे उनके बीज बैंक से प्रभावित होती है। बीज बैंक, खरपतवारों के प्रकोप और प्रबंधकीय उपायों, खरपतवारों के बीज उत्पादन, फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा का अनुमान और फसल की उपज हानि की भविष्यवाणी करने के लिए किया जा सकता है।

जुताई का खरपतवार बीज बैंक में प्रभाव

मृदा प्रोफाइल में बीजों का वितरण तय करेगा कि कौन से बीज संभावित फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा करेंगे। जुताई मृदा प्रोफाइल में बीजों का पुनर्वितरण का कार्य करती है। शून्य जुताई, मृदा में बीज को बहुत धीमी प्रक्रियाओं (दरारें, जीव, मृदा प्रसार एवं संकुचन) के माध्यम से मृदा की ऊपरी परत से निचली परत में जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप मृदा के 5 सें.मी. परत में खरपतवार के बीज (60–90%) जमा हो जाते है। मिश्रा एवं उनके सहयोगियों (2022) ने बताया, मृदा की ऊपरी सतह (0–15 सें.मी.) में लगभग 72% मोथा, 62% सकरी पत्ती वाले और 64% चौडी पत्ती वाले खरपतवारों के बीज पाए जाते है। सामान्य जुताई करने से बीजों का वितरण मृदा के सभी परतों में सामान्य रूप से होता है। जुताई प्रक्रियाओं में परिवर्तन करके बीज वितरण को कम किया जा सकता है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव खरपतवार अंकुरण और उनकी संख्या पर पड़ता है। जुताई बीज अंकुरण के लिए भौतिक और रासायनिक रूप से बेहतर वातावरण प्रदान करती है। जुताई उन खरपतवारों के अंकुरण में सहयोग प्रदान करती है, जिनके लिए कम प्रकाश, तापमान में उतार–चढ़ाव और उच्च नाइट्रेट सांद्रता की, निष्क्रियता/सुषुप्ता को तोड़ने की आवश्यकता होती है। शून्य जुताई करने से खरपतवारों के बीज मृदा की ऊपरी परत में केंद्रित होते रहते हैं, शून्य जुताई वाले खेतो में खरपतवारों की संख्या सामान्य जुताई वाले खेतो की तुलना में अधिक होती है।

मिश्रा एवं उनके सहयोगियों (2022) द्वारा धान–गेंहू–मूंग फसलचक्र में बताया गया कि यदि शून्य जुताई वाले खेतों में धान की सीधी बुवाई करते है तो जुताई वाले खेतों की तुलना में मोथा का 62% बीज, साँवा (जंगली धान) का 82–90% बीज और कुल खरपतवारों का 81–83% बीज कम अंकुरित होते है। लेकिन गेंहू में गेंहूसा और मकोय का प्रकोप बढ़ने लगता है। शून्य जुते खेतों में धान और गेहू की बुवाई करने से जंगली पालक *(ट्राईएंथेमा पोर्चुलाकस्ट्रम)* के बीज बैंक में 95% की कमी और कुल खरपतवारों के बीज बैंक में 62% तक की कमी देखी गई है।

फसल अवशेष का खरपतवार बीज बैंक में प्रभाव

प्रकाश बीज अंकुरण में मुख्य कारक के रूप में भाग लेता है और फसल अवशेष मृदा में प्रकाश अवरोधन का कार्य करता है जिसके कारण मृदा की सतह पर अधिकांश खरपतवारों के बीज अंकुरित नहीं हो पाते परिणाम स्वरुप फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा में कमी आती है जिससे फसल वृद्धि अच्छी और फसल उत्पादन में बढ़ोतरी होती है। फसल अवशेष अप्रत्यक्ष

(अ) परंपरागत जुताई

(ब) संरक्षित जुताई

रूप से खरपतवार के विकास को सीमित करके खरपतवार के बीज उत्पादन को कम करते है।

एलीलोपैथिक प्रभाव एक ऐसी घटना है जिसमें एक पौधा के किसी भाग (फूलों, पत्तियों, तनों या जड़ों) या पौध अवशेषों के सड़ने/विघटन से विशेष प्रकार के जैव रसायन का उत्सर्जन होता है जिसे एलीलोरसायन कहते है। एलीलो रसायन स्वयं या अन्य पौधों की वृद्धि को सकारात्मक या नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। लिब्मन और डेविस (2000) में बताया कि एलीलोपैथिक घटना से निकलने वाले एलीलोरसायन छोटे बीजों को अधिक प्रभावित करता है। राई, ज्वार, बाजरा, धान, गेहूं, लूसर्न, सूरजमुखी, जई इत्यादि फसलें अपने एलीलोपैथिक प्रभाव से खरपतवार बीज के अंकुरण को कम करते है। मोह्लर और टीस्डले (1993) ने बताया कि यदि खेतों में रसियन वेच *(विसिया विल्लोसा)* और राई (सीकेल अनाज) के अवशेषों को रहने देते है तो बिना अवशेष वाले खेत की तुलना में खरपतवारों की सघनता में 75% कमी हुई है।

फसल चक्र का खरपतवार बीज बैंक में प्रभाव

खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए फसल चक्र सबसे प्रभावी तरीका है। अलग–अलग फसल अलग–अलग खरपतवार समुदाय पर जैविक और अजैविक बाधाओं का एक अनूठा सेट लागू करता है यह कुछ खरपतवारों के विकास को बढ़ावा देगा जबकि दूसरों को बाधित करेगा। फसलों को अदल–बदल कर बोने से फसल बंध्य खरपतवारों की आक्रामकता को कम किया जा सकता है, जिससे एक विशेष प्रकार के खरपतवार को बार–बार अपना जीवन चक्र पूरा करने से रोका जा सकता है।

ब्रार (2002) में बताया कि यदि धान–गेहूं फसलचक्र में गेहूं की जगह कोई और फसल जैसे बरसीम, आलू, सूरजमुखी या सरसों को 2–3 वर्ष के लिए सम्मिलित करते है तो गेंहूसा खरपतवार की संख्या में बहुत अधिक कमी देखी गई है।

संरक्षित कृषि में खरपतवार प्रबंधन कैसे करें ?

पर्यावरणीय समस्याओं और फसल उत्पादन में लाभ को देखते हुए कई देशों के वैज्ञानिकों और किसानों का रुझान संरक्षित कृषि की तरफ बढ़ रहा है। संरक्षित कृषि में खरपतवार प्रबंधन एक बहुत बड़ी चुनौती है, जिस पर एक सटीक और कारगर प्रबंधकीय उपाय हासिल करने की जरूरत है। संरक्षित कृषि पद्धति में खरपतवारों के प्रबंधन के लिए निवारक उपायों के साथ–साथ मृदा आच्छादन के रूप में फसल अवशेष, फसल चक्र, जुताई प्रणाली और फसल बुवाई का समय, प्रतिस्पर्धी फसल की किस्में और शाकनाशियों का प्रयोग किया जाना लाभप्रद है।

खरपतवार निवारक उपाय

बाह्य आक्रमणकारी खरपतवार, भारतीय कृषि में बहुत अधिक नुकसान पहुचाते हैं। इनका एकबार प्रसार होने पर नियंत्रण बहुत कठिन होता है। इनके प्रसार को रोकने के लिए निम्न उपाय किये जा सकते हैंः–

- सबसे पहले आयात वस्तुओं की जांच की जाए कि बाहर से कोई बाह्य आक्रमणकारी खरपतवार बीज तो फसल बीज में मिश्रित नही है। इसके लिए पादप संगरोध अधिनियम का अनुसरण करना चाहिए, जिससे इनके प्रवेश को रोका

(अ) परंपरागत जुताई में गेंहू की फसल

(ब) संरक्षित जुताई में गेंहू की फसल

जा सके।

- जुताई यंत्रों को खरपतवार प्रभावित खेत से दूसरे खेत में ले जाते वक्त उसकी अच्छे से सफाई करनी चाहिए।
- खरपतवारों को उनके वानस्पतिक वृद्धि के समय यांत्रिक, मानवीय व रासायनिक विधियों द्वारा नष्ट करना चाहिए, ताकि खरपतवार बीज उत्पादन को कम किया जा सके। जिससे की मृदा में खरपतवार बीज बैंक में कमी आएगी।

जुताई प्रणाली और फसल बुवाई का समय

संरक्षित कृषि में स्टेल सीडबेड पद्धति खरपतवारों के प्रकोप को कम करने का एक अच्छा तरीका है। इसके लिए खेत में एक हल्की सिंचाई करते है जिससे मृदा की ऊपरी परत में उपस्थित खरपतवारों के बीज अंकुरित होकर 7 से 10 दिन में मृदा के ऊपर दिखाई देने लगते है जिन्हें गैर–चयनात्मक शाकनाशियों (पैराक्वाट) की अनुशंसित मात्रा का छिड़काव करके नष्ट कर देते है।

बुआई के समय में परिवर्तन करने से खरपतवार बीज अंकुरण के लिए अनुकूल वातावरण नहीं मिल पाता जिससे खरपतवारो की संख्या में कम देखी जा सकती है।

फसल अवशेष

मृदा पर उपस्थित फसल अवशेष मृदा में प्रकाश अवरोधन, नमी संरक्षण, खरपतवार बीज अंकुरण आदि को प्रभावित करता है। खरपतवारों का अंकुरण फसल अवशेष की मात्रा, खेत में खरपतवार बीज स्थिति (ऊर्ध्वाधर या सपाट और नीचे या ऊपर) और फसल अवशेष का एलीलोपैथिक प्रभाव आदि के द्वारा प्रभावित होती है। जिसका सीधा प्रभाव खरपतवारों की संख्या में दिखाई देता है।

फसल चक्र

फसल चक्र में एक फसल को निरन्तर बोने से कुछ निश्चित खरपतवारों की प्रजातियों का प्रकोप तेजी से बढ़ने लगता है, जिन पर समय के साथ नियंत्रण पाना कठिन होता है। फसल चक्र में अलग–अलग फसलों को सम्मलित करने से मृदा सुधार, खरपतवारों और कीटों के प्रकोप में कमी के साथ साथ फसल उत्पादन में वृद्धि देखी गई है।

रासायनिक खरपतवार प्रबंधन

खरपतवार प्रबंधन का रासायनिक तरीका अन्य तरीकों से सरल, कम लागत और प्रभावशाली तरीका है। इसी कारण से खरपतवार नियंत्रण का रासायनिक तरीका किसानों के बीच सबसे ज्यादा प्रचलित है।

संरक्षित कृषि में, एक फसल काटने के बाद और दूसरी फसल बोने के पूर्व गैर–चयनात्मक शाकनाशी ग्लाइफोसेट या पैराक्वाट की अनुशंसित मात्रा का प्रयोग करके खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए। बुवाई के एक दिन बाद, उद्भव पूर्व शाकनाशी का प्रयोग करना चाहिए जिससे बीज अंकुरण के साथ अंकुरित होने वाले खरपतवारों के अंकुरण को रोका जा सकता है। जिससे फसल की प्रारंभिक अवस्था में फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा कम होती है और फसल वृद्धि में कोई विपरीत प्रभाव नही पड़ता। यदि प्रारंभिक अवस्था के बाद खरपतवार अंकुरित होते है तो उनसे निजात पाने के लिए फसल के आधार पर अंकुरण पश्चात अनुशंसित चयनात्मक शाकनाशी का प्रयोग करना चाहिए।

खरपतवार बीजों को कम करने में खरपतवार कटाई का महत्व

यदि खेत को बिना बुवाई के छोड़ते है, तो उसमे खरपतवारों बहुतायत में उगते है और करोड़ो–अरबों की संख्या में अपने बीजों का उत्पादन करते है। जिससे अगली फसल में खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है। ऐसा कहा जाता है कि खेत में यदि एक वर्ष के लिए खरपतवार नियंत्रण न किया जाये, तो खरपतवारों द्वारा इतना बीज बैंक बनाया जाता है। जिसे नियंत्रित करने में लगभग सात साल लग जायेंगे। इसलिए खरपतवार बीज कटाई का महत्व खरपतवार बीज बैंक को कम करने के लिए बढ़ जाता है। खरपतवार बीज बैंक को कम करने के लिए विभिन्न आयाम जैसे कि खरपतवार को बीज बनने के पूर्व ही विभिन्न विधियों को अपनाकर नष्ट करना चाहिए जिससे की खरपतवार आक्रामकता को कम किया जा सके। इसके लिए खरपतवार को इसके पुष्पन अवस्था में ही हाथ से उखाड़कर या यांत्रिक या कृषिगत विधियों द्वारा मृदा में दबाकर या फिर रसायनों (जैसे कि अवर्णात्मक या वर्णात्मक शाकनाशियों) का छिड़काव कर खरपतवार बीज बैंक को कम किया जा सकता है।

निष्कर्ष

संरक्षित कृषि में खरपतवार नियंत्रण और खरपतवार बीज बैंक को कम करने के लिए न्यूनतम जुताई, मृदा आच्छादन, फसल चक्र, उद्भव पूर्व, उद्भव पश्चात और गैर–चयनात्मक शाकनाशी का समन्वित प्रयोग कर खरपतवारों में नियंत्रण प्राप्त करना चाहिए। इसके बावजूद यदि कोई खरपतवार के पौधे बीज बना लिए हो तो उनके बीज को कट कर प्रक्षेत्र से हटा देना चाहिए। इस तरह खरपतवार बीज उत्पादन को कम किया जा सकता है जिससे वर्ष दर वर्ष खरपतवारों के बीज में कमी संभावित है।

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन : खरपतवार नियंत्रण का संयुक्त प्रयास

वरुचा मिश्रा एवं आशुतोष कुमार मल्ल

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उ.प्र.)

खरपतवार फसल की पैदावार पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। इसके साथ ही कई फसल उत्पादन प्रथाओं में भी ये बाधा डालते हैं, और खरपतवार के बीज किसी भी फसल के बीजों को दूषित कर सकते हैं। इसलिए आवश्यक है कि खरपतवार का नियंत्रण किया जाये। खरपतवार नियंत्रण विधियों में से एक शाकनाशी का अनुप्रयोग है जिसे मुख्य खरपतवार नियंत्रण विधि में माना जाता है।

इस एक विधि से लगातार खरपतवार नियंत्रण करने से शाकनाशी–प्रतिरोधी खरपतवारों का विकास हुआ है। वर्तमान समय में उपयोग करने के लिए आत्याधिक संख्या में शाकनाशी अब उपलब्ध हैं जिनके प्रति खरपतवार प्रतिरोधक नहीं हुए हैं और अमेरिका में खेती में उपयोग करने हेतु शाकनाशी प्रतिरोध के मामले तीव्रता से बढ़ रहे हैं। इसके फलस्वरूप पर्याप्त खरपतवार नियंत्रण सुनिश्चित करने के लिए शाकनाशियों को अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता होती है।

इस समस्या ने ऐसे खरपतवार प्रबंधन की आवश्यकता कि उत्पत्ति की है जिसमें केवल एक प्रबंधन तकनीक को न लेकर कई तकनीकों को साथ में उपयोग किया जाये। साथ ही जो एकल प्रबंधन रणनीति के साथ कई खरपतवारों का प्रबंधन कर सके। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन एक खरपतवार प्रबंधन कार्यक्रम में कई खरपतवार नियंत्रण विधि का एकीकरण है, जो एक विषेष खरपतवार समस्या के नियंत्रण को अनुकूलित करता है। पिछले कई दषकों में सरल खरपतवार नियंत्रण प्रथाओं को देखा गया है जो कुछ लोकप्रिय शाकनाशियों पर बहुत अधिक निर्भर करती हैं। हालांकि, शाकनाशी–प्रतिरोधी खरपतवारों के तेजी से प्रसार के लिए किसानों को वैकल्पिक खरपतवार प्रबंधन दृष्टिकोणों को शामिल करने की आवश्यकता है।

यह प्रबंधन रणनीति निवारक, सांस्कृतिक, यांत्रिक और रासायनिक प्रथाओं के संयोजन पर आधारित है। विभिन्न खरपतवार प्रजातियों की संख्या और उनके अत्यधिक विविध जीवन चक्र और उत्तरजीविता रणनीतियों के कारण एकल खरपतवार नियंत्रण उपाय संभव नहीं है। इसके अलावा एक या दो तरीकों से खरपतवारों को नियंत्रित करने से खरपतवारों को उन प्रथाओं के अनुकूल होने का मौका मिलता है। संक्षेप में यह कार्यक्रम का विकास कुछ सामान्य सिद्धांतों पर आधारित है जिनका उपयोग किसी भी खेत में किया जा सकता है:

(1) कृषि संबंधी प्रथाओं का उपयोग करें जो खरपतवारों के परिचय और प्रसार को सीमित करते हैं

(2) फसल को खरपतवारों से मुकाबला करने में मदद करें और

(3) खरपतवारों को 'असंतुलित' रखने वाली प्रथाओं का उपयोग करें

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन के घटकः

इस प्रबंधन तकनीक का लक्ष्य खरपतवार नियंत्रण के संयुक्त प्रयास में खरपतवार प्रबंधन के विभिन्न तरीकों को शामिल करना है। जिस तरह बार–बार एक ही शाकनाशी का उपयोग करने से शाकनाशी–खरपतवार प्रतिरोध उत्पन्न हो सकता है, उसी तरह समय के साथ निम्न उल्लेखित तरीकों में से किसी एक पर निर्भरता से खरपतवारों के खिलाफ इसकी प्रभावकारिता कम हो सकती है। यह योजना विकसित करते समय विचार करने के लिए दो प्रमुख कारक हैं

(1) लक्षित खरपतवार प्रजातियाँ और

(2) समय, संसाधन और क्षमताएँ जो इन युक्तियों को लागू करने के लिए आवश्यक हैं।

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन में चार प्रथाओं का एकीकरण यह प्रबंधन तकनीक निम्न घटकों पर निर्भर करती है।

- भौतिक खरपतवार प्रबंधन दृष्टिकोण में यांत्रिक तकनीक जैसे खुदाई और जुताई और तापीय तकनीक जैसे फ्लेम वीडिंग शामिल हैं;

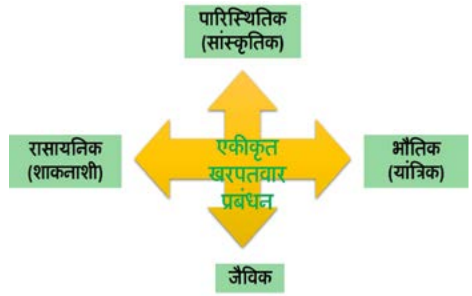

- जैविक खरपतवार प्रबंधन खरपतवार प्रबंधन के लिए पौधे जीव विज्ञान की समझ का उपयोग करता है, उदाहरण के लिए अंकुरण।
- पारिस्थितिक खरपतवार प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण प्राप्त करने के लिए प्रजातियों के बीच परस्पर क्रिया का उपयोग करता है, उदाहरण के लिए, फसल–खरपतवार प्रतियोगिता, एलीलोपैथी, और फसल चक्र।

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं की श्रेणियाँः

निवारण

रोकथाम खरपतवार प्रबंधन के पहले चरणों में से एक है। यह श्रेणी दूसरों से इस मायने में भिन्न है कि यह खरपतवार को खेत से बाहर रखने या खेत के भीतर फैलने पर ध्यान केंद्रित करती है।

किसान इस युक्ति के लिए निम्नलिखित उपयोग कर सकते हैंः

- फसल के बीज, खाद और अन्य निवेश जैसे खरपतवार के बीजों से दूषित निवेशों से बचाए।
- सफाई उपकरण खरपतवार के बीजों को खेतों के बीच ले जा सकते हैं। इसलिए उपकरण को प्रयोग करने से पूर्व अच्छी तरह से साफ करें जिससे खरपतवार के बीज आप की खेती को दूषित न कर सकें।
- खरपतवारों को खेत में बीज पैदा करने से रोकें। यह केवल उस क्षेत्र के लिए ही नहीं जहाँ फसल लगी है अपितु उसके आस पास की खाइयों और आसपास के अन्य गैर–फसल क्षेत्रों में भी खरपतवार के बीज को पैदा न होने दें।
- समय–समय पर खरपतवारों की उत्पत्ति को अपने खेत में जाँच करें।
- उपयोग किए गए कृषि उपकरण खरीदते समय या किराए की भूमि का उपयोग करते समय सावधानी बरतें।

सांस्कृतिकः

स्वस्थ एवं साफ फसल सबसे अच्छा खरपतवार नियंत्रण है। फसल को खरपतवारों पर प्रतिस्पर्धात्मक लाभ देने के लिए सांस्कृतिक प्रथाओं को डिज़ाइन किया गया है।

किसान खरपतवार नियंत्रण के लिए निम्न युक्तियों का प्रयोग कर सकते हैंः

- किसानों को अपने खेतों में फसल चक्रीकरण करें जिससे किसी एक फसल में खरपतवारों को खरपतवार नियंत्रण रणनीति के अनुकूल न हो सके।
- खरपतवारों को पोषक तत्वों की पहुंच से वंचित करते हुए इष्टतम फसल ग्रहण की अनुमति देने के लिए पोषक तत्व प्रबंधन करें।
- जगह, प्रकाश, पोषक तत्वों और मृदा नमी के लिए खरपतवारों से मुकाबला करने के लिए फसलों को ढ़क दें।
- फसल को अच्छी शुरूआत देने के लिए रोपण के तरीकों में बदलाव करें या खरपतवारों के अंकुरण की अनुमति दें, जिसे रोपण से पहले नियंत्रित किया जा सकता है।
- फसल की किस्म का चयन पर भी ध्यान दें जिससे कि फसलों को खरपतवारों के खिलाफ अत्यधिक प्रतिस्पर्धात्मक लाभ मिले।

रासायनिकः

शाकनाशी अधिकांश खरपतवार प्रबंधन योजनाओं का एक अभिन्न अंग है। शाकनाशी का सही समय व सही खरपतवार पर प्रयोग ही उसके प्रबंधन में असरदार है।

- समय पर अपने खेतों की देखभाल करें।
- उचित खरपतवार की पहचान और जागरूकता के क्षेत्र में शाकनाशी–प्रतिरोधी खरपतवार क्या है की जगह का प्रयोग करे।
- सही शाकनाशी का प्रयोग, अर्थात उपयुक्त उत्पाद को सही दर पर और सही समय पर प्रयोग।
- समान प्रभावी स्थलों वाले शाकनाशियों का बार–बार उपयोग करने से बचने के लिए सभी मौसमों में अपनें खेतों की क्रियाओं के लिए आगे की योजना बनाए।

यांत्रिकः

यांत्रिक खरपतवार प्रबंधन भौतिक प्रथाओं पर ध्यान केंद्रित करता है जो अंकुरण को बाधित करते हैं और पौधे के ऊतकों को नष्ट करते हैं।

किसान अपने खेतों में इन युक्तियों के माध्यम से खरपतवार को नियन्त्रित कर सकते हैं।

- हाथ से खरपतवार को निकालें।
- खेत की जुताई करें।
- जब भी खेत में घास दिखाई दे तो उसे तुरंत निकाल दे जिससे की फसल को उससे होने वाली क्षति से बचाया जा सके।
- फसल के समय खरपतवार पर मौजूद बीजों को नष्ट करे।

जैविकः

यह युक्ति बैक्टीरिया, कवक, या कीड़ों सहित खरपतवारों को लक्षित करने के लिए जीवित जीवों का उपयोग करती है, जिनकी एक निश्चित खरपतवार प्रजातियों के लिए प्राथमिकता होती है। यकीनन यह रणनीति सभी युक्तियों में से सबसे कम उपयोग की जाती है। परन्तु किसान इस को अपने खेतों में उपयोग करके लाभ प्राप्त कर सकते हैं। आवरण फसलों को जैविक नियंत्रण युक्ति माना जा सकता है।

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन रणनीति में भौतिक, रासायनिक और जैविक उपकरण से शामिल होते हैं, बिना किसी एक उपाय पर अत्यधिक निर्भरता के, और शाकनाशी प्रतिरोध समस्या के प्रबंधन और फसल उत्पादन और वैश्विक खाद्य सुरक्षा को बनाए रखने के लिए एक सफल दृष्टिकोण हो सकता है।

खरपतवार प्रबंधन में शाकनाशी प्रतिरोध की समस्या

सोनाली सिंह, पी.के. मुखर्जी, रितु पांडे, मुनि प्रताप साहू,
विकास सिंह, नरेंद्र पाटीदार एवं अल्पना कुम्हरे
भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

परिचय :

खरपतवार फसलों को संक्रमित करते हैं और उपज को कम करते हैं। लगभग सभी फसल उत्पादन प्रणालियां खरपतवारों के संक्रमण से ग्रस्त हैं। फसलों और फसल प्रणालियों के खरपतवार वनस्पतियों में घास, चौडी पत्ती वाले खरपतवार और मोथा शामिल हैं। ये वार्षिक, द्विवार्षिक और बारहमासी हो सकते हैं। खरपतवार प्रबंधन के लिए उत्पादक विभिन्न प्रबंधन तकनीको को अपनाते हैं। इनमें यांत्रिक निराई, कृषिगत/सांस्कृतिक और रासायनिक तरीके शामिल हैं। खरपतवारों के प्रबंधन के लिए शाकनाशियों का उपयोग सबसे प्रभावी तरीका रहा है। अलग–अलग रासायनिक समूहो से संबंधित कई शाकनाशियों को विभिन्न फसलों के अधिकांश समस्या ग्रस्त खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न तंत्र क्रियाओ के साथ प्रभावी ढंग से उपयोग किया गया है। हालांकि, शाकनाशी प्रतिरोध को खरपतववार या फसल बायोटाइप की विरासत में जीवित रहने की क्षमता के रूप में परिभाषित किया गया है। और शाकनाशी की एक खुराक के साथ उपचार के बाद पुनः उत्पन्न किया जा सकता है, जिसके लिए मूल आबादी अतिसंवेदनशील थी। जंगली गाजर में शाकनाशी 2,4–डी के प्रतिरोध का सबसे पहला अवलोकन किया गया था। ट्राइजीन शाकनाशियों के खिलाफ ग्राउंडसेल में शाकनाशी प्रतिरोध की पहली पुष्टि की गई थी। पिछले कुछ वर्षो में, दुनिया भर में प्रतिरोध का परिमाण बढ़ गया है। वर्तमान में 268 प्रजातियों (154 द्विबीजपत्री और 114 एकबीजपत्री) के साथ विश्व स्तर पर शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवारों के 521 अद्वितीय मामले (प्रजातियां x कार्यस्थल) हैं। खरपतवारों ने कार्यवाही के 31 ज्ञात शाकनाशियों में से 21 और 165 विभिन्न शाकनाशियों के प्रति प्रतिरोध विकसित कर लिया है। 72 देशो मे 98 फसलों में शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवार पाए गए हैं। फसलों/फसल प्रणालियों में कार्यवाही के समान तंत्र के साथ शाकनाशियों के बार–बार और गहन उपयोग से समुदाय के भीतर प्रतिरोधी बायोटाइप का विकास होता है। धीरे–धीरे प्रतिरोधी बायोटाइप कई प्रतिरोध विकसित कर लेते हैं जो उत्पादन प्रणालियों के लिए एक बड़ा खतरा बन जाते हैं। खरपतवार वनस्पतियों में, दुनिया भर में रिपोर्ट की जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण शाकनाशी प्रतिरोधी प्रजातियों में *लोलियम रिगिडियम, एवेना फतुआ, अमरान्थस रेट्रोफ्लेक्सस, नोपोडियम एल्बम, एल्यूसिन इंडिका, इकाईनोक्लोआ क्रस–गैली और फैलेरिस माइनर* शामिल है।

प्रतिरोध विकास के कारक

प्रतिरोध का विकास कई कारकों के संयोजन का परिणाम है जिसमें खरपतवार प्रजातियों के जीवविज्ञान, उपयोग में

ग्लाइफोसेट–प्रतिरोधी हॉर्सवीड (कोन्याजा कैनेडेंसिस) गेहूं की फसल के साथ

शाकनाशियों और परिचालन विधियों को शामिल किया गया है। शाकनाशियों के उपयोग पर अत्यधिक निर्भरता के साथ–साथ एक ही स्थान पर क्रिया करने वाले शाकनाशियों के उपयोग, बदलते मौसम के दौरान कई बार प्रयोग, शाकनाशियों का उपयोग अगले मौसम में और लंबे समय तक मिट्टी की अवशिष्ट गतिविधि वाले शाकनाशियों का उपयोग प्रतिरोध विकास का प्रमुख कारण है। चयन तीव्रता के आधार पर, प्रतिरोधी खरपतवार की संख्या बढ़ती और फैलती रहेगी। उच्चबीज उत्पादन क्षमता और कुशल बीज फैलाव तंत्र कुछ ऐसे खरपतवार लक्षण हैं जो प्रतिरोध को फैलाने में मदद करते हैं। प्रतिरोधी बायोटाइप क्रॉस प्रतिरोध विकसित कर सकते हैं (दो या दो से अधिक शाकनाशियों का एक ही प्रकार की क्रिया के लिए प्रतिरोधी) या एकाधिक प्रतिरोध (दो या दो से अधिक शाकनाशियों के लिए प्रतिरोधी जिनके क्रिया के विभिन्न तरीके हैं) समय की अवधि में। जैव रासायनिक स्तर पर, शाकनाशी के अंतर तेज, स्थानान्तरण और चयापचय प्रतिरोध विकास के भाग्य का फैसला करता है। दोषपूर्ण प्रबंधन विधियाँ जो खरपतवार नियंत्रण की एकल विधि पर निर्भर करती हैं, दोषपूर्ण संग रोधप्रणाली, प्रतिरोधी खरपतवार के बीजों से दूषित फसल बीज भी समस्या में योगदान करते हैं।

प्रतिरोध के तंत्र

मोटे तौर पर, तंत्र की दो श्रेणियां काम करती हैं। पहले में लक्षित साइट प्रतिरोध शामिल है जिसमें शाकनाशी बाध्यकारी साइट में परिवर्तन और लक्ष्य साइट का अति–उत्पादन शामिल है। दूसरी श्रेणी में गैर–लक्षित साइट प्रतिरोध शामिल है जहां शाकनाशी के तेज और बढ़े हुए चयापचय के साथ–साथ इसके पृथक्करण से प्रतिरोध का विकास होता है। लक्ष्य साइट प्रतिरोधों में एसीकेस (AC Case), और एएलएस (ALS) अवरोधकों के मामले में बाध्यकारी साइट में या उसके आसपास अमीनो एसिड प्रतिस्थापन शामिल हैं। प्रतिरोधों के सबसे व्यापक मामलों में प्रकाश तंत्र I और II के अवरोधकों का प्रतिरोध, एसिटो लेक्टेट सिंथेज़ (ALS), एसिटाइल–सीओ एकार्बोक्सिलेज़ (AC Case), प्रोटोपोर्फिरिनोजेन ऑक्सीडेज (PPO), कैरोटेनॉइड सिंथेसिस, ई.पी.एस.सी. सिंथेज़ और माइटो सिसइन हिबिटर शामिल हैं। प्रतिरोध एक साथ एक से अधिक तंत्र के संचालन के कारण भी हो सकता है।

प्रकाश तंत्र I और II अवरोधकों का प्रतिरोध सबसे व्यापक है। ट्राइज़ीन, ट्रायज़ीनोन्स, यूरेसिल्स, नाइट्राइल्स, फेनिलुरियास, पाइरिडाज़िनोन्स और बेंजोथियाडियाज़ोल समूहों में PS II अवरोधक शामिल हैं। लगभग 67 खरपतवार प्रजातियों को ट्राइज़ीन के प्रतिरोधी होने की सूचना मिली है। दुनिया भर में गैर–चयनात्मक खरपतवार नियंत्रण के लिए फोटो सिस्टम I अवरोधक जैसे पैराक्वाट और डाइक्वाट का उपयोग किया जा रहा था। पैराक्वाट के प्रति सहनशीलता सबसे पहले लोलियम पेरेने में दर्ज की गई, उसके बाद *अमरान्थस लिविड्स, बाइडेन्स पाइलोसा, एलुसीन इंडिका* और *सोलेनम नाइग्रम* में। पैराक्वाट प्रतिरोध के तंत्र को शाकनाशी ट्रांसलोकेषन में कमी के लिए जिम्मेदार ठहराया गया है। सल्फोनीलुरियास, इमिडाज़ोलिनोन्स, ट्रायज़ोलोपाइरीमिडीन्स, और पाइरिमिडिनिल (थियो) बेंजोएट मुख्य रूपसे एंजाइम एसिटोलैक्टेट सिंथेज़ को रोकते हैं। इस समूह का प्रतिरोध सबसे पहले लैक्टुका सेरिओला में देखा गया था। अन्य प्रतिरोधी प्रजातियों में *ऐमारैंथस, लोलियम* और जंगली जई शामिल हैं।

ग्लाइफोसेट एक शक्तिशाली शाकनाशी रहा है जिसे उद्‌भव के बाद डाला जाता है। यह ईपीएसपी सिंथेज़ को बाधित करके पौधों को मारता है। इस शाकनाशी के प्रति प्रतिरोध 1994 में खरपतवार में दिखना शुरू हुआ। अब तक, 14 विभिन्न देषों में 16 खरपतवार प्रजातियों में ग्लाइफोसेट प्रतिरोध की सूचना दी गई है और यह दुनियाभर में एक महत्वपूर्ण समस्या बनती जा रही है। इटैलियन राईग्रास *(एलमल्टीफ्लोरम),* गूजग्रास *(एल्यूसिनइंडिका),* हॉर्स वीड *(कोन्याजा कैनेडेंसिस)* कुछ ऐसी प्रजातियां हैं जिनके बारे में बताया गया है कि वे इस शाकनाशी के प्रति प्रतिरोधी हैं। लक्ष्य साइट और गैर–लक्षित साइट तंत्र दोनों मौजूद हैं। कैरोटीनॉयड जैव संश्लेषण अवरोधकों का प्रतिरोध अमेरिका में हाइड्रिला वर्टिसिलटा में और ऑस्ट्रेलिया में रेफान सराफ निस्ट्रम में पाया गया। हालांकि, इस समूह में देखी गई प्रतिरोध की कम घटना उन्हें भविष्य के लिए आकर्षक शाकनाशी उपकरण बनाती है। प्रोटोपोर्फिरिनोजेन ऑक्सीडेज (प्रोटॉक्स या पीपीओ) को बाधित करने वाले शाकनाशियों का विभिन्न प्रकार की फसलों में खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

आइसोप्रोट्यूरॉन के लिए *फैलेरिस माइनर* प्रतिरोध दुनिया में खरपतवार प्रतिरोध के सबसे गंभीर मामलों में से एक है। इस खरपतवार में प्रतिरोध गेहूं के खेतों से बताया गया था जहां 10 से अधिक वर्षों के लिए आइसो प्रोट्यूरॉन का उपयोग किया गया था। लक्ष्य स्थल और बढ़े हुए उपापचय दोनों की सूचना हरियाणा से मिली है, जबकि बढ़े हुए उपापचय के कारण प्रतिरोध की सूचना उत्तराखंड, भारत से मिली है। यह भारत में गेहूं उत्पादकों के लिए एक बड़ा खतरा और शोधकर्ताओं के लिए एक बड़ी चुनौती है।

शाकनाशी प्रतिरोध का प्रबंधन

दुनियाभर में प्रतिरोध के मामले बहुत तेजी से बढ़ रहे हैं, यह एक गंभीर समस्या है। क्रॉस और कई प्रतिरोधों ने स्थिति को और जटिल बना दिया है। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण पर अत्यधिक निर्भरता प्रतिरोध के मामलों को जन्म देती रहेगी। इसलिए, प्रतिरोध से निपटने के लिए वैकल्पिक प्रबंधन रणनीतियों को विकसित किया जाना चाहिए। प्रतिरोध प्रबंधन के लिए निवारक और प्रति क्रियाशील दोनों तरीकों की आवश्यकता होती है। रोकथाम में खरपतवार प्रबंधन विधियों के उपयुक्त संयोजन शामिल होंगे जैसे कि खेती के तरीके, फसल चक्र, खेत निरीक्षण और शाकनाशी चक्र। अन्य क्षेत्रों में प्रतिरोध के प्रसार को रोकने के लिए संदिग्ध प्रतिरोधी बायोटाइप द्वारा बीज उत्पादन की जाँच की जानी चाहिए।

दुनियाभर में फसल उत्पादन कार्यक्रम तकनीकों और मुद्दों पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं जैसे संरक्षण जुताई, संसाधनों की स्थिरता, संसाधन उपयोग दक्षता और सबसे महत्वपूर्ण, वैश्विक जलवायु में परिवर्तन। इसलिए, शाकनाशियों पर निर्भरता को कम करने के लिए सांस्कृतिक, यांत्रिक, जैविक और शाकनाशी चक्र के विवेकपूर्ण संयोजनों को शामिल करते हुए एकीकृत दृष्टिकोण को अपनाया जाना चाहिए। जुताई की विधि, रोपण का समय, शाकनाशी के प्रयोग की विधि, इष्टतम मात्रा, बासी बीज क्यारी और शून्य जुताई कुछ छोटी अवधि की प्रतिरोध प्रबंधन रणनीतियाँ हैं। एलोपैथिक कल्टीवेटर विकास शाकनाशी भार को कम करने के लिए एक और रणनीति हो सकती है। तेजी से प्रतिरोधी स्क्रीनिंग तकनीकों को विकसित किया जाना चाहिए जिसके त्वरित परिणाम देने वाले सरल तरीकों की आवश्यकता होती है।

दलहनी फसलों में खरपतवार प्रबन्धन

उत्तम कुमार, अनिल कुमार डागर, रवि रावत,
ज्ञान सिंह एवं सुमित नारायण
भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

परिचयः

प्राचीन काल से ही भारत में उगाई जाने वाली फसलों में दलहनी फसलों का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है। दलहनी फसलों की पैदावार में कमी होने के प्रमुख कारकों में खरपतवारों की समस्या बहुत जटिल है। दलहनी फसलों की शुरूआती धीमी बढ़वार एवं कम ऊँचाई के कारण खरपतवार फसलों के ऊपर हावी हो जाते हैं तथा उपज को प्रभावित करते हैं। ये फसलें सामान्यतः प्रोटीन की प्रमुख स्त्रोत मानी जाती है। दलहनी फसलों के अंतर्गत प्रमुखतः अरहर, मूंग, उड़द की खेती खरीफ मौसम में तथा चना, मसूर, राजमा एवं मटर की खेती रबी मौसम में की जाती है। भारत के कई स्थानों में मूंग एवं उड़द की खेती जायद में भी की जाती है। हमारे देश में दलहनी फसलों की खेती लगभग 260 लाख हैक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है। जिनमें लगभग 140 लाख टन वार्षिक उत्पादन होता है। पोषण वैज्ञानिकों के अनुसार हमारे संतुलित आहार में 80 ग्राम दाल प्रति व्यक्ति प्रतिदिन आवश्यक है, लेकिन वर्तमान में इसकी उपलब्धता केवल 38 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ही है, जिसका प्रमुख कारण प्रति हैक्टेयर उपज का कम होना है।

परिचर्चाः

दलहनी फसलों की पैदावार कम होने के प्रमुख कारणः

- दलहनी फसलों की खेती मुख्यतः असिंचित क्षेत्रों में की जाती है, जहां पर नमी एवं पोषक तत्वों की कमी होती है।
- किसानों में दलहनी फसलों की खेती, उन्नत किस्मों एवं तकनीक की जानकारी का अभाव है।
- कीट व्याधियों, बीमारियों तथा खरपतवारों का उचित समय पर प्रभावी नियंत्रण न कर पाना, आदि।

असिंचित क्षेत्रों में, दलहनी फसलें अपनी प्रारंभिक अवस्था में बहुत ही धीरे वृद्धि करती है। इसके अलावा कतारों के बीच की जगह ज्यादा होने से खाली जगह पर पौधों की छाया कम होती है, जिससे खरपतवार इन फसलों से तीव्र प्रतिस्पर्धा करके भूमि में निहित नमी एवं पोषक तत्वों के अधिकांश भाग का शोषण करते है, फलस्वरूप फसल की विकास गति इतनी धीमी और संकुचित हो जाती है कि अंत में पैदावार कम हो जाती है। दलहनी फसलों में उपज कम होने का एक मुख्य कारण खरपतवारों की वृद्धि और समय से उनका नियंत्रण न करना है। कम ऊँचाई एवं जल्दी पकने वाली किस्मों में खरपतवार की समस्या और बढ़ गई है। खरपतवारों की रोकथाम से न केवल दलहनी फसलों की पैदावार बढ़ाई जा सकती है, बल्कि उसमें निहित प्रोटीन की मात्रा में भी वृद्धि की जा सकती है।

प्रमुख खरपतवारः

दलहनी फसलों की खेती खरीफ एवं रबी दोनों मौसमों में की जाती है। इन फसलों में उगने वाले खरपतवारों को मुख्यतः तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है जिनका वर्णन सारणी–1 में दिया गया है।

सारणी 1. विभिन्न दलहनी फसलों में उगने वाले प्रमुख खरपतवारः

क्र.	खरपतवारों की श्रेणी	खरीफ मौसम के खरपतवार	रबी मौसम के खरपतवार
1.	सकरी पत्ती वाले खरपतवार	सांवा *(इकानोक्लोआ कोलोना)* दूब घास *(साइनोंडान डेक्टीलोन)* कोदों *(पासपेलू स्क्रोबिकुलेटम)* बनरा *(सिटैरिया ग्लाऊका)*	गेहूं के मामा *(फेलोरिस माइनर)*, जंगली जई *(ऐवेना फुटुआ)*, *(ए. लुडोविसियाना)* दूब घास *(साइनोंडोन डेक्टीलोन)*

क्र.	खरपतवारों की श्रेणी	खरीफ मौसम के खरपतवार	रबी मौसम के खरपतवार
2.	चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार	पत्थरचटा *(ट्राइएन्थमा पोर्चुलाकेस्ट्रस)* कनकवा *(कामेलिना बेघालेनसिस)* महकुआ *(एजीरेटम कोनीज्वाडिस)* वन मकोय *(फाइसेलिस मिनीमा)* सफेद मुर्ग *(सिलोसिया अर्जेन्सिया)* हजारदाना *(फाइलेन्थस निरुरी)*	प्याजी *(एस्कोडिलस टेन्यूफोलियस)* बथुआ *(चिनोपोडियम एल्बम)* सेंजी *(मेलीलोटस प्रजाति)* कृष्णनील *(एनागेलिस अरवेंसिस)* हिरनखुरी *(कानवोलवुलस आरवेनसिस)* पोहली *(कार्थमस आक्सीकैन्था)* सत्यानाशी *(आर्जेमोन मैक्सीकाना)* अकरी *(विसिया सटाइवा)*, जंगली मटर *(लेथाइरस सटाईवा)*
3.	मोथाकुल परिवार के खरपतवार	मोथा *(साइपेरस रोटन्ड्रस, सा. इरिया आदि)*	मोथा *(साइपेरस रोटन्ड्रस)*

दलहन में खरपतवारों से होने वाली हानियाँः

खरपतवार फसल के साथ–साथ उगकर मृदा में उपलब्ध पौधों के पोषक तत्वों एवं नमी को तेजी से ग्रहण कर लेते हैं। खरीफ मौसम में उच्च तापमान एवं अधिक नमी के कारण रबी मौसम की अपेक्षा अधिक खरपतवार उगते हैं, जिसके कारण फसलों को समुचित मात्रा में पोशक तत्व एवं नमी प्राप्त नहीं हो पाती, साथ ही फसल को आवश्यक प्रकाश एवं स्थान से भी ये खरपतवार वंचित रखते है और समय पर यदि इनकी रोकथाम न की गई तो उत्पादन में भारी कमी हो जाती है। इसके अतिरिक्त खरपतवार, फसलों में लगने वाले रोगों के जीवाणुओं एवं कीट व्याधियों को भी आश्रय देते हैं। कुछ खरपतवारों के बीज फसल के बीज के साथ मिलकर उसकी गुणवत्ता एवं बाजार मूल्य को कम कर देते है। जैसे– अंकरी एवं जंगली मटर के बीज, मसूर के बीज के साथ मिलकर उसकी गुणवत्ता को कम कर देते हैं।

- खरपतवार दलहनी फसलों के लिए अत्यन्त हाँनिकारक है। ये पोषक तत्वों एवं अन्य महत्वपूर्ण अवयवों को ग्रहण कर लेते है। तथा उत्पादकता को प्रभावित करते है।
- खरीफ मौसम में उच्च तापमान एवं अधिक नमी के कारण रबी मौसम की अपेक्षा अधिक खरपतवार उगते है।
- खरपतवार फसलों में लगने वाले रोगों के जीवाणुओं एवं कीट व्याधियों को भी आश्रय देते है।
- खरपतवार के बीज फसल के बीज के साथ मिलकर उसकी गुणवत्ता एवं बाजार मूल्य को कम कर देते है।
- वैज्ञानिक शोधों के अनुसार खरपतवार प्रति हैक्टेयर 20–60 कि0ग्रा0 नत्रजन, 5–12 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 25–50 कि. ग्रा. पोटाष की मात्रा मृदा से अवशोषित करता है।

विभिन्न दलहनी फसलों की पैदावार में खरपतवारों द्वारा आंकी गई कमी का विवरण सारणी 2 में दिया गया है।

सारणी 2. दलहनी फसलों में फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा का क्रान्तिक समय एवं खरपतवारों द्वारा पैदावार में कमी

दलहनी फसलें	खरपतवार प्रतिस्पर्धा का क्रांतिक समय (बुवाई के बाद दिन)	खरपतवारों द्वारा पोषक तत्वों का शोषण (किग्रा./हें.)			उपज में कमी (प्रतिशत)
		नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटाश	
अरहर	15–60	28	24	14	24–40
चना	30–60	29–55	3–8	15–72	15–25
मूंग	15–30	80–132	17–20	80–130	30–50
उड़द	15–30	80–132	17–20	80–130	30–50
मसूर	30–60	39	5	21	20–30
मटर	30–45	61–72	7–14	21–105	20–30

खरपतवारों की रोकथामः

यदि हम फसल उत्पादन हेतु उन्नत बीजों तथा रसायनिक खादों का प्रयोग करते हैं, तो समय पर सिंचाई एवं कीड़े–मकोड़े रोग इत्यादि लगने पर इनकी रोकथाम की ओर तुरंत ध्यान दें। खरपतवारों का यदि उचित समय पर प्रभावी, नियंत्रण नहीं करते हैं तो अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के लक्ष्य के लिए किये गये उपाय निरर्थक सिद्ध हो जाते हैं। सामान्यतः किसान भाई खरपतवारों को तब तक बढ़ने देते हैं, जब तक कि वह हाथ से पकड़कर उखाड़ने योग्य न हो जाए, लेकिन उस समय तक खरपतवार फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा करके काफी नुकसान कर चुके होते हैं। फसलें अपनी प्रारंभिक अवस्था में खरपतवारों से मुकाबला नहीं कर पाती हैं। अतः फसलों को शुरू से ही खरपतवार रहित रखना आवश्यक हो जाता है ताकि खरपतवारों पर प्रभावी नियंत्रण पाकर फसल को होने वाली क्षति से बचाया जा सके। दलहनी फसलों में खरपतवारों की रोकथाम निम्नलिखित तरीकों से की जा सकती है।

शुद्ध और साफ बीज का प्रयोगः

बुवाई के समय शुद्ध और साफ बीज का प्रयोग करके खरपतवारों में हो रही वृद्धि को रोका जा सकता है।

हाथ से निंदाई–गुड़ाईः

यह खरपतवारों पर नियंत्रण पाने की सरल, प्रभावपूर्ण तथा उत्तम विधि है। फसलों की आरंभिक अवस्था बुवाई के 15–45 दिन के मध्य का समय खरपतवारों से प्रतियोगिता की दृष्टि से क्रांतिक समय है। परिणामस्वरूप, आरंभिक अवस्था में ही फसलों को खरपतवार से मुक्त करना फसल के लिए अधिक लाभदायक होता है। बुवाई के 20 दिनों के बाद ही खुरपी से पहली निंदाई करके खेत को खरपतवार रहित करना आवश्यक होता है, जिससे खरपतवारों पर प्रभावी नियंत्रण किया जा सके।

हाथ से खरपतवार निकालने की विधि तभी अपनाई जानी चाहिए जब क्षेत्रफल थोड़ा हो तथा श्रमिक आसानी से कम मूल्य पर उपलब्ध हो।

गहरी जुताई द्वाराः

यदि गर्मी के दिनों में खेतों को गहरी जुताई करके छोड़ दिया जाए तो खरपतवारों के बीज व कंद जमीन के ऊपर आ जाते हैं तथा तेज धूप में अपनी अंकुरण क्षमता खोकर निष्क्रिय हो जाते हैं। इस विधि से कीटों एवं बीमारियों का प्रकोप भी बहुत कम हो जाता है। खरपतवारों को नष्ट करने की यह पद्धति वहां अपनाई जा सकती है, जहां गर्मी में कोई पद्धति वहां अपनाई जा सकती है, जहां गर्मी में कोई भी फसल न ली जाती हो।

गुड़ाई के द्वाराः

हाथ से चलने वाले गुड़ाई यंत्र से खरपतवारों को काफी सीमा तक नियंत्रित किया जा सकता हैं। लेकिन यह विधि वहीं अपनाई जा सकती हैं, जहां फसलों को पंक्तियों में बोया गया हो। निदाई के लिए बनाया गया एक प्रकार का यंत्र जैसे– ट्वीन व्हील हो को उपयोग करने से पंक्तियों के बीच उगे खरपतवारों को नष्ट किया जा सकता है।

उचित फसल चक्र अपनाकर एक ही फसल को बार–बार एक खेत में लेने से उस फसल में खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है। उदाहरणार्थ एक ही खेत में बार–बार चने के बोने से बथुआ तथा गेहूं के मामा का प्रकोप बढ़ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ समय बाद इनकी संख्या इतनी अधिक हो जाती है कि उस खेत में चने की पैदावार ले पाना आर्थिक दृष्टि से लाभकारी नहीं रहता। अतः यह आवश्यक है कि एक फसल को बार–बार एक ही खेत में न बोया जाए एवं उचित फसल चक्र अपनाया जाए।

खरपतवारनाशक रसायनों के प्रयोग द्वाराः

दलहनी फसलों में खरपतवारनाशी रसायनों की प्रयोग करके भी खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है। जहां समय एवं श्रमिक कम तथा पारिश्रमिक ज्यादा हो वहां इस विधि को अपनाने से प्रति हैक्टेयर लागत में कमी आती है तथा समय की बचत होती है। इस विधि को अपनाने से श्रम शक्ति भी कम लगती है तथा मुख्य फसल को भी हानि नही पहुंचती। मुख्य दलहनी व मिलवा फसलों में उगने वाले खरपतवारों को नष्ट करने हेतु कुछ खरपतवारनाशी रसायनों को उनकी मात्रा के साथ क्रमशः (सारणी 3 व 4) में वर्णित किया गया है।

सारणी 3. दलहनी मिलवां फसलों में प्रयोग किये जाने वाले खरपतवारनाशी रसायन

मिलवां फसलें	खरपतवारनाशी रसायन	मात्रा (ग्राम सक्रिय तत्व/हें.)	प्रयोग का समय	प्रयोग विधि
अरहर +मूंगफली	पेंडीमेथालिन (स्टाम्प)	1000–1250	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व	खरपतवारनाशी की आवश्यक मात्रा को 600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर की दर से समान रूप से छिड़काव करें। तथा ध्यान रखे की छिड़काव के समय खेत में पर्याप्त नमी हो।
मक्का+उर्द/मूंग/लोबिया	एलाक्लोर (लासो)	1500	तदैव	
अरहर+सोयाबीन/तिल	फ्लूक्लोरेलिन (बासालिन)	1000–1500	बुवाई के पहले छिड़ककर भूमि में अच्छी तरह मिला दें।	
	पेंडीमेथालिन (स्टाम्प)	1000–1500	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व	
	एलाक्लोर (लासो)	1000–1500	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व	
अलसी+मसूर+चना+अलसी	पेंडीमेथालिन (स्टाम्प)	1000	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व	
चना+गेहूं+सरसों	आसोप्रोट्यूरान (ऐरीलाना)	1000–1250	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व	
	पेंडीमेथालिन (स्टाम्प)	750–1000	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व	

सारणी 4. विभिन्न दलहनी फसलों में प्रयोग किये जाने वाले खरपतवारनाशी रसायन

दलहनी फसलें	खरपतवारनाशी रसायन	मात्रा (ग्राम सक्रिय तत्व/हें.)	प्रयोग का समय	प्रयोग विधि
अरहर, मूंग, उर्द	एलाक्लोर (लासो)	1000	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्वं	खरपतवारनाशी की आवश्यक मात्रा को 600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर की दर से समान रूप से छिड़काव करें
	फ्लूक्लोरेलिन (बासालिन)	1500	बुवाई के पहले छिड़काव भूमि में मिला दें	
	पेंडीमेथालिन (स्टाम्प)	1500	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्वं	
	इमेजेथापायर (परस्यूट)	100	बोने के 20 दिन पश्चात	
चना, मसूर, मटर	फ्लूक्लोरेलिन (बासालिन)	1000	बुवाई से पहले छिड़ककर भूमि में मिला दें	
	पेंडीमेथालिन (स्टाम्प)	1000–1250	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्वं	
	मेट्रीब्यूजीन (सेनकॉर) केवल मटर में	500	बुवाई के तुरंत बाद अथवा बोने के 15–20 दिन पश्चात	
	क्लोडिनोफाप (टापिक)	60	बुवाई के 25–30 दिन बाद	जंगली जई एवं गेहूं के मामा की रोकथाम हेतु विशेष रूप से कारगर
	क्यूजालोफाप (टरगासुपर)	50	बुवाई के 25–30 दिन बाद	

इन खरपतवारनाशी रसायनों को प्रयोग करते समय प्रत्येक खरपतवारनाशी रसायनों के डिब्बे पर लिखे निर्देषों तथा उसके साथ दिए गये पर्चे को ध्यानपूर्वक पढ़ना चाहिए, उन्हें उचित मात्रा, समय पर तथा समान रूप से छिड़कना चाहिए। इन रसायनों का छिड़काव सुबह अथवा शाम को करना चाहिए। छिड़काव करते समय छिड़कने वाले को विशेष पोशाक, दस्ताने, चश्मे आदि का प्रयोग करना चाहिए तथा उसके पश्चात साबुन से अच्छी तरह हाथ, मुंह अवश्य धोएं, अच्छा हो यदि स्नान भी कर लें। छिड़काव के समय खेत में पर्याप्त नमी का ध्यान रखें तथा छिड़काव हेतु नैपसैक स्प्रेयर एवं फ्लैटफैन नोजल का प्रयोग करें।

निष्कर्ष

इस प्रकार यदि हम समन्वित कृषि विधियों को समय पर अपनाए तो खरपतवारों को नियंत्रित करके हम अपनी फसल से भरपूर उपज प्राप्त कर सकते हैं।

संरक्षित कृषि में लाभदायक कीटों की खरपतवार बीजों को कम करने में भूमिका

मुनि प्रताप साहू, वी.के. चौधरी, विकास सिंह, आरती साहू,
नरेन्द्र कुमार, अल्पना कुम्हरे और सोनाली सिंह
भा.कृ.अनु.प.– खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

जुताई की अवधारणा लाखों वर्ष पुरानी है। इसे सर्वप्रथम मेसोपोटामिया में 3000 ई.पू. प्रतिपादित किया गया। मृदा जुताई का उपयोग पौधों को वृद्धि हेतु आदर्श स्थिति व पोषक तत्वों की उपलब्धता बढाने, फसल अवशेषों व कार्बनिक पदार्थों को मृदा में मिलाने हेतु किया गया। लगातार जुताई के दुष्परिणामों जैसे– मृदा की निचली सतह पर कठोर परत का निर्माण परिणामस्वरूम लाभदायक सूक्ष्म जीवों की संख्या व क्रियाशीलता में कमी एवं मृदा स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव व जुताई हेतु बढ़ते ईंधन लागत ने संरक्षित खेती को जन्म दिया। सन 1940 में संरक्षित खेती हेतु उपकरण विकसित होने के कारण लोगों का रुझान संरक्षित खेती की ओर बढ़ा। सन् 1970 में बढ़ते ईंधन मूल्य ने तेजी से कृषकों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया। परिणामस्वरूप संरक्षित कृषि अपने कई लाभदायी गुणों के कारण प्रचलन में आई। जिसकी विधिवत् परिभाषा व सिद्धान्तों का वर्णन नीचे दिया गया हैः–

परिभाषा :– मृदा को बिना परिष्कृत किये फसल बीज को विशेष उपकरण की सहायता से मृदा के सम्पर्क मे लाना संरक्षित कृषि कहलाता है तथा जिस उपकरण का संरक्षित कृषि में उपयोग करते है उसे हैप्पी/सीडर के नाम से जाना जाता है।

संरक्षित खेती मुख्यतया तीन सिद्धांतों पर आधारित है–

1. खेत की कम से कम जुताई
2. मृदा को स्थायी रूप से फसल अवशेषों से आच्छादित करना
3. फसल विविधिकरण को प्राथमिकता दी जाये, जिसमे फसल–चक्र में कम से कम एक दलहनी फसल को सम्मिलित किया जाए।

संरक्षित खेती के सिद्धांतो का मृदा पर प्रभावः

1. खेत की कम से कम जुताईः– इस सिद्धांत के तहत मृदा के निचले सतह में कठोर परत का निर्माण नही होता है। मृदा की कम जुताई के फलस्वरूप इसमें सतह पर पड़े कार्बनिक पदार्थ सड़कर मृदा के सतह पर मृदा कार्बन की मात्रा में वृद्धि करते हैं, साथ ही साथ मृदा में मुख्य तत्व जैसे– नत्रजन, स्फुर व पोटाश की मात्रा में भी वृद्धि करते हैं। यह सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता को भी बढाने में सहायक होते हैं। परिणामस्वरुप पौधों की पोषण आपूर्ति के लिए कृत्रिम उर्वरकों की निर्भरता में कमी आती है।
2. मृदा को स्थायी रूप से फसल अवशेषों से आच्छादित करनाः– मृदा का स्थायी आच्छादन, मृदा ताप को नियंत्रित करता है। यह कई लाभदायक सूक्ष्म जीवों के वृद्धि व विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करता है, जो कई पोषकतत्वों को उनके अनुप्लब्ध रूप से उपलब्ध रूप में बदलने में मददगार होते हैं। यह वाष्पीकरण द्वारा मृदा में जल हानि को कम करता है क्योकि सूर्य प्रकाश का मृदा से सीधे संपर्क नहीं हो पाता है। यह अवरोधक का कार्य करता है। आच्छादन के द्वारा बहुत से खरपतवारों के नियंत्रण के साथ साथ मृदा की गुणवत्ता में भी सुधार करता है।
3. फसल विविधीकरण को प्राथमिकताः–संरक्षित खेती में फसल विविधीकरण को प्राथमिकता दी जाती है, जिसमे फसल चक्र में कम से कम एक दलहनी फसल को सम्मिलित करने पर बल दिया जाता है। फसल विविधीकरण का मृदा उर्वरता पर सीधा प्रभाव पड़ता है। साथ की साथ यह खरपतवारों की आक्रामकता को भी कम करता है। दलहनी फसलों की जड़ों में राइजोबियम नामक सूक्ष्म जीव पाया जाता है, जो वायुमंडलीय नत्रजन को पौधों को उपलब्ध करता है, जिससे मृदा उर्वरता में वृद्धि होती है और अगली फसल में कृत्रिम उर्वरकों की मात्रा में कमी आती है।

संरक्षित खेती का लाभदायक कीटों पर प्रभावः

संरक्षित खेती का प्रभाव मृदा गुणवत्ता के साथ साथ मृदा ताप एवं मृदा नमी पर भी पड़ता है जोकि कई लाभदायक कीटों के विकास एवं उसकी कार्यशीलता को प्रभावित करता है।

संरक्षित खेती में ऊपरी सतह पर फसल अवशेष होने के कारण सूर्य प्रकाश का सम्पर्क सीधे मृदा से नही हो पाता है, जिससे

संरक्षित खेती में परंपरागत खेती की तुलना में अधिकतम व न्यूनतम तापमान में लगभग 2–3°C तापांतर देखा गया है। गर्मी के दिनों में मृदा ताप परमपरागत खेती की तुलना में 2–3°C कम व ठण्ड के दिनों में 2–3°C अधिक होता है, जो किसी भी कीट के अनुकूलन के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करता है। यह देखा गया है कि संरक्षित खेती में घास कुल के खरपतवारों की आक्रामकता चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की अपेक्षा अधिक रहती है क्योंकि संरक्षित खेती में घास कुल के खरपतवारों की बहुलता होती है और यह लाभदायक कीटों के प्रिय भोज्य पदार्थ होते हैं जेबियर 2018 ने संरक्षित खेती के अंतर्गत मूंगफली फसल में लाभदायक कीटों पर प्रभाव का अध्ययन कर यह बताया कि खरपतवार बीजभोजी कीटो जैसे इयर्विग व कैराविड की संख्या परंपरागत खेती की तुलना में अधिक पायी गयी। लाभदायक कीट अपनी वृद्धि के लिए घास कुल के खरपतवारों को अपना शिकार बनाते हैं और घास परिवार के खरपतवारों की संख्या शून्य जुताई में अधिक होती है। अतः संरक्षित कृषि में, खरपतवार बीजों को कम करने हेतु खरपतवार बीज भोजी कीट कारगर साबित होंगे।

लाभदायक कीटों का खरपतवार के बीज पर प्रभावः

यह देखा गया है कि लाभदायक कीट स्वयं को अनुकूलित करने के लिए दूसरे कीटों को खाकर जीवित रहते हैं। इसके अलावा यह सभी लाभदायक कीट भोजन के रूप में खरपतवार बीजों को लेते हैं। रोडाल्फ़ एवं उनके साथियों ने 2018 में आर्थोपोडा समुदाय के लाभदायक कीटों पर चुकंदर फसल में दो जुताई विधियों, शून्य जुताई व मोल्ड बोर्डहल द्वारा जुताई के प्रभाव का अध्ययन किया तथा चार सर्वाहारी जमीनी भृंग प्रजातियों को एक खरपतवार–बीज पसंद परख के लिए चुना गया। जुताई के संचालन ने जमीन बीटल गतिविधि घनत्व को प्रभावित नहीं किया; हालांकि, कम–जुताई उपचार में मकड़ी, कनखजूरा, और रोव बीटल गतिविधि घनत्व अधिक थे। विभिन्न कीटों द्वारा दोनों जुताइयों में खरपतवार बीजों पर प्रभाव लगभग समान रहा परन्तु सभी कीटों की सक्रियता रात्रि के दौरान अधिक देखी गई। परीक्षण के लिए चार खरपतवार प्रजातियों *सेटेरिया पुमिला, इकाईनोक्लोआ क्रस–गैली, कोचिया स्कोपेरिया* और *चीनोपोडियम एल्बम* का चुनाव किया गया तथा यह पाया गया कि चयनित कीटों ने शून्य जुताई में उगे *सेटेरिया पुमिला, इकाईनोक्लोआ क्रस–गैली, कोचिया स्कोपेरिया* और *चीनोपोडियम एल्बम* खरपतवार के बीजों का मोल्ड बोर्ड हल द्वारा जुताई की गई भूमि के तुलना में अधिक भक्षण किया। यह देखा गया की भोजी कीटों द्वारा चौड़ी कुल के खरपतवारों जैसे– कोचिया स्कोपेरिया और चीनोपोडियम एल्बम के बीजों को घास कुल के खरपतवारों की तुलना में खाने हेतु अधिक पसंद किया गया। यह भी देखा गया कि *चीनोपोडियम एल्बम* के पुराने बीजों को नए बीज की तुलना में खाने हेतु वरीयता दी गई।

तालिका 1 में विभिन्न भोजी कीटों द्वारा 48 घंटे में खाई गई बीजो की संख्या का उल्लेख किया गया है। रुडोल्फ एवं उनके साथियों द्वारा जर्नल ऑफ़ इकोनोमिक एंटोमोलाजी, 2018 में छपे लेख के अनुसार समस्त कीटों द्वारा *चीनोपोडियम एल्बम* के बीजों को खाने हेतु वरीयता दी गयी। *इकाइनोक्लोआ, कोचिया स्कोपेरिया* व *चीनोपोडियम एल्बम* के बीजों को हार्पेलस इरेटीकस कीट द्वारा, अन्य कीटों की तुलना में अधिक खाया गया जबकि सेटेरिया पुमिला को हार्पेलस पेंसिलवेनिकस कीट द्वारा पसंदीदा भोज्य पदार्थ के रूप में वरीयता दी गई।

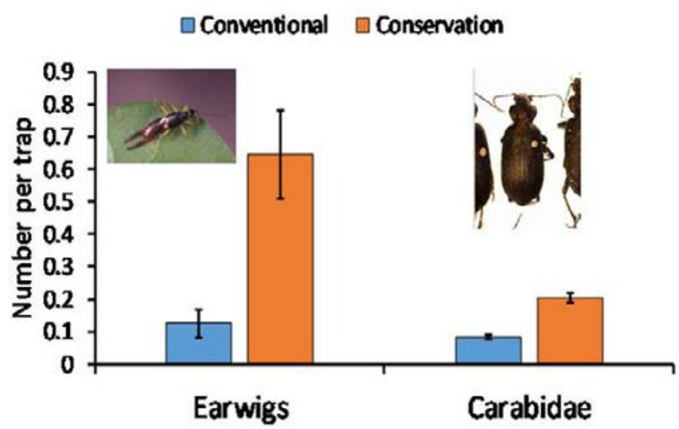

खरपतवार प्रबंधन हेतु रसायनिक विषाक्तता को कम करने के लिए खरपतवार बीजभोजी कीटों का प्रयोगः–

जैसा की हम यह जानते हैं कि आने वाला समय प्राकृतिक संतुलन के लिए बहुत ही घातक है, क्योकि मानव द्वारा प्रकृति के साथ सामंजस बनाकर लाभ अर्जित करने के पूर्व में जो भी तौर तरीके हुआ करते थे, उसमे कमी आई है। आधुनिक कृषि में रसायनों के बढ़ते उपयोग से मृदा टिकाऊपन में कमी आई है। कृषि में खरपतवार प्रबंधन हेतु रसायनों का इस्तेमाल किया जा रहा है, जिससे की खरपतवार बीज कम बनें और मृदा में खरपतवार बीज बैंक की मात्रा में कमी आये। रासायनिक विधि बीज बैंक को कम करने में कारगर साबित हुई पर इसके मृदा, जलवायु एवं जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव देखे गए। इन सब परिणामों को देखते हुए वर्तमान समय में खरपतवार बीज भोजी जीवणुओं का खरपतवार बीज बैंक को कम करने

हेतु उपयोग पर अनुसंधान चल रहा है। स्टेफनी एवं उनके साथियों द्वारा 2022 में दलहनी फसलों में खरपतवार बीजों का शिकार हेतु कैराबिड गतिविधि–घनत्व और सामुदायिक संरचना, और उनके प्रभाव को जानने के लिए एक प्रयोग किया गया।

जिसमे उन्होंने दो लाभदायक कीटों कैराविड के जेनेरा अमारा और टेरोस्टिकस तथा क्रिकेट (झींगुर) का उपयोग पि़छली फसल कैनोला बीज व कोचिया के बीजों को खाने हेतु किया तथा यह पाया कि कैराविड के जेनेरा अमारा और टेरोस्टिकस, साथ ही झींगुर ने भी कैनोला के बीजों के शिकार हेतु महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। परन्तु इनमें से कैरबिड टैक्सा व क्रिकेट ने कोचिया के बाज को खाने में महत्वपूर्ण योगदान देने में असमर्थ रहे। इन कीटों की संख्या फसल पद्धति व जुगार आदि से प्रभावित हुई तथा इनकी संख्या संरक्षित कृषि में अधिक पायी गई।

हालाँकि काली चींटी का भी कई खरपतवार बीजीं को खाने में महत्वपूर्ण योगदान पाया गया यह खरपतवार बीज का अन्तः भाग खाकर उसे निश्क्रिय कर देती है, जिससे उसका बीज ओज समाप्त हो जाता है और वह नए पौधे को उत्पन्न करने में सक्षम नही हो पाता।

तालिका 1 . भोजी कीटों द्वारा 48 घंटे में खाई गई बीजों की संख्या तालिका में दी गई है:

खरपतवार	कीट			
	अमारा कैरिनाटा	हार्पेलस एम्पुटेटस	हार्पेलस इरेटीकस	हार्पेलस पेंसिलवेनिकस
इकाईनोक्लोआ क्रस–गैली	0.32±0.16	0.22±0.13	10.26±1.26	8.12±1.26
सेटेरिया पुमिला	0.06±0.07	0.87±0.19	0.65±0.24	1.2±0.3
कोचिया स्कोपेरिया	3.12±0.87	6.26±1.27	8.06±1.02	2.11±0.48
चीनोपोडियम एल्बम	6.82±1.76	10.20±1.94	19.63±1.02	21.79±2.93

सोर्सः रुडोल्फ एवं उनके साथी (2018) जर्नल ऑफ़ इकोनोमिक एंटोमोलाजी, 2018

खरपतवार बीज बैंक पर लाभदाय कीटों का प्रभावः

यह देखा गया है कि लाभदायक कीटों द्वारा हानिकारक कीटों के अण्डों के अलावा खरपतवार बीजों को भी खाया जाता है, जो मृदा में खरपतवार बीजों की संख्या में कमी के लिए जिम्मेदार होते हैं। इन कीटों की संख्या शून्य जुताई की गई भूमि में अधिक होती है। अतः शून्य जुताई विधि या संरक्षित कृषि में खरपतवार बीजों को कम करने में लाभदायक कीटों की महती भूमिका हो सकती है। ये बीज खरपतवार बीज बैंक को कम करते हैं तथा पर्यावरण में इनका कोई भी विपरीत प्रभाव नही पड़ता अभी तक हम खरपतवार बीज बैंक को कम करने के लिए रासायनिक विधियों पर ही निर्भर हैं जो की मृदा विषाक्तता के साथ साथ वातावरण को भी दूषित करते हैं यहाँ तक की ये हमारी जैव विविधता को भी हानि पहुंचाते हैं, जबकि बीजभोजी कीटों के उपयोग से खरपतवार बीजों को बिना किसी भी दुष्परिणाम के कम किया जा सकता है

लाभदायक कीटों से लाभः

1. लाभदायक कीट जो की प्रकृति प्रदत्त होते हैं। अतः इनके द्वारा खरपतवार बीज को कम करने में किसी भी प्रकार की पूँजी की आवश्यकता नही होती।
2. इनके द्वारा मृदा में कोई भी हानिकारक प्रभाव नही होते।
3. ये कीट प्राकृतिक संतुलन बनाने में मददगार होते हैं, क्योंकि इनके द्वार मृदा सूक्ष्म जीवों पर कोई विषैला प्रभाव नही छोड़ा जाता है।
4. ये जैवविविधता को बनाये रखने में मददगार होते है।

हानियाँः

1. कीटों का यह पता लगाना की वह खरपतवार बीजों को ही खायेगा यह एक दुर्लभ संयोग है।
2. यह पता लगाना कि कीट केवल खरपतवार बीजों को ही खायेंगे यह एक कठिन कार्य है तथा इस प्रकार के अनुसंधान अभी बहुत कम हुए है।
3. अलग अलग कीटों के लिए अलग–अलग वातावरण की आवश्यता होती है यह जरूरी नही कि कोई भी लाभदायक कीट हर जगह अनुकूलित हो। अतः इनका अनुकूलन एक कठिन कार्य है।

स्रोतः– ब्रूस बरकर, 2019 खरपतवार बीज बैंक को खाना, केरी एस 2007

स्रोतः https://barbarabaraibar.weebly.com/uploads/4/5/6/3/45630805/p8020043_2_orig.jpg

स्रोतः https://eorganic.org/sites/eorganic.info/files/u118/Gryllus-pennsylvanicus.jpg

“हिंदी द्वारा सारे भारत को
एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।”

स्वामी दयानंद

जलीय खरपतवार ''जलकुम्भी'' : समस्याएँ, समाधान एवं उपयोग

पी.के. सिंह, योगिता घरडे, संतोष कुमार,
इति राठी एवं सुधीर कुमार पारे
भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

जलीय खरपतवार : एक परिचय

हमारे जल स्त्रोतों जैसे – नदी, नहर, तालाब एवं पोखरों के पानी का स्तर एवं उनको प्रदूषित करने में जलीय खरपतवार अहम भूमिका निभा रहे हैं। आम भाषा में खरपतवार को घास–फूस, तृण या नीदा आदि नामों से भी जाना जाता है और अंग्रेजी भाषा में इसे वीड (Weed) कहते है। खरपतवार हर स्थान पर आसानी से उग सकते है और ये बहुत तेजी से अपनी वृद्धि करके एक स्थान से दूसरे स्थानो पर फैल जाते हैं। वैज्ञानिक आकलन के अनुसार कृषि में प्रतिवर्ष बीमारियों से 22%, कीटों द्वारा 29%, खरपतवारों द्वारा 37% एवं अन्य कारणों से 12% तक की हानि होती है।

जलीय स्त्रोतों जैसे तालाबों, नदियों, नहरों एवं पोखरों में पाई जाने वाली वनस्पतियों (खरपतवार) को मुख्यतः तीन समूहों में बाँटा जा सकता है जैसे (i) जल की सतह पर पाए जाने वाली वनस्पतियाँ : जलकुम्भी, लेंमना, पिस्टिया, (ii) जलमग्न वनस्पतियाँ : हायड्रिला, सिरेटोफ्राइलम और (iii) तालाब के किनारे तथा गहरे जल में पाई जाने वाली वनस्पतियाँ जैसे आयपोमिया और जंगली कमल इत्यादि। दूर से ही आकर्षित करने वाले जलीय खरपतवार आज जहाँ एक ओर जल प्रदूषण की समस्या को बढ़ा रहे है वहीं दूसरी ओर इन खरपतवारों के कारण अन्य जलीय जन्तुओं एवं सम्पदा का अस्तित्व भी खतरे में है। इन सभी में जलकुम्भी एक प्रमुख जलीय खरपतवार है इसका प्रक्रोप पूरे भारत में काफी बड़े क्षेत्र में है।

जलकुम्भी क्या है ?

जलकुम्भी तालाब, झील, दलदली स्थानों एवं उथले जल वाले स्थानों में पाया जाने वाला एक जलीय खरपतवार हैं। इसके पौधे ऊँचाई में कुछ इंच से लेकर तीन फीट तक के हो सकते हैं। जलकुम्भी की पत्तियाँ चिकने हरे रंग की होती है जो कि लम्बाई में लगभग बीस सेंटीमीटर होती है। इस खरपतवार के फूल नीले, सफेद–बैंगनी रंग के होते है जो कि विशेष रूप से आकर्षित करने वाले होते है। इनकी पत्तियों में हवा भरी होती है जिससे ये जल की सतह पर आसानी से तैर सकती है। इनके बीज लम्बे समय तक कीचड़ में जीवित रह सकते

है। जलकुम्भी का पौधा जल में स्वच्छन्द रूप से तैरता रहता है। यह खरपतवार पोन्टेडेरीएसी (Pontedereaceae) परिवार का सदस्य है। इसका वैज्ञानिक नाम *''आइकोर्निया क्रेसिपस''* *(Eichhornia Crassipes)* है, पर हिन्दी भाषी क्षेत्रों में इसे ''जलकुम्भी'', ''पटपटा'' या ''समुद्र सोख'' के नाम जाना जाता है। यह खरपतवार बहुत ही तेजी के साथ अपनी वृद्धि करता है और लगभग बारह दिन में इस पौधे की संख्या दुगुनी हो जाती है। यह खरपतवार अधिक अम्लीय या क्षारीय जल में भी आसानी से उग सकता है।

जलकुम्भी की उत्पत्ति दक्षिण अमेरिका के ब्राजील देश से हुई। वैज्ञानिकों के अनुसार वर्ष 1896 में जलकुम्भी का पौधा ब्राजील से भारतवर्ष आया और आज ये हमारे देश के चार लाख हैक्टेयर जल क्षेत्र में पाया जाता है। जलकुम्भी विष्व के लगभग अस्सी देशों में अपनी पैठ बना चुका है, इसके फैलाव के सम्बन्ध में विशेषज्ञों का यह भी मानना है कि इसके पौधों की सुन्दर एवं बनावट के कारण पर्यटक इस खरपतवार को अपने साथ अपने देशों में ले गए जिसके कारण आज जलकुम्भी विश्व के लगभग सभी महाद्वीपों जैसे एशिया, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया एवं न्यूजीलैण्ड में पाया जाता है।

जलकुम्भी में 96% जल, 0.04% नाइट्रोजन, 0.06% फॉस्फोरस, 0.2% पोटेशियम, 3.5% कार्बनिक तत्व और 1% लौह तत्व जैसे–सोडियम, कैल्शियम, और क्लोराइड आदि पाए जाते

है। वहीं अनेक प्रकार के अमीनों अम्ल जैसे—लाइसिन, बैलिन, ल्यूसिन, आइसोल्यूसिन और फिनाइलएलानिन आदि भी जलकुम्भी में प्रचुर मात्रा में पाए जाते है। खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा किये गए एक शोध के अनुसार तालाबों की नगरी के रूप में प्रसिद्ध मध्य प्रदेश के जबलपुर जिले के अधिकांश तालाबों का अस्तित्व संकट में है, जिसका मुख्य कारण तालाब में जलकुम्भी खरपतवार की उपस्थिति है। वर्तमान में जबलपुर शहर में घरों, औद्योगिक इकाइयों, डेयरी और बस्तियों से निकलने वाला अपशिष्ट जल नालों एवं तालाबों में मिलता है। सीवेज जल (Sewage Water) में नाइट्रोजन की मात्रा अधिक होती है जो कि मूत्र की उपस्थिति के कारण होती है। यही नही घरेलू अपशिष्ट युक्त जल में फॉस्फेट भी अधिक मात्रा में मिलता है इसका मूल कारण घर में कपड़े धोने या बर्तन साफ करने वाले साबुन है जिसमें फॉस्फेट पाया जाता है। अतः नाइट्रोजन एवं फॉस्फेट युक्त अपशिष्ट जल, तालाबों एवं अन्य जलाशयों में मिलकर उन्हें प्रदूषित करता है। लेकिन जल स्त्रोतों में प्रचुर मात्रा में नाइट्रोजन एवं फॉस्फेट की उपस्थिति खरपतवारों की वृद्धि के लिए वरदान साबित हुई है। हाल ही में किए गए अध्ययनों से पता चला है कि जलीय खरपतवार बहुत ही तेजी के साथ जलाशयों में फैल जाते हैं और जल में उपस्थित अनेक प्रकार के पोषक तत्वों को अवशोषित कर लेते है जिससे जलीय जीवों जैसे मछलियों आदि का विकास धीमा हो जाता है। वहीं इनकी तेजी से वृद्धि के कारण पानी में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है, जिससे जलीय जन्तुओं की वृद्धि रूक जाती है और जन्तुओं की मृत्यु भी हो सकती है। जलकुम्भी युक्त तालाबों में बहुत बड़ी संख्या में मक्खी, मच्छर पनपते है जो कि तालाब के आसपास के क्षेत्रों में अनेक प्रकार के रोगों जैसे मलेरिया और डेंगू आदि को फैलाते है। सर्वेक्षणों में यह भी पाया गया है कि जलकुम्भी वाले जलाशयों में जल का स्तर दो से चार गुना तक जलकुम्भी रहित जलाशयों की अपेक्षा नीचे चला जाता है, क्योंकि जलकुम्भी वाष्पोत्सर्जन के द्वारा बड़ी मात्रा में जल को नष्ट करते है। इसलिए इसे समुद्र सोख भी कहते है। वहीं खेतों से निकलने वाले कृषि रसायन, कीटनाशक एवं उर्वरक भी तालाबों में मिलकर जलकुम्भी की संख्या को बढ़ाते है जिससे जलाशयों का जलस्तर घटता जाता है।

जलकुंभी कैसे फैलती और प्रजनन करती है ?

जलकुंभी मुख्यतः बाढ़ के पानी, नदियों और नहरों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलती है। मिट्टी में दबे बीजों द्वारा भी इसका फैलाव होता है। इसका प्रजनन बीजों या पौधे की

बढ़वार द्वारा होता है। एक पौधा 5000 तक बीज उत्पन्न कर सकता है। इसके बीज पानी के नीचे मिट्टी (कीचड़) में कई वर्षों तक दबे पड़े रह सकते हैं, जो अनुकूल परिस्थिति आने पर उग जाते हैं। मुख्य पौधे से कई तने (नाल) निकल आते हैं जो छोटे—छोटे पौधों को जन्म देते हैं, तथा बड़े होने पर मुख्य पौधे से टूटकर अलग हो जाते हैं। इसमें प्रजनन की इतनी अधिक क्षमता होती है कि एक पौधा 9—10 महीनों में एक एकड़ पानी के क्षेत्र में फैल जाता है। अनुकूल परिस्थितियों में जलकुंभी सिर्फ 10—12 दिन में अपनी संख्या दुगनी कर लेते हैं।

जलकुंभी से होने वाले नुकसान

जलकुंभी से पानी में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है जिससे मछलियों की वृद्धि के अलावा अन्य जलीय वनस्पतियों और जीवों का दम घुटने लगता है। सिंघाड़े एवं कमल की खेती वाले जलीय क्षेत्रों के लिए यह अभिशाप है, क्योंकि इसके कारण सिंघाड़े एवं कमल की खेती करना नामुमकिन हो जाता है। यह पानी के बहाव को 20 से 40% तक कम कर देती है। बड़े बांधों में जलकुंभी बिजली उत्पादन को प्रभावित करती है। जलकुंभी की उपस्थिति के कारण पानी के वाष्पोत्सर्जन की गति 3 से 8 प्रतिशत तक अधिक बढ़ जाती है। जिससे पानी का जल स्तर तेजी से कम होने लगता है। जलकुंभी से ग्रसित पानी के क्षेत्र मक्खी, मच्छरों के लिये स्वर्ग है जिसके कारण विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ फैलती है, और पशुओं के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में पीने का स्वच्छ पानी भी उपलब्ध नहीं हो पाता है।

जलकुंभी के नियंत्रण के उपाय

तालाबों और सिंचाई नहरों की जलकुंभी को श्रमिकों द्वारा निकलवाया जा सकता है। पर यह विधि बहुत मंहगी है और सिर्फ छोटे स्थानों के लिये ही संभव है। झीलों और बड़ी नदियों की जलकुंभी को मशीनों द्वारा निकलवाना वैसे तो कारगर विधि है, पर थोड़े समय बाद उन्हीं स्थानों पर जलकुंभी

फिर से उग जाती है, तथा बार–बार इस विधि का प्रयोग करना मंहगा पड़ता है एवं इस विधि में प्रयोग के लिए उपयुक्त मशीनें आसानी से हर जगह उपलब्ध भी नही है। कुछ शाकनाशी जैसे कि 2–4–डी, ग्लाइफोसेट या पेराक्वाट (Peraquat) द्वारा जलकुंभी का अच्छा और तेजी से नियंत्रण होता है परंतु भारत जैसे देश में रासायनिक विधियाँ पर्यावरणीय एवं सामाजिक कारणों से कम प्रचलित हैं।

जलकुंभी का जैवकीय नियंत्रण

जलकुम्भी के जैवकीय नियंत्रण विधि में एक विशेष प्रकार के कीट (सुरसरी) का उपयोग काफी प्रभावशाली, सस्ती एवं कारगर पाया गया है। यह एक स्वचालित प्रक्रिया है और इसे एक बार करने के बाद बार–बार नहीं अपनाना पड़ता है। इस विधि में पर्यावरण एवं अन्य जीवों तथा वनस्पतियों पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है। हालांकि इस विधि में अन्य की अपेक्षा समय ज्यादा लगता है।

जैविक कीटों का भारत में आयात

ब्राजील आदि देशों में जो जलकुंभी के मूल उत्पत्ति क्षेत्र हैं, 70 से भी अधिक कीट एवं चिचड़ी (माइट) आदि प्रजाति के जीव जलकुंभी का भक्षण करते हुये पाये गये परंतु मात्र 5–6 कीटों और चिचड़ी (माइट) की कुछ प्रजातियों को ही जैवकीय नियंत्रण के लिये उपयुक्त माना गया। इनमें से कुछ सुरसरी और शलभ प्रजातियों को जलकुंभी के जैवकीय नियंत्रण के लिये आस्ट्रेलिया, अमेरिका, सूडान आदि देशों में छोड़ा गया जहाँ इन्होंने जलकुंभी को नियंत्रित करने में अहम भूमिका निभाई। दूसरे देशों में इन जैविक कीटों की सफलता से प्रभावित होकर भारत में भी 3–4 कीटों और एक चिचड़ी (माइट) की प्रजाति को 1982 में फ्लोरिडा और आस्ट्रेलिया से बंगलौर में आयात किया गया। संघरोध प्रयोगशालाओं में सघन वर्णात्मक परीक्षणों के बाद भारत सरकार ने सुरसरी की दो प्रजाति क्रमशः *नियोकेटिना आइकोर्नी* एवं *नियोकेटिना ब्रुची* को 1983 एवं माइट की प्रजाति *"ओर्थोगेलुमना टेरेब्रा"* को 1985 में बाहर के वातावरण में छोड़ने की अनुमति दे दी। आज ये कीट भारत में हर प्रदेश में फैल चुके हैं। जहाँ ये जलकुंभी का कम या अधिक स्तर पर जैवकीय नियंत्रण कर रहे हैं। भारतीय परिवेश में जलकुम्भी नियंत्रण के लिए सुरसरी ज्यादा प्रभावशाली पाया गया है।

सुरसरी (Weevil) का जीवन चक्र

सुरसरी की दो प्रजातियाँ है जो कि आमतौर पर एक जैसी दिखती हैं पर इन्हें लक्षणों के आधार पर अलग–अलग

नियोकेटिना आइकोर्नी

नियोकेटिना ब्रुची

पहचाना जा सकता है। दोनों ही प्रजातियाँ जलकुंभी पर एक समय में ही साथ–साथ मिल सकती हैं। वयस्क सुरसरी जलकुंभी की पत्तियों को खुरच –खुरच कर खाती हैं। खुरचन के निशानों से जलकुंभी पर इनकी उपस्थिति का आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है। मादा सुरसरी जलकुंभी के तने या पत्ती की सतह के नीचे अपने अण्डे देती है जो सफेद रंग के और 3/4 मिलीमीटर लम्बे होते हैं। 7–14 दिनों में अण्डों से लार्वा (ग्रब) निकल आते हैं जो 75 से 90 दिन बाद कायान्तरण करने योग्य हो जाते हैं। कायान्तरण करने के लिये लार्वा (ग्रब) जलकुंभी की सूक्ष्म जड़ों को अपने चारों ओर लपेटकर एक सुरक्षित गाँठनुमा स्थान बना लेते हैं और प्यूपेषन में चले जाते हैं। जहाँ ये 14– 20 दिन में वयस्क बन जाते हैं। वयस्क सुरसरी 30 से 200 दिन तक जिन्दा रह सकती है। एक मादा अपने जीवन काल में 150 से 800 अण्डे तक दे सकती है। सबसे अधिक अण्डे मादा सुरसरी अपने जीवन काल के दूसरे–तीसरे सप्ताह में देती है। *नियोकेटिना ब्रुकी* प्रजाति *नियोकेटिना आइकोर्नी* से आकार में थोड़ा बड़ी होती है और पीठ के बीचों बीच इस पर एक हल्के गहरे रंग का धब्बा सा होता है।

कीट जलकुंभी को कैसे नष्ट करते हैं ?

सुरसरी के जातक अण्डों से निकलकर तने में छेद कर इसमें घुस जाते हैं और धीरे–धीरे उत्तकों को खाकर तने को खोखला कर देते हैं जिससे जलकुंभी ऊपर से सूखने लगती है। वयस्क सुरसरी द्वारा पत्ती को खुरच–खुरच कर खाने के

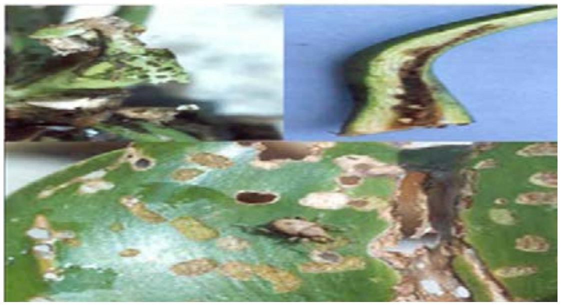

कारण पत्ती में हरित लवक की कमी होने लगती है। वयस्क सुरसरी कोमल और बिना खुली पत्तियों को काफी पसंद करती है जिस कारण जल कुंभी का पौधा इनके आक्रमण से छोटी अवस्था में ही कमजोर हो जाता है। ग्रब उत्तकों को खा–खाकर तना खोखला कर देते हैं जिससे उनमें पानी भरने लगता है और धीरे–धीरे पौधा सूखकर पानी में ही सड़–गल कर डूब जाता है। साल दर साल यह प्रक्रिया चलती रहती है। जिससे कुछ वर्षों में ही ऐसे जलाशयों में जलकुंभी का पूर्णतयः नियंत्रण हो जाता है। ये कीट नदियों या नहरों की जलकुंभी की अपेक्षा झीलों और तालाबों की जलकुंभी, जहाँ पानी ठहरा हुआ रहता है, अधिक सक्रिय रहते हैं। अतः झीलों और बड़े–बड़े जलाशयों में जलकुंभी का जैवकीय नियंत्रण आसानी से किया जा सकता है।

जलकुंभी को जैविक विधि से नियंत्रण करने में लगने वाला समयः–

कीटों द्वारा जैविक विधि में जलकुंभी का नियंत्रण समुद्र या जलाशयों में उत्पन्न होने वाली लहरों के समान होता है। जैसे लहरें एक ऊँचाई ग्रहण करने के बाद खत्म हो जाती है और इस लहर के बाद फिर दूसरी लहर आती है इसी प्रकार एक बार कीटों द्वारा जलकुंभी नष्ट करने के बाद कीटों की संख्या भी कम हो जाती है। जलकुंभी का घनत्व फिर बढ़ने लगता है। जिसके अनुपात में ही कीटों की संख्या भी धीरे–धीरे बढ़ने लगती है और इतनी अधिक हो जाती है कि जलकुंभी को फिर नष्ट कर देती है। सामान्य तौर पर जलकुंभी को पहली बार नष्ट करने में कीटों द्वारा 2 से 4 साल तक लग जाते हैं। यह इस बात पर भी निर्भर करता है कि कीट उस जलाशय में कितनी मात्रा में छोड़े गये हैं। अधिक कीट छोड़ने पर, नियंत्रण शीघ्र होता है। दूसरी और अन्य बार जलकुंभी का नियंत्रण होने में सामान्यतः कम समय लगता है। एक बड़े तालाब या झील में इस प्रकार साल दर साल जलकुंभी का कीटों द्वारा नियंत्रण किया जाता है, जिससे धीरे–धीरे वहाँ कई वर्षों से जमा होने वाले बीजों का भी घनत्व कम होने लगता है और 7–8 लहरों के बाद वहाँ से जलकुंभी पूरी तरह से नष्ट हो जाती है। मध्यप्रदेश के कई जलाशयों की जलकुंभी 6 से 8 सालों में कीटों द्वारा नियंत्रित हो गई। मणिपुर, बंगलौर एवं हैदराबाद आदि शहरों में भी इन कीटों द्वारा जलकुंभी को नियंत्रण करने में सफलता मिली। सीमित मात्रा में शाकनाशी का जैविक कीटों के साथ प्रयोग करने से जलकुंभी का नियंत्रण और जल्दी किया जा सकता है।

कीटों को छोड़ने का समयः–

वैसे तो वयस्क सुरसरी जलकुंभी पर कभी भी छोड़ी जा सकती है। परंतु छोटे और जलकुंभी की बढ़वार के समय कीटों को छोड़ना अधिक फायदेमंद होता है क्योंकि कोमल पत्तियों को खाकर मादा अधिक तेजी से प्रजनन करती है। जिससे कीटों को स्थापित होने में कम समय लगता है। कीटों को मानसून खत्म होने पर छोड़ना अधिक उपयुक्त रहता है क्योंकि वर्षा ऋतु में बाढ़ आदि आने का खतरा बना रहता है जिससे छोड़े गये कीट पानी के साथ ही बहकर कहीं और जा सकते हैं।

कीटों को कहाँ छोड़ना चाहिये ?

कीटों को ऐसे जलाशयों में छोड़ना चाहिये जहाँ पहले से कीट न हो और अगर हो तो कम मात्रा में हो। यदि पत्ती की सतह पर खुरच–खुरच कर खाने के निशान है तो का प्रतीक है कि उक्त कीट जलाशय में है। अगर निशान अधिक है तो उसी मात्रा में कीटों की संख्या भी अधिक होती है। कम पानी वाले जलाशयों में कीटों को छोड़ने से अधिक फायदा नहीं होता है, क्योंकि गर्मियों में उक्त जलाशय सूख जाते है, जिससे जलकुम्भी की जड़ें मिट्टी पकड़ लेती हैं। क्योंकि कायान्तरण के लिये लार्वों का प्यूपेशन जड़ों में होता है अतः ऐसी अवस्था में उचित स्थान न मिलने के कारण कायान्तरण की प्रक्रिया बाधित हो जाती है और कीटों की संख्या में आशातीत वृद्धि नहीं हो पाती है। अतः कीटों को जलकुंभी को नष्ट करने के लिये ऐसे जलाशयों में ही छोड़ना चाहिये जहाँ पानी पर्याप्त मात्रा और गहराई में हो। ऐसा भी देखने में आया है कि ऐसी जगहों पर भी कीटों द्वारा आंशिक सफलता मिलती हैं जहाँ जलाशय का क्षेत्रफल तो अधिक होता है पर कम क्षेत्र ही गहरा होता है। ऐसे जलाशयों में बरसात होने पर तो पानी काफी एकत्र हो जाता है और जलकुंभी भी काफी फैल जाती है। पर गर्मी आते ही पानी तेजी से सूखने लगता है जिससे जलकुंभी की जड़ें मिट्टी में दबने लगती हैं और पौधे सूखने लगते हैं। ऐसा होने पर उचित कायान्तरण के लिये स्थान

न मिलने के कारण कीटों की संख्या नहीं बढ़ पाती जिससे जैविक नियंत्रण में आशातीत सफलता नहीं मिलती।

कितने कीट छोड़ें

जैविक नियंत्रण की जल्दी और अच्छी सफलता के लिये जितने अधिक कीट छोड़े जायेंगे, उतना ही अधिक और शीघ्र लाभ होगा। उदाहरण के लिये एक एकड़ क्षेत्रफल की जलकुंभी में 4–6 महीने में ही नियंत्रण करने के लिये लगभग एक लाख कीटों की आवश्यकता होगी। पर इतने अधिक कीट पालना और छोड़ना संभव नहीं हो पाता है। अतः कम से कम इतने कीट छोड़ने की कोशिश करना चाहिये कि छोड़े गये कीट वहाँ प्रजनन कर अपनी संख्या स्वतः ही बढ़ा लें और जलकुंभी को नष्ट कर दें। एक एकड़ क्षेत्रफल के जलाशय में कम से कम 500 से 1000 वयस्क कीट छोड़ना चाहिये। जलाशय को कई भागों में बाँट कर एक भाग में कम से कम 100 कीट छोड़ने से पूरे जलाशय में कीट समान रूप से वृद्धि कर जलकुंभी का जैविक नियंत्रण करते हैं।

सुरसरी को पालकर संख्या बढ़ाना

खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर में किये गए शोध निष्कर्षों के अनुसार छोटे प्लास्टिक या सीमेंट के टबों में 20–25 छोटे आकार की जलकुंभी को रखकर इनमें 40–50 वयस्क छोड़ देते हैं। मादा वयस्क पत्तियों या डंठलों के उत्तकों में छेदकर उनमें अण्डे देना शुरू कर देते हैं। 7 से 10 दिन बाद इन वयस्क सुरसरी को इन पौधों से निकालकर पुनः अण्डे देने के लिये ताजे जलकुंभी के पौधों पर छोड़ देना चाहिये। इन वयस्कों को 5–6 बार अंडे देने के लिये उपयोग में ला सकते हैं। इसके बाद नये निकले वयस्कों का प्रयोग करना चाहिये। अंडों से युक्त जलकुंभी को बड़े टब में डाल देते हैं। ये बड़े टब फाइबर या सीमेंट के होते हैं। करीब 60 से.मी. घेरे वाले और 20 से.मी. गहरे टब में 160 जलकुंभी के पुष्ट पौधे आ जाते हैं। टबों में पानी का स्तर बराबर बनाये रखना चाहिये। जलकुंभी के पौधों की अच्छी वृद्धि के लिये टबों में 200 ग्राम गोबर, 40 ग्राम सुपर फास्फेट और 10 ग्राम यूरिया प्रति क्यूबिक मीटर के हिसाब से मिलाना चाहिये। लगभग तीन महीनों बाद इन पौधों से सुरसरी के वयस्क बनना शुरू हो जाते हैं। हर 15 दिन के अंतर से इन टबों से वयस्क सुरसरी दूसरी जगहों में डालने के लिये या भेजने के लिये निकालते रहना चाहिये। समय–समय पर बड़े टबों से पुराने पौधे निकालकर ताजे पौधे डालते रहना चाहिये।

जलीय खरपतवार (जलकुम्भी) के संभावित उपयोग

सामान्यतः प्रकृति में उपलब्ध हर वनस्पति का कुछ न कुछ उपयोग एवं फायदे होते है, उसी प्रकार जलकुम्भी के अनेक उपयोग भी हैं जिसे नीचे वर्णित किया गया है :

1. जलकुम्भी में जल से भारी धातुओं को सोखने की क्षमता होती है। जिसके कारण इनका उपयोग प्रदूषित जल से भारी धातुओं जैसे कैडमियम, निकिल और लोहा आदि को हटा कर जल को स्वच्छ करने के लिए किया जा सकता है।
2. जलीय खरपतवार जलकुम्भी का उपयोग इथेनॉल और बायोगैस बनाने में किया जा सकता है। फिलीपीन्स, इन्डोनेशिया एवं दक्षिण भारत में कुछ जगहों पर इसका उपयोग फाईल, पेपर, रस्सी, बैग, मैट, टोकरी और अन्य सजावट के सामान बनाने के लिए किया जा रहा है।
3. जलकुम्भी का उपयोग एक उत्तम खाद बनाने में भी किया जा सकता है।
4. कई शोध लेखों में यह बताया गया है कि ताईवान एवं वियतनाम में इसके औषधीय गुणों के कारण लोग अपने भोजन एवं सलाद में शामिल कर इसका उपयोग करते है।
5. फिलीपीन्स के निवासी इसका प्रयोग सौन्दर्य प्रसाधन एवं त्वचा सम्बन्धी रोगों के निवारण के लिए इसके रस को नीबू के रस के साथ मिलाकर प्रयोग करते है।
6. आयुर्वेद विशेषज्ञों के अनुसार जलकुम्भी में ऐसे तमाम गुण होते है जो आजकल की जीवनशैली के कारण होने वाले विभिन्न रोग जैसे– थाइराइड, हाई बीपी, अस्थमा तथा खांसी, जुखाम, बुखार, अल्जाइमर इत्यादि में विशेषज्ञ की सलाह अनुसार औषधी के रूप में इसका प्रयोग कर लाभ प्राप्त कर सकते है।

आज यह आवश्यक है कि जलीय खरपतवार जलकुम्भी के बारे में सामान्य जनमानस को जागरूक किया जाए और इससे उत्पन्न होने वाली समस्याएँ और नियंत्रण के उपायों तथा उपयोग से अवगत कराया जाए। जलकुम्भी का नियंत्रण जैविक विधि यानि कीटों द्वारा किया जा सकता है। औषधी गुणों के कारण इसका आयुर्वेद में उपयोग है तथा इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के लघु एवं कुटीर उद्योगों में भी किया जा सकता है, जिससे हमारे ग्रामीण युवक स्टार्टअप शुरू कर स्वयं एवं दूसरों के लिए रोजगार पैदा करते हुए धन अर्जित कर सकते है। अभी इस क्षेत्र में, विशेष रूप से उपयोग के बारे में और अधिक शोध कार्य करने की आवश्यकता है, जिससे आने वाले समय में जलीय खरपतवार रोजगार का साधन बन कर जल के प्रदूषण की समस्या का समाधान भी कर सके तथा इसका उपयोग कर लाभ प्राप्त किया जा सके।

अश्वगंधा का महत्व एवं खरपतवार प्रबंधन

आनंद सैयाम[1], रितिका चौहान[1], अल्पना कुम्हरे[1], सालिकराम मोहारे[2], हिमांशु महावर[1]
[1]भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

परिचय

अश्वगंधा/विंटरचेरी *(विथानिया सोम्निफेरा)* भारत के कई हिस्सों में उगाई जाने वाली प्रमुख औषधीय फसलों में से एक है। यह सोलेनेसी परिवार का एक औषधीय पौधा है। हालांकि औषधीय रूप से पूरे पौधे का उपयोग विभिन्न मानव रोगों के इलाज के लिए किया जाता है परन्तु, जड़ और पत्तियां व्यावसायिक रूप से उपयोग किए जाने वाले प्रमुख भाग हैं। इसकी पत्तियों में सूजनरोधी, यकृतविषकारी रोधी (एंटी–हेपेटॉक्सिक) और जीवाणुरोधी गुण होते हैं। अश्वगंधा में अर्बुदरोधी (एंटी–ट्यूमर), एंटी–आर्थराइटिक इम्यूनोसप्रेसिव, निम्न रक्तचाप मंदनाड़ी (हाइपोटेंशन ब्रैडीकार्डियक) और श्वसन उतेजक जैसे चिकित्सकीय गुण पाए जाते हैं। यह भूमध्यसागरीय मूल का है जो भारत के शुष्क और अर्ध–शुष्क भागों में स्वाभाविक रूप से बढ़ता है। इसकी खेती वर्षा आधारित फसल के रूप में पूरे उत्तर, पश्चिम और मध्य भारत के कुछ भागों में की जाती है।

अश्वगंधा का महत्व

आयुर्वेद, भारत में प्रचलित दवा की प्रणाली, 6000 ईसा पूर्व (चरक संहिता, 1949) से देखी जा सकती है। उस समय, अश्वगंधा को एक रसायन के रूप में इस्तेमाल किया जाता था और इसकी जड़ों का उपयोग टॉनिक, कामोत्तेजक, मादक, मूत्रवर्धक, कृमिनाशक, कसैले, थर्मोजेनिक और उत्तेजक के रूप में किया जाता था। इसकी जड़ों से घोड़े ("अश्व") जैसी गंध आने के कारण, इसका नाम अश्वगंधा पड़ा। यह आमतौर पर बच्चों के क्षीणता (दूध में मिलाकर देने से बच्चों के लिए सबसे अच्छा टॉनिक होता है), वृद्धावस्था से दुर्बलता, गठिया, वात की खराब स्थिति, ल्यूकोडर्मा, कब्ज, अनिद्रा, तंत्रिका टूटने, गोइटर इत्यादि बीमारियों में प्रयोग किया जाता है। अश्वगंधा की जड़ों के पेस्ट का उपयोग जोड़ों की सूजन के इलाज के लिए भी किया जाता है। इसके उपचार के सामयिक अनुप्रयोग को बहुछिद्रिल फोड़ा (कार्बनकल), छाले (अल्सर) और दर्दनाक सूजन से राहत दिलाने में अत्यधिक प्रभावी पाया गया है। आमतौर पर औषधीय प्रथाओं में उपयोग की जाने वाली इसकी जड़ को अक्सर अन्य उपचारों के साथ मिश्रित किया जाता है, जैसे की सांप के जहर और बिच्छू के डंक जैसे पदार्थों में पाया जाता है। यह श्वेत प्रदर (ल्यूकोरिया), फोड़े, पेट फूलना, और बवासीर जैसी बीमारियों के उपचार में भी सहायता करता है। अत्यधिक गुणकारी और प्रभावी होने के कारण, नागोरी अश्वगंधा को श्रेष्ठ किस्म माना जाता है, जो इसे अधिकतम लाभ के लिए एक लोकप्रिय विकल्प बनाता है। इष्टतम परिणामों के लिए, ताजी पिसी हुई अश्वगंधा के पाउडर का उपयोग करने की सलाह दी जाती है। अश्वगंधा की कड़वी पत्तियों का इस्तेमाल बुखार, दर्द और सूजन इत्यादि को कम करने के लिए गया है। इसके फूलों में भी कसैले, रेचक, मूत्रवर्धक और कामोत्तेजक जैसे गुण पाएं गए हैं। एक कसैले और सेंधा नमक के साथ मिलाने पर बीजों के कृमिनाशक गुणों को कॉर्निया से सफेद धब्बों को हटाने के लिए सूचित किया गया है। हिस्टीरिया, चिंता, स्मृति हानि और बेहोशी के इलाज के लिए अक्सर अश्वगंधारिष्ट नामक हर्बल उपचार का उपयोग किया जाता है।

केंद्रीय तंत्रिका तंत्र की अनुभूति–बढ़ावा देने की क्षमता पर प्रभाव

अश्वगंधा एक लोकप्रिय आयुर्वेदिक हर्बल सप्लीमेंट है जिसे एक प्रकार के रसायन के रूप में वर्गीकृत किया गया है जिसे मेध्यारासायन कहा जाता है। आमतौर पर मन, बुद्धि और मानसिक क्षमताओं से संबंधित होता है। अश्वगंधा के समान मेध्यारासायन का उपयोग संज्ञानात्मक क्षमताओं और स्मृति प्रतिधारण को बढ़ाने के लिए किया जाता है। शोध में देखा गया है की मेध्यारासायन के उपयोग से सिर की चोट या लंबी बीमारी के कारण स्मृति हानि का अनुभव करने वाले व्यक्तियों, बुजुर्गों, और विशेष रूप से स्मृति की कमी वाले बच्चों में संज्ञान बढ़ाने में सहायता मिली है।

तंत्रिका अपह्यासी (न्यूरोडीजेनेरेटिव)रोगों पर प्रभाव

न्यूरिटिक एट्रोफी और सिनैप्टिक लॉस अल्जाइमर और अन्य न्यूरोडीजेनेरेटिव बीमारियों में संज्ञानात्मक हानि के प्रमुख कारण हैं। कई अध्ययनों से पता चला है कि अश्वगंधा में न्यूरिटिक एट्रोफी और सिनैप्टिक नुकसान को कम करने, रोकने और कभी–कभी उलटने की भी क्षमता है। अश्वगंधा में बीमारी के चरण की परवाह किए बिना अल्जाइमर, पार्किंसंस और हंटिंगटन जैसे न्यूरोडीजेनेरेटिव विकारों का इलाज करने की क्षमता है। इसलिए इसका उपयोग शुरुआती चरणों में

किया जा सकता है, यहां तक कि हल्के भूलने की अवस्था में भी। एक अध्ययन से यह पता चला है कि अश्वगंधा की जड़ों में ग्लाइकोविथेनोलाइड्स विथफेरिन–ए और साइटोइंडोसाइड्स VII-X होते हैं, जो अल्जाइमर रोग मॉडल में आईबोटेनिक एसिड के कारण होने वाले संज्ञानात्मक दोषों को प्रभावी ढंग से दूर करते पाए गए हैं।

आयुर्वेद में तंत्रिका टॉनिक के रूप में

अश्वगंधा आयुर्वेदिक टॉनिक में एक सामान्य घटक है, जो कायाकल्प और जीवन रक्षक के साथ–साथ प्रतिरक्षा में सुधार, रोग के जोखिम को कम करने और दीर्घायु को बढ़ावा देने के लिए जाना जाता है।

कोलेस्ट्रॉल के स्तर को नियंत्रित करने में अश्वगंधा की भूमिका

शोध में पाया गया है कि अश्वगंधा को चूर्ण के रूप में लेने से कोलेस्ट्रॉल और ट्राइग्लिसराइड का स्टार कम होता है। इसके अतिरिक्त, यह एचडीएल (लाभकारी कोलेस्ट्रॉल) के स्तर को बढ़ाने में भी सहायता कर सकता है।

प्रतिरक्षा में अश्वगंधा की भूमिका

शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर होने पर वह आसानी से बीमारियों की चपेट में आ सकता है। हालांकि, अश्वगंधा में एक इम्यूनोमॉड्यूलेटरी प्रभाव होता है जो प्रतिरक्षा प्रणाली को शरीर की जरूरतों के अनुकूल बनाने में मदद करता है, जो बीमारियों से लड़ने में उपयोगी हो सकता है।

प्रबंधन

आमतौर पर विथानिया की खेती देर से होने वाली बरसात और सर्दियों के मौसम की फसल के रूप में की जाती है। आमतौर पर विथानिया की खेती, पछेती खरीफ और रबी फसल के रूप में की जाती है। प्रारंभिक अवस्था में धीमी गति से बढ़ने वाली फसल होने के कारण, यह तेजी से बढ़ने वाले खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा से बुरी तरह प्रभावित हुई। खरपतवार प्रबंधन के अभाव में फसल की वृद्धि और उत्पादकता गंभीर रूप से प्रभावित होती है। हाथ से निराई करना सबसे प्रभावी खरपतवार नियंत्रण उपायों में से एक है लेकिन मजदूरों की अनुपलब्धता और इसमें शामिल उच्च लागत, खरपतवारों को समय पर हटाने में बाधा डालती है। यदि उचित खरपतवार प्रबंधन रणनीति लागू नहीं की गई तो फसल पूरी तरह से विफल हो सकती है। इसलिए, खरपतवार प्रबंधन पर विभिन्न खरपतवारनाशियों की प्रभावकारिता, सर्दियों में बोई गई अश्वगंधा फसल *(विथानिया सोमनीफेरा)* की उत्पादकता नामक प्रयोग के तहत खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों को इस फसल पर लागू किया गया था। उपयुक्त रासायनिक ध्जैव रासायनिक शाकनाशी का पता लगाने के लिए उचित खरपतवार प्रबंधन के लिए हाथ से निराई के आधुनिक युग में यह बहुत उपयोगी हो सकता है। खरपतवारों की समस्या को कम करने के लिए, रासायनिक शाकनाशियों और वानस्पतिक का उपयोग करके एक उपयुक्त, आसान और लागत प्रभावी खरपतवार प्रबंधन विकसित किया जाना है।

- पोषक तत्वों और प्रकाश के लिए फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा शुरू करने से पहले खरपतवारों का प्रबंधन करना महत्वपूर्ण है। प्रारंभिक विकास अवस्था के दौरान एक हाथ से निराई करना अश्वगंधा के पौधों को खरपतवारों के विकास को मात देने और नियंत्रित करने के लिए पर्याप्त है। जैसे–जैसे पौधे परिपक्व होते हैं, वे स्वाभाविक रूप से खरपतवारों के विकास को अवरूद्ध कर देते हैं। हाथ से निराई करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि कुदाल से जड़ों को नुकसान न पहुंचे।
- खरपतवार नियंत्रण के लिए बीज बोने से पहले आइसोप्रोटूरोन 200 ग्राम/एकड़ या ग्लाइफोसेट 600 ग्राम/एकड़ की मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।
- रोपण के 30 दिन बाद एक बार क्विजलोफॉप–पी–एथिल का छिड़काव करने से विथानिया की फसल में खरपतवार की वृद्धि को प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सकता है। परिणामों से पता चला कि क्विजालोफॉप–पी–एथिल, क्लोडिनोफॉप–पी–प्रोपर्गिल और हेलॉक्सीफॉप आर–मिथाइल अश्वगंधा की फसल पर बिना किसी गंभीर प्रभाव के खरपतवारों को 70–80% नियंत्रित करने में प्रभावी थे।
- वैकल्पिक खरपतवार नियंत्रण विधियों, जैसे कि खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए जैविक मल्च के उपयोग को प्राथमिकता दी जानी चाहिए क्योंकि वे इससे मिट्टी की नमी भी संरक्षित रहती हैं और खरपतवारों के विकास को भी रोकता हैं। पिछली फसल के गेहूं या अश्वगंधा के भूसे को जैविक आच्छादन के रूप में उपयोग करने से खरपतवार की वृद्धि कम होती है। जैविक गीली घास का उपयोग हानिकारक रसायनों को कम कर सकता है और खरपतवार नियंत्रण के लिए अधिक टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल दृष्टिकोण को बढ़ावा दे सकता है।
- एक अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने हाथ से निराई की तुलना उद्भव पूर्व वाले शाकनाशी आवेदन (आइसोप्रोट्यूरॉन/ग्लाइफोसेट का उपयोग करके) के साथ एकल हाथ से निराई के संयोजन से की। उन्होंने पाया कि हाथ से निराई के तीन दौर शाकनाशी और एकल हाथ से निराई के संयोजन से अधिक प्रभावी थे।

बुवाई तिथि का रबी फसल के खरपतवारों पर प्रभाव

मृणाली गजभिये[1], मनीष भान[1], के.के. अग्रवाल[1] एवं नरेंद्र कुमार[2]
[1] जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2] भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

खरपतवार तथा फसलें दोनो ही पौध जगत में अपनी–अपनी भागीदारी प्रस्तुत करते है। जिस प्रकार फसल जीवित है, उसी प्रकार खरपतवार भी जीवित है तथा उसे भी अपना जीवन–चक्र पूर्ण करने हेतु अनुकूल वातावरण की आवश्यकता होती है। फसल की अधिकतम उत्पादकता के लिए सही समय पर बुवाई आवश्यक है परंतु खरपतवार भी इसी अनुकूल वातावरण का लाभ लेकर अंकुरित होते है और फसल से महत्वपूर्ण संसाधन जैसे की सूर्य प्रकाश, जल (मृदा नमी), स्थान एवं पोशक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा करते है। रबी फसल की बुवाई सामान्यतः मध्य अक्टूबर से मध्य नवंबर तक कर दी जाती है। समय से बुवाई करने से फसल को अनुकूल वातावरण, तापमान, सापेक्षित आद्रता, सूर्य प्रकाश आदि मिलते हैं, जो कि फसल वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक है। अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए समय पर बुवाई के साथ, खरपतवार, सिंचाई तथा पोषण प्रबंधन के साथ उत्तम प्रजाति का चयन महत्वपूर्ण होता हैं। फसलों की बुवाई के समय में हेर–फेर करने से खरपतवार अंकुरण के अनुकूल समय तथा फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्घा के क्रांतिक समय में अंतर आता है। रबी फसलों में देरी से बवाई कर खरपतवारों की समस्या से कुछ हद तक बचा जा सकता है। परंतु विलंब से बुवाई करने पर फसल को पुष्प एवं दाने भरने के समय अधिक तापमान का सामना करना पड़ता है, जिससे दानों की गुणवत्ता पर प्रभाव पड़ता है। उत्तम सिंचाई व्यवस्था एवं सही समय पर सिंचाई करने से, देरी से बुवाई में तापमान के प्रभाव को कुछ कम किया जा सकता है। फसलों में होने वाली हानियों में सबसे ज्याद हानि खरपतवार से 37 प्रतिशत तक होती है, जो आज के समय में चिंतनीय विषय है।

वैश्विक जलवायु बदल रही है, बढ़ता तापमान और कार्बन डाइऑक्साइड का बढ़ता स्तर जलवायु परिवर्तन के मुख्य प्रेरक हैं। फसल–चक्र के समय जलवायु परिवर्तन एवं खरपतवार आज किसान के लिए एक दुविधा का विषय बना हुआ है। बढ़ते तापमान एवं वर्षा की कमी से रबी फसल की उपज मे कमी देखी गई है। यह बदलाव खरपतवार तथा फसल विकास एवं जीवन–चक्र को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते है, परिणाम स्वरूप जलवायु परिवर्तन प्रभाव फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा भी प्रभावित होती है। खरपतवार भी स्वयं में बदलाव कर बदले जलवायु में स्वयं को विकसित करके प्रकृति में बने रहते हैं क्योंकि प्रकृति का नियम है जो प्रतिस्पर्धा में विजयी होगा वही प्रकृति में स्थान बनाएगा।

जलवायु परिवर्तन के वर्तमान परिदृश्य में समय से बुवाई के साथ खरपतवार नियंत्रण करना भी महत्वपूर्ण है जिससे फसल की अधिक उपज प्राप्त की जा सके है। जलवायु परिवर्तन के साथ नई और आक्रामक खरपतवार प्रजातियों का समय से नियंत्रण करना कठिन होता है और उपज से बहुत हानि होती है।

तालिका 1 : रबी फसलों के प्रमुख खरपतवार

चौड़ी पत्तियों वाले खरपतवार	बथुआ, सेंजी, हिरणखुरी, जंगली पालक, आदि।
सकरी पत्तियों वाले खरपतवार	जंगली जई, गुल्ली डंडा, मोथा आदि।
अनाज फसलों वाले खरपतवार	बथुआ, हिरणखुरी, मोथा, वनबटरी, अकरी, जंगली जई, जंगली पालक आदि।
दलहन एवं फसलों वाले खरपतवार	हिरणखुरी, मोथा, जंगली मटर (वनबटरी), अकरी, बथुआ आदि।

एनागेलिस अरवेनसीस

मेडिकागो डेंटीकुलाटा

चिनोपोडियम एल्बम

साइप्रस रोटेंडस

अल्टरनेन्थेरा सेसिलिस

रबी फसल मे देरी से बुवाई क्यो?

असिंचित क्षेत्रों मे सिंचाई की व्यवस्था नही होती है परंतु अगर सितंबर माह में पर्याप्त मात्रा में वर्षा होती है तो नमी का सदुपयोग करने के लिए जल्दी या समय से बुवाई की जा सकती है। इसके विपरीत सिंचित क्षेत्रों में सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था होने से तथा खरपतवार नियंत्रण के उद्देश्य से देरी से बुवाई की जा सकती है। परंतु अंकुरण के समय कम तथा परिपक्वता के समय अधिक तापमान से बचाने के लिए ऐसी उन्नत किस्मों का चयन करना, जिसका अंकुरण कम तापमान पर तथा परिपक्वता अधिक तापमान पर हो सके, जरूरी होता है।

रबी में, गेहूं की बुवाई देरी से करने के दो महत्वपूर्ण लाभ हो सकते है पहला, खरपतवार नियंत्रण और दूसरा, खरीफ की फसल की कटाई के तुरंत बाद शीघ्र बढ़ने वाली फसलें जिससें मृदा नमी एवं समय का सदुपयोग हो सके।

बुवाई तिथि का खरपतवार एवं उपज पर प्रभाव :

अनुसंधान के एक परिणाम के अनुसार रबी की फसल में देरी से बुवाई करने से तापमान में कमी के कारण न केवल खरपतवार अंकुरण, घनत्व तथा शुष्क भार के साथ–साथ उपज में भी कमी आती है (तालिका–2)। यह कमी 03 सितम्बर की बुआई की तुलना में 18 दिसम्बर की बुआई में 91.86 प्रतिशत तथा 02 जनवरी की बुआई में 78.77 पाई गई, जोकि पिछेती बुआई की बहुत गंभीर समस्या है, किन्तु इस समस्या अथवा उपज में कमी को समय पर सिंचाई तथा ताप रोधी किस्मों का चुनाव करके काफी हद तक कम किया जा सकता है।

तालिका 2 : गेहूं की बुवाई विभिन्न तिथियों पर करने से खरपतवार घनत्व (%)

बुवाई का तिथि	खरपतवार घनत्व (प्रतिशत)						
	ऐनागेलिस अरवेंसिस	ऑल्टरनेन्थरा सेसिलिस	मेडिकागो डेंटीकुलेटा	चिनोपोडियम एलबम	सइप्रस रोटेंडस	कुल घनत्व	कुल शुष्क भार
03 दिसम्बर	100	100	100	100	100	100	100
18 दिसम्बर	101.16	100.97	97.15	101.80	100	99.08	98.34
02 जनवरी	**97.07**	**90.85**	**93.36**	**99.18**	**90.18**	**91.51**	**93.03**

जब बुवाई के तिथियों में बदलाव करते है तब फसल भी खरपतवार की संख्या एवं शुष्क भार में कमी से सम्मुख होती है साथ ही साथ फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा के समय में वृद्धि होती है। फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा की समय अवधि विभिन्न फसलों की भिन्न–भिन्न होती है। ऐसी फसले जो लघु अवधि के साथ प्रारंभ में धीमी गति से बढ़ने वाली होती है, उनको खरपतवारों से अधिक प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है और इन्हे ज्यादा खरपतवार प्रबंधन की आवश्यकता होती है।

तालिका 3: विभिन्न फसलों का खरपतवार के लिए प्रतिस्पर्धा क्रान्तिक समय अवधि

फसल	क्रान्तिक समय अवधि (बुवाई के बाद दिन)
गेहूं	30–45
चना	30–60
सरसों	15–40
अरहर	15–60
मटर	30–45
अलसी	20–45

बुवाई के समय तथा फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा का प्रभाव जड़ तना पर भी पड़ता है, विशेष रूप से बारहमासी खरपतवार जिनका प्रसार जड़, कंद आदि से होता है।

पौधे के जीवन–चक्र में तापमान का प्रभाव उनके अंकुरण, युवा अवस्था एवं पुष्पन जैसी विभिन्न अवस्थाओं पर ज्यादा पड़ता है। यह खरपतवार के जीवन–चक्र के लिए फसल कि आवश्यकता के अनुसार सही समय पर खरपतवार नाशको की संतुलित मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।

बुवाई के समय अनुसार चयन कर खरपतवार के प्रकोप उचित रासायनिक नियंत्रण एवं अन्य विधियों का समावेश से कम कर सकते है, इसके लिए फसल की आवश्यकता के अनुसार सही समय पर खरपतवारनाशियों की अनुशंसित मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।

समय के अनुसार खरपतवारों का जीवन–चक्र भी अलग–अलग होता है। यही गुण उनके नियंत्रण को कठिन बनाता है। ऐसी स्थिति में दो या दो से अधिक खरपतवार नियंत्रण की विधियों को अपनाया जा सकता है। इसके लिए सर्वप्रथम आवश्यक है कि खरपतवार की पहचान की क्या वह एक बीज पत्री/द्वि बीजपत्री/मोथा कुल का खरपतवार है, साथ ही साथ इसके जीवन–चक्र जैसे कि एक वर्षीय/द्विवर्षीय/बहुवर्षीय का भी अध्ययन करना आवश्यक होता है। इसके पश्चात इसके नियंत्रण का समय जो कि फसल उत्पादन में फसल की शुरूआती अवस्था में होता है। यही समय फसल की उपज को तय करता है।

फसल चक्र भी एक खरपतवार नियंत्रण का प्रभावी उपाय होता है। अधिकांश खरपतवारों का एक महत्वपूर्ण लक्षण है कि वह किसी फसल विशेष में आते हैं। अगर प्रतिवर्ष एक ही एक प्रकार की फसल की बुवाई की जाए तो इन खरपतवारों की प्रभाविता बढ़ती हैं परंतु फसलों को अदल–बदलकर बोने से फसलों तथा मृदा सूक्ष्म जलवायु में अंतर आता है जिससे एक ही प्रकार के खरपतवारों की प्रभाविता कम होती है।

अतः खरपतवार को नियंत्रित करने के लिए देर से बुवाई के साथ विभिन्न प्रबंधन नीतियों को एक साथ समन्वित किया जा सकता है जिससे शाकनाशी पर निर्भरता कम होगी और पर्यावरण भी संरक्षित होगा।

समुद्री खरपतवार (सी–वीड) तरल उर्वरक एवं कृषि में इसका महत्व

तरूण कुर्रे
कृषि विज्ञान केंद्र, मुंगेली (छ.ग.)

जलीय खरपतवार जिसकों मुख्यतः समुद्री खरपतवार के नाम से जाना जाता है, नदी के मुहाने, समुद्रतल एवं समुद्र में पाये जाते है। समुद्री खरपतवार (Seaweed) समुद्र के तली में स्थित शैवाल (Algae) हैं जिनमें लाल, भूरे तथा हरे शैवाल की कुछ प्रजातियाँ आती हैं। जो समुद्रीय पारिस्थितिकी में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। इन्हीं में कई छोटी मछलियाँ अपना बसेरा भी बना लेती हैं। यह समुद्री परिस्थितिकी का एक अहम हिस्सा हैं इन्हीं शैवाल को समुद्री खरपतवार (seaweed) भी कहा जाता है, जिनको समुद्र से निकाल कर कई तरह कि रेसिपी में उपयोग किया जाने लगा। यह सेहत के लिए बहुत ही अच्छा होता हैं। इसमें कई तरह के पोषक तत्व पाये जाते हैं। समुद्रीय जल की लवणीय प्रकृति इस प्रकार के खरपतवार के वृद्धि को प्रेरित करता है। ये खरपतवार समुद्र के महत्वपूर्ण नवीनीकृम जैव स्त्रोत है। इनमें से अधिकतर खरपतवार भोजन, विभिन्न उद्योगो के कच्चे पदार्थ तथा तरल उर्वरक या कम्पोस्ट के रूप में खेत में मृदा सुधारक के रूप में काम आते हैं।

समुद्री खरपतवार की उत्पत्ति –

समुद्रीय खरपतवार मुख्य रूप से समुद्र में पाये जाते है, उन स्थानों में अनकी बहुलता होती हैं जहां पर्याप्त मात्रा में सूर्य की किरण प्रवेश करती है। विभिन्न वातावरणीय कारकों में से प्रकाश, तापमान, लवणीयता, जल की गति एवं पोषक तत्व इनके वृद्धि एवं विकास को प्रभावित करता है। समुद्री खरपतवार विभिन्न प्रकाश की उपस्थिति में वृद्धि करते हैं। समुद्री खरपतवार को प्रकाश संश्लेषण के लिये मुख्यतः अकार्बनिक कार्बन, जल, प्रकाश एवं विभिन्न खनिज आयन की आवश्यकता होती है। समुद्र में जाये जाने वाले नत्रजन, स्फूर, पोटाश, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर, आयरन, मैग्नीज, कापर, जिंक, मोलिब्डेनम, सोडियम, क्लोरिन, बोरान, कोबाल्ट आदि समुद्रीय खरपतवार की वृद्धि के लिये उपयुक्त होते हैं। कुछ समुद्रीय खरपतवार को अल्प मात्रा में एक या दो कार्बनिक कार्बन की भी आवश्कता होती है। समुद्रीय खरपतवार के लिए विटामिन बी–12 की भी आवश्यकता होती है जो समुद्र में अल्प मात्रा में पाया जाता है।

सीवीड फर्टिलाइजर

सीवीड खाद एक जैविक खाद (Organic fertilizer) है। यह मुख्यतः समुद्री घासों (Kelp), शैवाल (Algae) आदि को प्रोसेस करके बनाई जाती है। सीवीड खाद ज़्यादातर पौधों में डाली जा सकती है। यह खाद लिक्विड और दाने (पैलेट) दोनों रूप में बाजार में मिलती है। यह फर्टिलाइजर पर्यावरण के लिए सुरक्षित और जैव अपघटित (Bio-degradable) है।

समुद्रीय खरपतवार तरल उर्वरक (Sea Weed Liquid Fertilizer) –

समुद्री खरपतवार एवं इसके व्युत्पादित उत्पाद को विश्व के विभिन्न भागों में उर्वरक के रूप में उपयोग किया जाता है। समुद्रीय खरपतवार में अधिक मात्रा में घुलनशील पोटाश, अन्य खनिज एवं कुछ सूक्ष्म पोषक तत्व पाये जाते हैं जो पौधों द्वारा सरलतापूर्वक अवशोषित कर लिये जाते हैं। एवं पौधों में पोषक तत्वों की कमी को नियंत्रित करते है। समुद्रीय खरपतवार में उपलब्ध कार्बोहाईड्रेट एवं अन्य कार्बनिक पदार्थ मृदा की प्रकृति को परिवर्तित करके जल धारण क्षमता को बढ़ाता है। अतः देश के विभिन्न भागों में समुद्रीय खरपतवार तरल रूप में या सीधे कम्पोस्ट के रूप में कृषि में प्रयोग किया जा रहा है। विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा शोध में पाया गया है कि रासायनिक उर्वरक के अकेले प्रयोग करने के बजाय समुद्रीय खरपतवार के निष्कर्ष (Extract) या कम्पोस्ट के साथ प्रयोग करने से इसकी दक्षता बढ़ जाती है। तरल समुद्रीय खरपतवार एक्सट्रेक्ट को बीज, मृदा या फसल में छिड़काव करने से बीज अंकुरण प्रतिशत, पोषक तत्व अवशोषण, वृद्धि एवं उपज बढ़ जाते है। यह निष्कर्ष (Extract) पौधों मे कीट, बीमारी एवं लवण सहनशील क्षमता को भी बढ़ाता है। रासायनिक उर्वरक भूमि की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा को अयोग्य बनाता है। जबकि समुद्री खरपतवार निष्कर्ष (Extract) न केवल भूमि की उर्वरता, जल धारण क्षमता को बढ़ाता है बल्कि अल्प मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्व भी प्रदान करता है।

तरल समुद्रीय खरपतवार के लाभदायक प्रभाव पर शोध –

विश्व के विभिन्न विश्वविद्यालयों में किये गये शोध से ज्ञात हुआ है कि तरल समुद्री खरपतवार, उर्वरक के रूप में कार्य करता है। इसके अतिरिक्त :–

1 बीज का समुद्री खरपतवार निष्कर्ष (Sea Weed Extract) में कुछ समय तक भिंगोकर बोने से अंकुरण क्षमता में वृद्धि, जड़ की लम्बाई में वृद्धि, फसल वृद्धि दर में गति एवं उत्तरजीविता दर में वृद्धि होती है।

2 पौधे को Sea Weed से पोषित करने पर जिरेनियम में फूलों की संख्या में वृद्धि, अंगूर की स्वाद में वृद्धि, फल के सड़न में कमी एवं खीरे की उपज में वृद्धि पाया गया।

3 आलू, मक्का, टमाटर, सेब, भिण्डी, एवं संतरा को समुद्री खरपतवार निष्कर्ष (Sea Weed Extract) से उपचारित करने पर इसकी उपज में वृद्धि पाया गया।

समुद्री खरपतवार (Sea Weed) में महत्वपूर्ण पादप हार्मोन्स –

समुद्री खरपतवार निष्कर्ष के अन्य महत्वपूर्ण तत्व हार्मोन्स है। समुद्री खरपतवार निष्कर्ष के प्रमुख हार्मोन्स आक्सिन, जिबरेलिन, साइटोकाइनिन एवं बीटेन है। ये हार्मोन्स पौधों के वृद्धि के लिये आवश्यक है। हालांकि पौधों को इन हार्मोन्स की अल्प मात्रा में आवश्यकता होती है। परंतु फिर भी महत्वपूर्ण होते है।

1. आक्सिन :– पौधों में विभिन्न प्रकार के आक्सिन होते है एवं सभी का अपना अलग–अलग महत्व होता है। इसमें से इनका प्रमुख कार्य वृद्धि दर को संतुलित करना है। ये वृद्धि उत्तेजक एवं वृद्धि नियामक दोनो का कार्य करता है। ये पौधों में जड़ के विकास में भी सहायक होता है। गलत समय में कलिका के निर्माण को भी नियंत्रित करता है।

   समुद्री खरपतवार निष्कर्ष पौधे में आक्सिन हार्मोन उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। क्योंकि समुद्री खरपतवार निष्कर्ष में उपलब्ध सूक्ष्म पोषक तत्व के द्वारा पौधे में महत्वपूर्ण किण्वक बनता है। जिससे हार्मोन्स उत्पादन में सहायता मिलती है।

2. साइटोकाइनिन :– साइटोकाइनिन पौध हार्मोन्स का अन्य महत्वपूर्ण समूह है। ये पौधे में सामान्य वृद्धि प्रकिया को प्रारंभ एवं उत्तेजित करता है। समुद्री खरपतवार निष्कर्ष (Sea Weed Extract) में उपलब्ध साइटोकाइनिन पौधे के ओज में भी वृद्धि करता है। क्योंकि पत्ती में गतिशील पोषक तत्व की सान्द्रता बढ़ जाती है। जिससे प्रकाश संश्लेषण क्रिया में सहायता मिलती है। समुद्री खरपतवार निष्कर्ष (Sea Weed Extract) कुछ सीमा तक पौधे को पाला से भी बचाता है। ये पौधे में समय से पहले परिपक्वता को भी घटाता है।

3. बीटेन :– बीटने पौधे में परासरणी प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। ये पौधे मे पानी के अवशोषण को बढाकर विषम शुष्क परिस्थिति से पौधों को बचाता है।

समुद्री खरपतवार तरल उर्वरक बनाने की विधि –

समुद्री खरपतवार तरल उर्वरक (Sea Weed Liquid Fertilizer), समुद्री खरपतवार के विभिन्न प्रजाति से बनाये जाते है। सबसे पहले समुद्री खरपतवार को साफ पानी से धोया जाता है। तत्पश्चात् तेज धूप में अच्छी तरह सुखाकर पावडर में परिवर्तित किया जाता है। प्रयोग विधि के अनुसार तरल रूप में रूपांतरित किया जाता है। इसके अतिरिक्त समुद्री खरपतवार को पावडर फार्म में मृदा सुधारक के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। समुद्री खरपतवार निष्कर्ष में आवश्यकता के आधार पर सान्द्रता में परिवर्तन कर सकते है।

कृषि में समुद्री खरपतवार का महत्व –

1. बुवाई से पहले यदि बीज को समुद्री खरपतवार उर्वरक से उपचारित किया जाता है तो अंकुरण क्षमता में वृद्धि होती है तथा जड़ भी मजबूत होते है। पादप वृद्धि चक्र में समुद्री खरपतवार निष्कर्ष ओज को भी बढ़ाता है। क्योंकि इसमें लगभग 70 प्रमुख पोषक तत्व तथा किण्वक पाये जाते है।
2. समुद्री खरपतवार निष्कर्ष में पौधों के वृद्धि एवं विकास के लिये सभी पोषक तत्व (0.3% नत्रजन, 0.1% फास्फोरस एवं 0.1% पोटाश एवं कुछ मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्व) एवं अमिनो एसिड पाये जाते है।
3. समुद्री खरपतवार निष्कर्ष में जैव सक्रियक पाये जाते है जिससे कम्पोस्ट बनाने में इसकी सड़न दर मे वृद्धि होती है।
4. समुद्री खरपतवार निष्कर्ष पौधे में फलने एवं फूलने में भी सहायता करता है। अधिकांश फल प्रजाति में समुद्री खरपतवार निष्कर्ष के प्रयोग से फल की गुणवत्ता में वृद्धि पाया गया है।
5. समुद्री खरपतवार निष्कर्ष के प्रयोग से कीट एवं बीमारी प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है।
6. समुद्री खरपतवार निष्कर्ष के गंध से कीट पौधे की ओर आकर्षित नही होते। अतः ये प्रतिकर्षी कारक के रूप में भी कार्य करता है।
7. समुद्री खरपतवार उर्वरक को मृदा में उपचार करने से प्रतिजैविकी का उत्पादन होता है। जिससे मृदा जनीत रोग के निदान में सहायता मिलती है।

8. समुद्री खरपतवार को पलवार के रूप में प्रयोग करने से मृदा में नमी अधिक समय तक संचय रहता है।
9. मृदा में धनायन विनिमय क्षमता (Cation exchange capacity) को बढ़ाकर पोषक अवशोषण में सहायता करता है।
10. समुद्री खरपतवार निष्कर्ष में महत्वपूर्ण हार्मोन्स होते है जैसे – आक्सिन, साइटोकाइनिन एवं बीटेन जो पौधो की वृद्धि एवं विकास में सहायक होते है।
11. अंततः ये फसल की उपज में वृद्धि करके कृषकों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाता है।

समुद्री खरपतवार (Sea Weed) के लाभ –

1. पोषक तत्वों से भरपूर

चूंकि यह एक अलग परिस्थितिक तंत्र में पनपते हैं इसलिए इनमें कुछ बेहद अलग तरह के पोषक तत्व पाये जाते हैं। जमीन पर पाये जाने वाले पादपों से तैयार खाद से अलग इनमें NPK बहुत कम मात्रा में होता है, वास्तव मे सिर्फ पोटेशियम (K) बहुत कम मात्रा में पाया जाता है। इसमें लगभग 3 दर्जन तत्व जिनमें पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्निशियम, आयरन, ज़िंक, आयोडीन एवं कई तरह के विटामिन जो अन्य किसी भी तरह के खाद में नही पाये जाते हैं जिनमे विशेष रूप से Sea weed Polysaccharides सिर्फ sea weed में पाया जाता है।

2. पौधों द्वारा आसानी से अवशोषित कर लिया जाता है

समुद्री खरपतवार तरल उर्वरक पौधों द्वारा बहुत ही आसानी से सोख लिया जाता है इसलिए कम समय में पौधों को ज्यादा शक्ति प्रदान करने के लिए भी यह बहुत कारगर खाद है। इसमें मौजूद Alginic Acid पानी के पृष्ठ तनाव को कम कर देता है जिससे पौधा आसानी से इसमें मौजूद पोषक तत्वों को जल्दी अवशोषित कर लेता है । पौधे के जड़ों की वृद्धि अच्छी तरह से होती है । अच्छी गुणवत्ता के फल और सब्जियों के लिए समुद्री खरपतवार उर्वरक का उपयोग जरूर करना चाहिए ।

3. मिट्टी की गुणवत्ता को बढ़ाता है

यह मिट्टी में मिलकर प्रकृतिक रूप से मिट्टी की उर्वरा शक्ति को कई गुना बढ़ा देता है, यह मिट्टी के परिस्थितिक तंत्र को और सुचारु रूप से चलाने मे काफी सहायक है। यह मिट्टी मे कार्बनिक पदार्थ को बढ़ता है और कई तरह के सूक्ष्मजीवों को सक्रिय करता है जो मिट्टी को और भी ज्यादा असरदार बनाते है।

मिट्टी में मौजूद सूक्ष्मजीव की उर्वरता को तेज़ कर देता है जिससे उनकी संख्या तेज़ी से बढ़ने लगती है और यह तो हम सभी को पता ही है कि चाहे गमले की मिट्टी हो या फिर बगीचे की सूक्ष्मजीवों की संख्या ही मिट्टी को उपजाऊ बनाती है ।

4. सुरक्षित और विष रहित

यह चूंकि समुद्री पादपों से बनता है इसलिए यह पूरी तरह से सुरक्षित है , व्यावसायिक रूप से बनाने में भी किसी प्रकार के रसायन का प्रयोग नहीं किया जाता है इसलिए यह इन्सानों, जानवरों एवं पौधों आदि सभी के लिए सुरक्षित है । इस खाद का प्रयोग करने से पर्यावरण को हानि नही होती है और हमें अच्छी गुणवत्ता के फल और सब्जियां प्राप्त होते हैं।

पौधों में उपयोग का तरीका और मात्रा

1. मिट्टी की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए

अपने गार्डेन की मिट्टी की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए इसे आप 1 लीटर पानी में 3 मिली मिलाकर डाल सकते हैं । ज्यादा पौधे हैं तो उसी अनुपात में किसी बाल्टी में मिला लें और 150–200 मिली मिश्रण हर गमले या पौधे में डाल दें । नाप के लिए पुराने सिरिंज (Syringe) का इस्तेमाल किया जा सकता है।

2. पत्तियों पर छिड़काव के लिए

पत्तियों पर छिड़काव करने से और भी ज्यादा लाभ मिल सकता है, इससे कम मात्रा में मिश्रण का नुकसान होगा व ज्यादा से ज्यादा फायदा लिया जा सकता है। छिड़काव के लिए 1 लीटर पानी में 1 मिली समुद्री खरपतवार उर्वरक का उपयोग करें ।

3. कट फ्लावर और फल की कटाई के समय

कट फ्लावर के लिए कटिंग करने के 10 दिन पहले इसका इस्तेमाल करने से फूल ज्यादा दिन चलेंगे इसी प्रकार फल व सब्जियों को तोड़ने के 10 दिन पहले इसका एक डोज़ अच्छे फल देगा ।

4. अपघटक के रूप में

घर के जैविक कचरे को तेज़ गति से अपघटित करने मे मदद करता है ।

5. बीजों को लगाने के पहले

बीजों को मिट्टी में लगाने के पहले इसके मिश्रण में भिगो कर रखने से बीजों के अंकुरित होने की संभावना काफी बढ़ जाती है ।

उपयोग करने में अंतराल

Liquid seaweed Fertilizer को किसी भी मौसम मे तथा पौधे के किसी भी वृद्धावस्था पर प्रयोग किया जा सकता है। इसको आप पौधों पर महीने मे दो बार यानि हर 15 दिन पर दे सकते हैं।

यांत्रिक विधियों द्वारा खरपतवार प्रबंधन

वी.के. चौधरी, विकास सिंह, मुनि प्रताप साहू, नरेन्द्र कुमार और अल्पना कुम्हरे
भा.कृ.अनु.प.– खरपरवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत एक कृषि प्रधान देश रहा है, हमारे देश की कुल आबादी का 70 प्रतिशत भाग आज भी अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। कृषि में खरपतवार प्रबंधन हमेशा से एक चुनौती पूर्ण कार्य रहा है। कई शोधकर्ताओं ने यह बताया है कि यदि समय पर खरपतवार प्रबंधन न किया जाये, तो फसल की उपज में 33–89 प्रतिशत तक कमी आंकी गई है। खरपतवार प्रबंधन के लिए हाथ से निदाई करना अत्यंत कठिन कार्य है तथा इसे करने में अधिक श्रम तथा पूँजी की आवश्यकता होती है। श्रम तथा पूँजी की बचत हेतु यांत्रिक विधियों का इस्तेमाल खरपतवार प्रबंधन के लिए किया जा सकता है, जिसमे विभिन्न छोटे छोटे यंत्रों का सहारा लिया जाता है। खास बात यह है कि यांत्रिक विधियों का उपयोग कर ऐसे फसलों में भी खरपतवार प्रबंधन किया जा सकता है, जहाँ रसायनो का इस्तेमाल पूर्णतया प्रतिबंधित होता है जैसे– जैविक कृषि इस दशा में यांत्रिक विधियों द्वारा खरपतवार प्रबंधन अति महत्वपूर्ण हो जाता है। विभिन्न यांत्रिक विधियाँ जिनका प्रयोग विभिन्न प्रकार के खरपतवार नियंत्रण हेतु किया जाता है, वह निम्नलिखित हैं:–

1. हाथ से निराई

इस विधि में खरपतवारों को खुरपी की सहायता से हाथ से निकाला जाता है। यह विधि खरपतवार प्रबंधन की एक उत्तम विधि है। इस विधि से खरपतवार प्रबंधन करने पर उपज सर्वाधिक प्राप्त होती है। इस विधि में प्रति इकाई श्रम व समय अधिक लगता है। परंपरागत कृषि में खरपतवार प्रबंधन हेतु यह एक प्रचलित विधि थी। समय के साथ प्रक्षेत्र श्रमिकों की कमी होती गई, इस कारण इस विधि के प्रयोग में कमी आ गई। फिर भी यह विधि आज भी खरपतवार प्रबंधन की एक उत्तम व सर्वाधिक फसल उपज प्रदान करने वाली विधि है। इसमें अंतर पंक्ति तथा अन्तः पंक्ति में उपस्थित खरपतवारों को आसानी से हटाया जा सकता है।

स्त्रोत:– https://agritech.tnau.ac.in/agriculture/agri_weemgt_weedcontrolmethods_clip_image009.jpg

2. हस्त चलित हो द्वारा निराई

यह भी खरपतवार की एक उत्तम विधि है, इस विधि का प्रयोग पंक्ति में बोई गई फसलों में आसानी से किया जाता है। इसको दो कतारों के बीच में चलाया जाता है तथा कतारों के बीच उगे खरपतवार मृदा के 1–2 सेंमी गहराई से काट दिए जाते हैं। इस विधि द्वारा हाथ से निदाई विधि की तुलना में कम समय व श्रम में अधिक क्षेत्र के खरपतवारों को आसानी से हटाया जा सकता है।

स्त्रोत :– AICRP ऑन फार्म इम्प्लीमेंट

3. खुदाई

इस विधि में ऐसे खरपतवार जिनका प्रसार भूमिगत कंद, प्रकंद, जड़, तना आदि से होता है इनको समूल खोदकर बाहर निकाला जाता है। बहुवर्षीय खरपतवार जैसे कांस, दूब घास, मोथा आदि के नियंत्रण हेतु यह उत्तम विधि है। इसके प्रयोग से बहुवर्षीय खरपतवारों का सम्पूर्ण नियंत्रण संभव है।

स्त्रोत https://www.google.com/url?sa=i&url=https%3A%2F%2Fwww.palmers.co.nz%2Fblogs%2Fgardening-inspiration%2Fdouble-digging-the-

इस विधि में बहुवर्षीय खरपतवारों को जमीन से निकालने हेतु कुदाली या गैती का इस्तेमाल किया जाता है ।

4. कटाई / मड़ाई (कटिंग / मोविंग)

आमतौर पर गैर–फसल वाले क्षेत्रों, लॉन और बगीचों में घास काटने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाता है, जहां लॉन और बगीचों के सौंदर्य में सुधार के लिए घास को एक समान ऊंचाई तक काटा जाता है। आम तौर पर घास काटने के लिए विभिन्न उपकरण जैसे हँसिया, दराँती या लॉन घास काटने की मशीन का उपयोग किया जाता है।

स्त्रोतः– https://www.google.com/url?sa=i&url=https%3A%2F%2Fwww.topcropmanager

5. ड्रेजिंग और चेनिंग

यांत्रिक बल की सहायता से खरपतवारों को उनकी जड़ तथा प्रकंद सहित हटाना ड्रेजिंग कहलाता है। जलीय खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए आमतौर में ड्रेजिंग और चेनिंग विधि का उपयोग किया जाता है। तैरते हुए जलीय खरपतवारों को श्रृखंला बनाकर हटाया जाता है। खरपतवारों को इकट्ठा करने के लिए जल निकायों पर एक बहुत भारी जंजीर को यांत्रिक बल द्वारा खींचा जाता है और एकत्रित हुए खरपतवारों को जल निकायों से बाहर कर देते है।

स्त्रोतः– https://www.google.com/url

6. अन्तः सस्य क्रिया (इंटरकल्चर ओपरेशन)

कतारों में बोई जाने वाली फसलों में खरपतवार नियंत्रण के लिए अन्तः सस्य क्रिया एक बहुत ही प्रभावी और सस्ता तरीका है। अन्तः सस्य क्रिया में खरपतवार नियंत्रण के लिए जिस उपकरण का उपयोग किया जाता है उसमे एक ब्लेड होती है जो मिट्टी की सतह के ठीक नीचे खरपतवारों को काटने का काम करता है और इस तरह खरपतवारों सूखकर नष्ट हो जाते है। साथ ही साथ यह सतह की मिट्टी को ढीला और सूखा भी बनाता है जिससे बाद में खरपतवारों के अंकुरण से बचा जा सके जब तक कि सिंचाई या बारिश न हो।

स्त्रोतः– https://kj1bcdn.b-cdn.net/media/72667/gf.jpeg?width=1200

7. जुताई

यह यंत्रो (हल) की सहायता से मिट्टी का वांछित स्थिति में हेरफेर करने की प्रकिया है जिसका उद्देश्य मिट्टी को भुरभुरा करना, रोपण के लिए खेत तैयार करना और फसल रोपण के बाद उगने वाले खरपतवार पर नियंत्रण प्राप्त करना है। जुताई छोटे पैमाने पर छोटे या हाथ से धकेलने वाले रोटरी टिलर जैसे औजारों की सहायता से तथा बड़े पैमाने पर ट्रैक्टर पर लगे हल से की जा सकती है। इसका मुख्य उद्देश्य खरपतवारों को नियंत्रित करना तथा पौधों के वृद्धि व विकास के लिए अनुकूल दशा उपलब्ध करना होता है। इसके द्वारा खरपतवार की आक्रामकता को भी कम किया जा सकता है क्योकि जुताई के दौरान ऊपर की मिट्टी नीचे तथा नीचे की मिट्टी ऊपर हो जाती है। अतः उपर की मृदा में उपस्थित खरपतवार बीज नीचे की सतह में चले जाते हैं, अधिक गहराई में जाने के कारण उनका उस फसल के दौरान फसलों में प्रभाव में कमी आती है।

चित्रः– कल्टीवेटर द्वारा जुताई

यांत्रिक विधि के लाभ

1. इस विधि के द्वारा खरपतवारों का सम्पूर्ण उन्मूलन संभव है, क्योकि यंत्रों की सहायता से खरपतवार को समूल बाहर निकालकर नष्ट किया जा सकता है।
2. इस विधि के द्वारा देशी प्रचलित विधियों की तुलना में कम श्रमिक के द्वारा अधिक क्षेत्र के खरपतवारों को निकाला जा सकता है।
3. इस विधि से खरपतवार नियंत्रण करने से समय व पूँजी की बचत होती है।
4. इस विधि द्वारा जैविक खेती में भी खरपतवार प्रबंधन किया जा सकता है, जहाँ रसायनों का प्रयोग पूर्णतया वर्जित होता है।
5. जलीय खरपतवारों का उचित प्रबंधन यांत्रिक विधि से ही सम्भव है , इसके लिए लम्बी चैन (जंजीर) की सहायता से खरपतवार को जलाशय से बाहर निकालकर नष्ट किया जाता है।
6. बहुवर्षीय खरपतवारों का समुचित नियंत्रण मात्र यांत्रिक विधि से संभव है । इस विधि के द्वारा यंत्रो की सहायता से 30–50 सेमी तक के खरपतवारों को खींचकर निकाला जा सकता है।

हानियाँः–

1. इस विधि का उपयोग ऐसी फसल में खरपतवार प्रबंधन हेतु कठिन हो जाता है । जिनकी बुआई छिड़काव विधि से की गई हो ।
2. यंत्रों के सुधार हेतु कुशल व दक्ष कारीगरों की आवश्यकता होती है, जिनकी उपलब्धता स्थानीय स्तर पर कम होती है।
3. फसली क्षेत्र में खरपतवार नियंत्रण करते समय विशेष सावधानियों की जरूरत होती है नही तो फसल क्षतिग्रस्त हो सकती है।

> वही भाषा जीवित और जागृत रह सकती है जो जनता का ठीक-ठीक प्रतिनिधित्व कर सके और हिंदी इसमें समर्थ है।

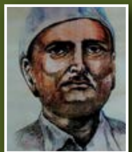

पीर मुहम्मद मूनिस

खंड- ब

फीड ब्लॉक के माध्यम से फसल अवशेष प्रबन्धन

अमित कुमार, राजेश कुमार, संजीवकुमार गुप्ता,
अभिजीत घटक एवं सूबोर्ना रायचौधरी
बिहार कृषि विश्वविद्यालय साबौर, भागलपुर (बिहार)

पशुपालन भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था में जीविकोपार्जन का प्रमुख स्त्रोत के रूप में जाना जाता है। जलवायु परिवर्तन के परिपेक्ष्य में इसकी अहमियत दिनों–दिन बढ़ती जा रही है। कृषि योग्य सीमित भू–भाग और फसल पैदावार में कमी ने किसानों का ध्यान पशुपालन की ओर आकृष्ट किया है। हमारे देश में जहां पशुओं को मुख्य रूप से फसल अवशेष पर रखा जाता है यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि पशुओं को प्रदान कि जाने वाली राशन पशु पोषण के हर मायने से पूर्ण हो अर्थात वह जानवरों की आवश्यकता को पूरा करने में सक्षम हो।

अधिकतम उत्पादन के साथ पशुपालन से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए जानवरों को अच्छे स्वास्थ्य की स्थिति में बनाए रखना वांछनीय है। इन सभी पहलुओं के मद्देनजर पूर्ण फीड ब्लॉक एक बहुत ही सटीक नवाचार के रूप में जाना जाता है। यह पशुओं को संतुलित आहार प्रदान करता है जिससे पशु का अच्छे स्वास्थ्य के साथ शारीरिक बढ़वार में वृद्धि होती है। दूध उत्पादन एवं मांस उत्पादन में वृद्धि होती है जिससे किसानों की आय में इजाफा होता है। इस नवाचार को अपनाकर पशुओं द्वारा उत्सर्जित मिथेन गैस की मात्रा को नियंत्रित किया जा सकता है।

ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन की दर कम करने में सहायता मिल सकती है। पशुओं में बांझपन की समस्या का प्रमुख कारण उसके आहार में पोषक तत्वों की कमी होती है। पूर्ण फीड ब्लॉक के माध्यम से इन सभी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। किसानों द्वारा खेत में फसल अवशेष और पुआल को जलाना पर्यावरण प्रदूषण का एक प्रमुख कारण है। फीड ब्लॉक नवाचार किसानों के लिए बेहतर विकल्प प्रस्तुत करता है जिसके माध्यम से खेत में पड़े फसल अवशेष और पुआल का उपयोग कर फीड ब्लॉक तैयार किया जा सकता है जो पशुओं के लिए संतुलित पोषक आहार के रूप में उपलब्ध रहेगा।

फसल उत्पादन के लिए प्रयोग में लाने के कारण चारा उत्पादन योग्य भूमि का क्षेत्रफल कम होता जा रहा है जो पशुओं में पोषक तत्वों की कमी का कारण बनता है। ऐसी स्थिति से निजात पाने में हमेशा फीड ब्लॉक एक बेहतर विकल्प प्रस्तुत करता है। वैज्ञानिक द्वारा स्थापित पशु आहार प्रदान करने में अधिकतर किसानों में जानकारी का अभाव होता है। ऐसी स्थिति में पूर्ण फीड ब्लॉक उनके लिए एक बेहतर विकल्प है। स्थानीय रूप से उपलब्ध कृषि औद्योगिक उप उत्पाद के साथ पेड़ के पत्ते, गन्ने का ऊपरी भाग एवं खरपतवार आदि को पूर्ण फीड ब्लॉक में शामिल कर किसानों की महंगे अनाज पर की निर्भरता को कम किया जा सकता है। एक आर्थिक रूप से व्यवहार्य तकनीक होने के अलावा, इसमें कई फायदे हैं जैसे कि आसान परिवहन, सस्ता भंडारण, बहु–पोषक की कमी को दूर करना, आसान हैं डलिंग और लागत को कम करता है। क्योंकि स्थानीय रूप से उपलब्ध फीड सामग्री का उपयोग किया जा सकता है। इसे लगभग एक वर्ष तक संग्रहीत किया जा सकता है और इसलिए यह चारे की कमी के मौसम में सहायक है। इस प्रकार फीड ब्लॉक पर आधारित पशुपालन व्यवसाय एक आर्थिक और व्यावहारिक उद्द्यम के रूप में जाना जाता है।

पूर्ण फीड ब्लॉक

पूर्ण फीड ब्लॉक एक बहुपोषक आहार है जो पशुओ की आवश्यकता को पूरा करने में सक्षम है। यह विभिन्न पोषक तत्वों को एक निश्चित अनुपात में चारा के साथ मिलाकर तैयार किया जाता है। यह एक संतुलित पशु आहार है जिसमे आवश्यक पोषक अवयवों को अच्छी तरह से मिश्रित कर मशीन के द्वारा उचित संपीड़न के साथ पूर्ण फीड ब्लॉक के रूप में तैयार किया जाता है। यह एक नवीनतम विकास है जिसके माध्यम से स्थानीय रूप से उपलब्ध पशु चारा संसाधनों की क्षमता का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है। साथ ही गैर–पारंपरिक संसाधन जैसे खरपतवार, समुद्री पौधे, पेड़ के पत्ते आदि का बेहतर तरीके से उपयोग करने का माध्यम प्रदान करता है। पूर्ण फीड ब्लॉक को मुख्यतः दो घटकों में विभाजित किया जाता है इसका एक हिस्सा विभिन्न प्रकार के चारे से बना होता है और दूसरा हिस्सा सान्द्र एवं सूक्ष्मपोषक तत्व से बना होता है।

प्रमुख चारे के रूप में भूसा, पुआल, गन्ने का ऊपरी हिस्सा, पेड़ का पत्ता, खरपतवार आदि शामिल किया जा सकता है। इसके सान्द्र भाग में मक्का, गेहूं, बाजरा, स्थानीय रूप से उपलब्ध कृषि उप–उत्पाद जैसे, गेहूं का चोकर, धान की बूसी, खली, चोकर, खनिजो का मिश्रण और नमक तथा फीड एडिटिव शामिल किया जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों में फसल अवशेषों के स्थान पर वन घास और पेड़ के पत्तों जैसे गैर–पारंपरिक चारा का उपयोग किया जाता है।

फीड ब्लॉक में पोषक तत्वों की मात्रा को पशु की आवश्यकता और उत्पादकता के अनुसार तय किया जाता है दुधारू पशुओं में दूध उत्पादन के अनुसार पोषक तत्व को नियंत्रित किया जा सकता है।

पूर्ण फीड ब्लॉक के अवयवः–

फीड अवयव	पारम्परिक	गैरपारम्परिक	मात्रा (प्रतिशत)
चारा	भूसा, पुआल, मक्का पत्ती एवं स्टोरवरकॉर्न, बाजरा, ज्वार पत्ती	पेड़ का पत्ता, खरपतवार, समुद्री पौधा, गन्ने का ऊपरी भाग	50 प्रतिशत
कंसन्ट्रेट (दानामिश्रण)	कृषि उत्पाद	कृषि उत्पाद	45 प्रतिशत
	मक्का, गेंहू, ओट, बाजरा	गेहूं का चोकर, धान की भूसी, खली, चोकर, फल अवशेष, राइसपोलिस	
खनिजो का मिश्रण	–	–	3 प्रतिशत
गुड़	–	–	1 प्रतिशत
विटामिन्स	–	–	सूक्ष्म अंक
नमक	–	–	1 प्रतिशत

दुधारू पशुओं में दूध उत्पादन के अनुसार सान्द्र/अनाज, कार्बोहाइड्रेट और कैल्शियम की मात्रा बढ़ाई जाती है। छोटे पशुओं में मांस उत्पादन के लिए पाले जा रहे पशु में प्रोटीन, ऊर्जा और विटामिन की मात्रा अधिक प्रदान की जाती है। गर्भवती पशु में चारे की मात्रा कम करके सान्द्र की मात्रा बढ़ाई जाती है जबकि बिसुखी की गाय के लिए चारे की मात्रा बढ़ाई जाती है। बीमार पशुओं के लिए तैयार की जाने वाली फीड ब्लॉक में एंटीबायोटिक और विटामिन एवं मिनरल को फीड एडिटिव के रूप में शामिल किया जाता है। पशु उत्पाद की गुणवत्ता एवं मात्रा को नियंत्रित करने हेतु आवश्यक रसायनिक अवयव को पूर्ण फीड ब्लॉक में शामिल किया जा सकता है। पशुओं में होने वाली संक्रामक बीमारी से बचाने के लिए आवश्यक टीके को फीड ब्लॉक में शामिल कर पशु की रोग प्रतिरोध क्षमता बधाई जा सकती है। प्राकृतिक आपदाओं के दौरान उपयोग के लिए एक सामान्य दैनिक राशन के रूप में पुआल अवयव की मात्रा अधिक प्रदान की जाती है। आपातकालीन स्थितियों के दौरान चुनौतियों का सामना करने के लिए, फीड ब्लॉक में आमतौर पर निम्नलिखित रचना होती है। 70 भाग पुआल, 15 भाग अनाज, 10 भाग गुड़, 3 भाग खनिज मिश्रण, 1 भाग यूरिया और 1 भाग नमक, जो पशुओं की सामान्य दैनिक आवश्यकता को पूरा करता है। प्रतिदिन 8–10 किलोग्राम दूध देने वाले पशुओं के लिए पुआल का अनुपात 66% तक कम किया जाना चाहिए, प्रतिदिन 10–15 किलो ग्राम दूध के लिए, 55% तक और प्रतिदिन 15–20 किलो ग्राम दूध के लिए, 45% तक। उच्च पैदावार के लिए बाईपास पोषक तत्वों को क्रमश% प्रोटीन और ऊर्जा स्त्रोतों के रूप में जोड़ा जा सकता है। पशु को अमीनो एसिड और फैटी एसिड की प्रत्यक्ष आपूर्ति बढ़ाने के लिए इसे एक घटक के रूप में शामिल किया जा सकता है। सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे आवश्यक एमिनो एसिड विटामिन, खनिज, बेंटोनाइट (बाइंडर), प्रोबायोटिक्स, एंजाइम, एंटीऑक्सिडेंट, प्रतिरक्षा–सुरक्षात्मक एजेंट, और एंटीटॉक्सिन को फीड एडिटिव्स रूप में दिया जा सकता है।

पूर्ण फीड ब्लॉक बनाने की विधि–

पूर्ण फीड ब्लॉक बनाने के लिए सबसे पहले अनाज आधारित अवयवों को छोटे आकार में पीस कर तैयार किया जाता है। उनके घटको को आपस में मिलाकर फीड ऐडिटिव्स, खनिज मिश्रण, यूरिया, गुड़ एवं नमक को अच्छी तरह आपस में मिलाया जाता है। अनाज के विभिन्न मिले हुए अवयवों को अच्छी तरह तैयार करके पुआल के ऊपर छिड़का जाता है साथ ही पुआल के साथ

उसे आपस में मिलाया जाता है। इस बात का ध्यान रखा जाता है कि मिश्रण समान हो गुरुत्वाकर्षण के कारण सामग्री अलग अलग नहीं होना चाहिए। मिश्रित सामग्री की एक निश्चित मात्रा हाइड्रोलिक प्रेस के अंदर रखा जाता है। स्वचालित या मैनुअल फीड ब्लॉकिंग मशीन में सघनता (3000–4000 पिएसआई) की प्रक्रिया के उपरांत फीड ब्लॉक बनकर बाहर निकलता है। फीड ब्लॉक बनाने के लिए उचित प्रसंस्करण की आवश्यकता होती है और इसे हाइड्रोलिक प्रेस का उपयोग करके कारखाने में बड़े पैमाने पर निर्मित किया जा सकता है। सघनता की प्रक्रिया के उपरांत पशु के लिए फीड घटकों का चयन करना मुश्किल हो जाता है। यह न केवल फीड में एकरूपता लाता है, बल्कि पुआल आधारित फीड की पैलेटेबिलिटी भी बढ़ाता है। फीड अपव्यय को कम करता है। मिश्रण और सघनता की प्रक्रिया से पुआल की पाचन शक्ति में भी थोड़ा सुधार होता है क्योंकि प्रत्येक पुआल कण में पोषक तत्व होता है जो सेल्युलोलाइटिक जीवाणुओं को तेजी से बढ़ने और रूमेन में फाइबर डिग्रेडिंग गतिविधि को बढ़ाने की सुविधा प्रदान करता है।

पूर्ण फीड ब्लॉक मशीन

पूर्ण फीड ब्लॉक

पूर्णफीडब्लॉक

पूर्ण फीड ब्लॉक– परिवहन और भण्डारण

पूर्ण फीड ब्लॉक एक पौष्टिक आहार है जिसमें अनाज और गुड़ के साथ अन्य पोषक पदार्थ मिले होते हैं इसलिए यह एक जैविक माध्यम की तरह कार्य करता है जिसमें हानिकारक जीवाणु तेजी से विकसित हो सकते हैं। अतः इसे लंबे समय तक सुरक्षित रखने के लिए इसके साथ फफूंदनाशक और एंटीबायोटिक का मिलान किया जा सकता है। अनाज और पोषक तत्व चूहे और अन्य रोडेंट्स को आकर्षित करता है जो इसको काफी नुकसान पहुंचा सकता है। इसलिए इसका भंडारण एक रोडेंटप्रूफ स्थान पर किया जाना चाहिए। भंडारण कक्ष के अंदर की आर्द्रता और तापमान फीड ब्लॉक के जीवनावधि को प्रभावित करता है। कम आर्द्रता (<40%) और कम तापमान (<160^0C) की स्थिति में यह 1 वर्ष की अवधि तक के लिए सुरक्षित रखा जा सकता है। बरसात के मौसम में फफूंदी की वृद्धि की संभावना बनी रहती है इसलिए खिलाने से पहले इसमें अफ्लाटॉक्सिन की मात्रा का जांच कर लेनी चाहिए। एक स्थान से दूसरे स्थान तक परिवहन के लिए हमेशा उचित वाहन का प्रयोग करें। तैयार किया हुआ फीड ब्लॉक को अच्छी प्रकार पैकेजिंग करने के बाद ही वाहन में लोड करें।

पूर्ण फीड ब्लॉक – परिवहन

पूर्ण फीड ब्लॉक – भण्डारण

पशुओं को पूर्ण फीड ब्लॉक खिलाने की विधि–

पूर्ण फीड ब्लॉक बहुत ही उपयोगी पशु आहार है जिसका उपयोग हमेशा सावधानी पूर्वक करनी चाहिए। पशु आहार में इस की मात्रा एकाएक न बढ़ाकर पशु को उचित समय अंतराल देना चाहिए। फीड ब्लॉक की मात्रा धीरे–धीरे बढ़ाई जानी चाहिए। यह अवधि 10 से 15 दिन का हो सकता है जब पशु इसे अपना नियमित फीड ब्लॉक के रूप में स्वीकार कर सके। किसी प्रकार की समस्या होने पर तुरंत इसका इस्तेमाल बंद कर देना चाहिए और पूर्णब्लॉक को जांच के लिए भेजना चाहिए।

पूर्ण फीड ब्लॉक खिलाने की विधि

खिलाने की विधि :–

पशु	पूर्ण फीड ब्लॉक प्रतिदिन (कि.ग्रा.) सामान्य पशु आहार के साथ	केवल पूर्ण फीड ब्लॉक प्रतिदिन (कि.ग्रा.)
गाय / भैंस	4––(2 / 2–सुबह / शाम)	10––(5 / 5–सुबह / शाम)
बछड़ा	2––(1 / 1–सुबह / शाम)	4––(2 / 2–सुबह / शाम)
बकरी / भेड़	1––(1 / 2:1 / 2–सुबह / शाम)	2––(1 / 1–सुबह / शाम)
पाठा / पाठी	हराचारा (मनभर)	1 / 2

सुझावः पशु को उसकी इच्छा अनुसार खिलाना बेहतर होगा।

पूर्ण फीड ब्लॉक नवाचार के फायदेः

इस तकनीक के माध्यम से फसल अवशेष एवं चारा संसाधनों का उपयोग कर पशु के लिए संतुलित आहार प्रदान किया जाता है। पशुओं में पोषक तत्वों की कमी को दूर करने का सबसे बढ़िया उपाय किसानों को मिलता है। फसल अवशेष के खेत में बर्बादी को कम करता है किसानों द्वारा फसल अवशेष को खेत में जलाने की प्रक्रिया पर रोक लगती है। जुगाली करने वाले पशु मीथेन उत्सर्जित करता है इसलिए इन्हे प्रदान की जाने वाली फीड ब्लॉक में ऐसी केमिकल मिलाये जा सकते है जो मीथेन उत्सर्जन को कम करता है। इसलिए इस नवाचार को पर्यावरण प्रदूषण और ग्लोबल वार्मिंग को कम करने की दिशा में अच्छी पहल समझी जा सकती है। इस तकनीक के माध्यम से पशुओं के लिए भारी मात्रा में गुणवत्ता पूर्ण आहार का भंडारण और परिवहन आसान हो जाता है। इसमें जानवरों के पोषक तत्वों की आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता है। फीडब्लॉक पशुओं में बहु–पोशक तत्वों की कमी को सुधारने के बेहतर अवसर प्रदान करता है। फीड अपव्यय भी कम करता है क्योंकि पशु चयनात्मक भोजन करने में असमर्थ है। यह प्रभावी लागत पर गुणवत्ता वाले फीड को वर्षभर उपलब्ध कराता है। फसल अवशेष के साथ खराब और गैर–परम्परागत चारा जैसे

पेड़ के पत्ते, गन्ने का ऊपरी हिस्सा, समुंद्री पौधा, खरपतवार आदि के उपयोग को प्रभावी बनाता है। प्राकृतिक आपदाओं की इस स्थिति में पशुओ के लिए आहार प्रदान करने की दिशा में काफी लागत प्रभावी है। सम्भावित संक्रामक बीमारियों को देखते हुए आवश्यक टीके एवं औषधि को फीड ब्लॉक में शामिल कर पशुओ के स्वास्थ्य प्रबंधन में असरदार उपाय है। पूर्ण फीड ब्लॉक को पशु आहार के रूप में इस्तेमाल करने से न केवल उत्पादकता में वृद्धि होती है बल्कि पशुओ में बाँझपन और प्रजनन से जुड़ी समस्याएं भी कम होती है। पशुओं में पोषक तत्वों की कमी से होने वाली समस्या जैसे शारीरिक बढ़वार में कमी बांझपन और गर्भपात की स्थिति में पूर्ण एड ब्लॉक काफी मददगार साबित होता है।

आर्थिक लाभ

किसानों को पशुपालन से होने वाली आय की दिशा में पूर्ण फीड ब्लॉक नवाचार एक सुनहरा अवसर प्रदान करता है जहाँ वे अपनी आमदनी को बढ़ा सकते है। इस नवाचार को अपनाने से उनके आय में वृद्धि होती है। जिन किसानों ने अपने दुधारू पशुओं के लिए फीड ब्लॉक का इस्तेमाल किया है उनके दूध उत्पादन में 15–17 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। बछड़े और मांस उत्पादन (भेड़/बकरी) के लिए पाली जाने वाले पशु के शारीरिक बढ़वार में 23–25 प्रतिशत की वृद्धि प्राप्त हुई है। कुल मिलाकर किसानो की आमदनी में 18–21 प्रतिशत की वृद्धि देखने को मिलती है। समय की आवश्यकता है कि पूर्ण फीड ब्लॉक नवाचार को हर क्षेत्र के किसानों तक पहुंचाई जाए और सभी प्रकार के पशुओं के लिए इसके उपयोग पर जोर दिया जाए ताकि किसान के आय में वृद्धि के साथ फसल अवशेष जलाने पर नियंत्रण किया जा सके।

निष्कर्ष

पूर्ण फीड ब्लॉक नवाचार पशुपालक बंधुओ के लिए एक वरदान है। पशुओं के लिए संतुलित आहार प्रदान करने के साथ यह चारा की कमी के समय किसानों को राहत देने की क्षमता रखता है। इसके अलावा फसल अवशेष और गैर–पारंपरिक चारा जैसे पेड़ का पत्ता, खरपतवार, समुद्री पौधा, गन्ने का ऊपरी भाग आदि की उपयोगिता को बढ़ाता है। यह समय और श्रम की बचत के साथ आसान परिवहन में मदद करता है। यह दवाओं की खरीद और जानवरों के उपचार पर खर्च होने वाले पैसे बचाने में भी मदद करता है। पशुओं द्वारा फीड अपव्यय को कम किया जाता है। यह किसानों द्वारा अपनाई जा सकने वाली एक किफायती तकनीक है। पूर्ण फीड ब्लॉक निर्माण में प्रयुक्त होने वाली मशीन में आवश्यक सुधार करके उत्पादन की लागत को और कम किया जा सकता है।

“देवनागरी ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से
अत्यंत वैज्ञानिक लिपि है।”

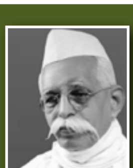

रविशंकर शुक्ल

जन–जागृति एवं हरीतिमा संवर्धन द्वारा वर्षा–जल का संरक्षण

राम कुमार साहु
कृषि अभियंत्रण एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय
डॉ. राजेंद्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर (बिहार)

आलेख परिचय

मनुष्य के जीवन की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति का स्त्रोत वनस्पति ही है। उसके जीवन का अस्तित्व हरीतिमा संवर्धन पर निर्भर करता है; और हरीतिमा संवर्धन का आधार है 'वर्षा जल'।

पहले जगह–जगह ताल, तलैया, पोखर, और झीलों के साथ नदी जैसे जलस्त्रोत थे, जो वर्षा (बारिश) के अधिकांश हिस्से को खुद में पैवस्त कर लेते थे; जो धीरे धीरे रिसकर धरती के पेट में समा जाता था। इससे भूजल स्तर ऊँचा बना रहता था। इन जलस्त्रोत में सतह पर मौजूद पानी सिंचाई सहित जानवरों के पीने इत्यादि के काम में लिया जाता था। इससे भूजल पर ज्यादा भार नहीं पडता था। आज हालात बदल गए हैं। इन दिनों तमाम अध्ययन चीख–चीखकर वर्तमान में व्याप्त भयावह जल संकट की ओर इशारा कर रहे हैं। यदि वर्षा जल को समुचित मात्रा में रिचार्ज नहीं किया गया, तो हरीतिमा संवर्धन एवं कृषि के लिए जल उपलब्धता का परोक्ष स्त्रोत भूमिगत जल बहुत समय चलने वाला नहीं है। वर्षा आश्रित क्षेत्रों में स्थिति इतनी दयनीय है कि गर्मी के महीनों में पीने के पानी का संकट छा जाता है। अतः हमें हरीतिमा संवर्धन के लिए उपयोग किये जा रहे हर स्त्रोत को कायम रखने के लिए उसके मूल स्त्रोत 'वर्षा जल' संरक्षण की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए और प्रभावी उपाय अपनाना चाहिए।

वर्षा जल संरक्षण के लिए क्या करें :–

हरीतिमा संवर्धन का आधार 'वर्षा जल' के संरक्षण के लिए निम्न तीन उपाय अपनाना चाहिए:

1. जल व रज के प्रति जन–जागृति और भावनात्मक उभार –

वर्षा जल संरक्षण जैसे बड़े कार्य को केवल सरकारी योजनओं के माध्यम से पूरा नहीं किया जा सकता। इसके लिए व्यापक स्तर पर जन जागृति की आवश्यकता है। यदि जन साधारण के मानस पटल पर वर्षा जल की एक–एक बूंद की महत्ता व उपयोगिता गंभीरता से बैठ जाये, तो कार्य बहुत आसान हो सकता है। प्रातः आधा या एक घंटा नल में जल आने पर घर परिवार के सभी सदस्यों का ध्यान उस ओर चला जाता है और सीमित समय में इतना जल स्टोर कर लिया जाता है कि 24 घंटे की सभी आवश्यकताएँ पूर्ण हो सके। इसी प्रकार प्रकृति माता भी 3–4 माह की सीमित अवधि में इतनी अपार वर्षा जल सम्पदा हमें देती हैं कि जन–जन यदि इसके प्रति सचेत हो जाये और इसके संरक्षित करने की व्यवस्था बनाये, तो संपूर्ण वर्ष हमारी पशुओं और वनस्पतियों की आवश्यकता पूरी हो सकती है। इसके लिए जनता को संगठित करने और जन जागृति के साथ–साथ जल और रज के प्रति भावनात्मक संवेदनात्मक जागरण की भी जरुरत है।

माँ के शरीर से जन्म लेने के बाद नन्हे शिशु से बुढ़ापे तक जीवनपर्यंत हमारा पोषण प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से धरती माँ करती हैं। क्या हम अपने अस्तित्व के आधार धरती माता के आँचल को हरा भरा रखने के लिए प्रकृति द्वारा दी गयी वर्षा जल की एक–एक बूंद को धरती माँ को नहीं सौंप सकते हैं? यह जनमानस के संवेदनात्मक जागरण से ही संभव हो सकेगा।

2. तीन–स्तरीय वानस्पतिक आच्छादन से धरती माँ का श्रृंगार करें –

वर्षा जल संरक्षण का उद्देश्य उस जल को किसी एक जगह एकत्र कर लेना मात्र नहीं है, बल्कि वर्षा की हर बूंद जहां गिरती है वही सोख ली जाये और धरातल पर बहने के बजाय भूमिगत जल में जाकर मिल जाये। लक्ष्य यह होना चाहिए की खेत का पानी खेत में और गाँव का पानी गाँव में रहे। यह कार्य केवल अभियांत्रिक संरचनाओं (इंजीनियरिंग स्ट्रक्चरस) से संभव नहीं है, बल्कि वानस्पतिक उपचार से ही संभव हो सकता है। यदि धरती माता को हर स्थान पर वनस्पतियों से आच्छादित रखा जाये, जो इस कार्य के लिए उपयुक्त है, तो वर्षा जल का अधिकांश भाग मिट्टी में ही जायेगा। अवशेष पानी जो बहकर निकल जाये, उसे कच्चे तालाब, पोखर, कुआं, बाँध बनाकर एकत्र किया जा सकता है।

वर्षा जल की दो शक्तियां होती हैं– (i) भूमि पर गिरते समय

टकराने वाली शक्ति (फाल्लिग फ़ोर्स) और (ii) बहाविय शक्ति (फ्लोवींग फ़ोर्स)। वर्षा की बूंद जब ऊंचाई से गिरती है, तो मिसाइल की तरह भूमि कणों से टकराकर उन्हें छिन्न भिन्न कर देती है, इसे फाल्लिग फ़ोर्स कहते हैं। भूमि जितनी खाली होगी, उतने ही अधिक प्रभाव से यह शक्ति कार्य करती है। भूमि पर गिरने के बाद एकत्र हुई वर्षा की बूंदें जब धरातलीय बहाव का रूप धारण करती है, तो उसमें धीरे–धीरे वेग बढ़ता जाता है जिसके प्रभाव से वह भूमि कणों को बहा ले जाती है और क्षरण उत्पन्न करती है। इसे बहाविय शक्ति कहते हैं। भूमि के बढ़ते ढाल व वर्षा की बढती मात्रा के आनुपातिक यह फ़ोर्स बढता जाता है।

वर्षा जल के इन दो शक्तियों के प्रभाव को कम करने के लिए और भूमि व जल संरक्षण के लिए तीन प्रकार की वनस्पतियों का प्रयोग किया जा सकता है:

1. वृक्ष– विभिन्न प्रकार के वृक्ष अपनी शाखाओं–पत्तियों की सघनता के अनुरूप फाल्लिग फ़ोर्स को कम करते हैं।
2. शाक व झाडियाँ–अपने आकार–प्रकार के अनुरूप ये फाल्लिग और फ्लोविंग दोनों फ़ोर्स को कम करते हैं।
3. घास– ये धरातल पर फैले होने से मुख्यतः फ्लोविंग फ़ोर्स को कम करती है।

अतः वानस्पतिक उपचार का मतलब केवल वृक्षारोपण से नहीं है, बल्कि उपरोक्त तीनो प्रकार की ऐसी बहु–उद्देशीय वनस्पतियों के सम्मिश्रण से है जो–

– स्थानीय भूमि व जलवायु के अनुरूप हो और स्थानीय रूप से उपलब्ध हो।
– वर्षा के जल तथा भूमि का संरक्षण कर सके।
– भूमि की उपजाऊं क्षमता का सुधार हो सके।
– फल, ईंधन, घास एवं इमारती लकड़ी की आवश्यकता पूरी कर सके।
– रोजगारों एवं उद्योग के लिए कच्चा माल उपलब्ध करा सके।

3 मिश्रित पौधशालाओं की स्थापनाएं –

हरीतिमा संवर्धन के लिए आवश्यक है कि स्थानीय जनता को उसकी मांग के अनुरूप रोपण सामग्री सहजता से उपलब्ध हो सके, ऐसी व्यवस्था बनायी जानी चाहिए। अतः प्रत्येक गाँव में अथवा 2–3 गांवों के बीच ऐसी पौधशाला स्थापित की जानी चाहिए, जहां से ग्रामीणों को उद्यान, वानिकी, औषधीय, सुगन्धित एवं व्यापारिक महत्व एवं कुटीर उद्योगों से सम्बंधित वृक्षों, झाड़ियों की पौध व अन्य रोपण सामग्री तथा बीज उपलब्ध हो सके।

> हिंदी चिरकाल से ऐसी भाषा रही है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का बहिष्कार नहीं किया।

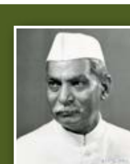

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

आधुनिक कृषि क्रांति– कृषि 4.0

परिखा प्रकाश सिंह एवं आर. शिवराम कृष्णन
जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कृषि 4.0, आने वाली कृषि क्रांति, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के साथ आगे बढ़ेगी। कृषि 4.0 को न केवल नवाचार के लिए बल्कि उपभोक्ताओं की वास्तविक जरूरतों को सुधारने और संबोधित करने और वर्तमान मूल्य श्रृंखला को फिर से तैयार करने के लिए नवीनतम तकनीकों का उपयोग करते हुए, खाद्य कमी समीकरण के मांगपक्ष और मूल्य श्रृंखला आपूर्ति पक्ष दोनों का प्रबंधन करने की आवश्यकता होगी।

प्रौद्योगिकी में प्रगति के साथ, आधुनिक फार्म और कृषि संचालन सेंसर, उपकरणों, मशीनों और सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग करके अलग तरह से काम करेंगे। आगामी कृषि रोबोट, तापमान और नमी सेंसर, जीपीएस तकनीक और हवाई छवियों जैसी परिष्कृत तकनीकों का उपयोग करेगी। इन अग्रिमों से अधिक लाभदायक, कुशल, सुरक्षित और पर्यावरण के अनुकूल व्यवसायों को बढ़ावा मिलेगा। कृषि 4.0 अब खेतों में मैन्युअल रूप से पानी, उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग पर निर्भर नहीं रहेगा। इसके बजाय, किसान या तो न्यूनतम मात्रा का उपयोग करेंगे, या उन्हें आपूर्ति श्रृंखला से पूरी तरह समाप्त कर देंगे। वे भोजन उगाने के लिए सूर्य और समुद्र के पानी जैसे ऊर्जा के प्रचुर और स्वच्छ स्रोतों का उपयोग करके कम क्षेत्र में फसलें उगाने में सक्षम होंगे।

तीन सामान्य रुझान जहां प्रौद्योगिकी उद्योग को प्रभावित कर रही है जिसमें सिस्टम को बाधित करने की उच्च क्षमता है:

1. नई तकनीकों का उपयोग करके अलग तरह से उत्पादन करें।
2. खाद्य श्रृंखला में दक्षता बढ़ाने, उपभोक्ताओं को खाद्य उत्पादन लाने के लिए नई तकनीकों का उपयोग करें।
3. क्रॉस–इंडस्ट्री प्रौद्योगिकियों और अनुप्रयोगों को शामिल करें।

2.1 नई तकनीकों का उपयोग करके अलग तरह से उत्पादन करें

हाइड्रोपोनिक्स

पानी के विलायक में खनिज पोषक तत्वों के घोल का उपयोग करके बिना मिट्टी के पौधों को उगाने की विधि को हाइड्रोपोनिक्स या हाइड्रोकल्चर के रूप में जाना जाता है। ऑस्ट्रेलिया की एक कंपनी ने सनड्रॉप नाम की एक हाइड्रोपोनिक्स समुद्री जल तकनीक विकसित की है, जो किसी भी क्षेत्र में सब्जियां उगाने के लिए सौर, विलवणीकरण और कृषि को जोड़ती है। यह प्रणाली टिकाऊ है, जिसके लिए न तो जीवाश्म ईंधन और नही भूमि की आवश्यकता होती है। इसके बजाय, इसकी प्रौद्योगिकियों ने सौर ऊर्जा, बिजली उत्पादन, मीठे पानी के उत्पादन और हाइड्रोपोनिक्स को एकीकृत किया है।

शैवाल फीडस्टॉक

जलीय कृषि स्थलों में खेती की गई शैवाल, फीडस्टॉक और मछली के भोजन का विकल्प बन सकती है। अधिकांश स्थानों पर शैवाल की खेती की लागत मछली के भोजन की तुलना में सस्ती है।

मत्स्य पालन फीड स्टॉक का सबसे महत्वपूर्ण स्त्रोत है, लेकिन वैश्विक मछली उत्पादन का बहुत कम प्रतिशत वास्तव में मानव उपभोग के लिए उपयोग किया जाता है, और शेष का उपयोग मछली के भोजन और पशु आहार के लिए किया जाता है।

पशु चारा स्टॉक, विशेष रूप से मवेशी, खाद्य उत्पादन में सबसे कम कुशल लिंक हैं। रूपांतरण दर लगभग 15% है, यानि 150 ग्राम मांस पाने के लिए 1 किलो चारा चाहिये। शैवाल आधारित फीड स्टॉक एक प्रभावी और सस्ता विकल्प साबित हुआ है।

मरुस्थलीय कृषि और समुद्री जल कृषि

पृथ्वी के कुल पृष्ठीय क्षेत्रफल का केवल लगभग 29% भू-भाग है, जिसमें से लगभग। 1/3 भूमि में

सभी प्रकार के रेगिस्तान हैं। खाद्य संकट से निपटने के लिए हमें दुनिया के रेगिस्तानो और समुद्र को खाद्य उत्पादन सुविधाओं में बदलना होगा।

सऊदी अरब में किंग अब्दुल्ला यूनिवर्सिटी फॉर साइंस एंड टेक्नोलॉजी (KAUST) जैविक और अजैविक दोनों कारकों पर काम करके एक रेगिस्तानी वातावरण में कृषि द्वारा उत्पन्न कठिन चुनौतियों से निपटने का प्रयास करती है। जैविक अनुसंधान के प्रमुख क्षेत्रों में शामिल हैं । जैविक प्रणालियों

और पौधों की वृद्धि और विकास में हेर फेर करने के लिए जीनोम इंजीनियरिंग प्रौद्योगिकियां या विकास नियामक जो पौधों में सुधारक होते हैं या प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं। और पादप हॉर्मोन जो पोषक तत्वों की उपलब्धता के अनुसार पादप प्ररोह तथा जड़ संरचना को आकार देते हैं। सूखे, नमक और गर्मी से फसल की हानि कुल उत्पादकता का लगभग 60% है, जो इंगित करता है कि अजैविक तनाव सहन शीलता में सुधार, फसल सुधार की कुंजी है। पौधों की अत्यधिक परिस्थितियों के अनुकूल होने की क्षमता विशिष्ट रोगाणुओं के साथ जुड़ाव पर निर्भर करती है। KAUST अत्यधिक गर्मी, सूखे और नमक की स्थिति में उगने वाले पौधों से जुड़े रोगाणुओं की पहचान करने की कोशिश कर रहा है। जिससे उन आणविक तंत्रों की पहचान कर सकेंगे जो पौधों को माइक्रोबियल एसोसिएशन द्वारा प्रेरित अत्यधिक पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुकूल होने में सक्षम बनाते हैं। और पौधों के संकट और सहनशीलता को बढ़ाने के लिए उपयुक्त राइजोस्फीयर भागीदारों का उपयोग कर और फसल के खाद्य उत्पादन को स्थायी रूप से बढ़ाने में मदद करते है।

KAUST मौसम में सुधार, रोग जनक प्रतिरोध, तनाव सहिष्णुता और उपज को सीखकर बढ़ी हुई तनाव सहिष्णुता के साथ फसलों के प्रजनन के लिए भी काम कर रहा है, जो सोमैटिक मेमोरी पर निर्भर है और क्रोमेटिन कारकों में संशोधन भविष्य में तनाव सहिष्णुता में योगदान कर सकता है।

सतत पैकेजिंगः बायो प्लास्टिक्स

नई प्रौद्योगिकियां और तरीके न केवल मूल्य श्रृंखला के उत्पादन पक्ष को बदल रहे हैं, बल्कि खाद्य पैकेजिंग भी बदल रहे हैं। रिसाइकिल करने योग्य और बायोडिग्रेडेबल या कम्पोस्टेबल खाद्य पैकेजिंग सामग्री विकसित करने का आग्रह है।

TIPA, एक स्टार्टअप कंपनी की स्थापना व्यवहार्य प्लास्टिक पैकेजिंग समाधान बनाने के लिए की गई थी। इसका उद्देश्य एक कम्पोस्टेबल और रिसाइकिल योग्य पैकेज बनाना है, जिसे फेंके जाने पर, विघटित हो जाएगा और कोई जहरीला अवशेष नहीं छोड़ेगा।

TIPA एक उन्नत लचीली प्लास्टिक पैकेजिंग विकसित कर रहा है जो उपभोक्ताओं और ब्रांडों को सामान्य प्लास्टिक की तरह ही स्थायित्व और शेल्फ जीवन की पेशकश करते हुए वर्तमान खाद्य निर्माण प्रक्रियाओं में मूल रूप से फिट हो सकती है।

2.2. उपभोक्ताओं तक खाद्य उत्पादन लाने के लिए नई तकनीकों का उपयोग करें, खाद्य श्रृंखला में दक्षता बढ़ाएं

उर्ध्वाधर और शहरी खेती

खड़ी खेती, खड़ी–खड़ी परतों में भोजन उगाने की प्रक्रिया है, जहां उपयुक्त भूमि अनुपलब्ध होने पर चुनौती पूर्ण वातावरण में भोजन का उत्पादन होता है। यह आमतौर पर मिट्टी, हाइड्रोपोनिक या एरोपोनिक उगाने के तरीकों का उपयोग करके शहरी खेती से जुड़ा होता है। यह प्रक्रिया 95% कम पानी, कम उर्वरक और पोषक तत्वों की खुराक, और कीटनाशकों का उपयोग करके खाद्य पदार्थों को उगाने का एक स्थायी तरीका है।

एयरोफार्म्स, एक यूएस आधारित कंपनी है, जो सुरक्षित और पोषण से भरपूर भोजन उगाने के लिए इनडोर–वर्टिकल फार्म का निर्माण, स्वामित्व और संचालन करती रही है। यह सालभर उत्पादन बढ़ा सकता है, जो उसी क्षेत्र के पारंपरिक खेत की तुलना में इसकी संभावित पैदावार को 390 गुना अधिक उत्पादक बनाता है। इसके अलावा, उत्पादन चरम मौसम की स्थितिया मौसमी परिवर्तनों से स्वतंत्र है। इस हाई–टेक डेटा संचालित, वाणिज्यिक पैमाने पर खड़ी खेती से उगाए गए फल और सब्जियां लंबे समय तक ताजा रहती हैं क्योंकि वे स्थानीय रूप से उगाई जाती हैं और आयात नहीं की जाती हैं।

इसी तरह, सैन फ्रांसिस्को स्थित प्लेंटी क फील्ड–स्केल इनडोर फार्म कृषि और फसल विज्ञान को मशीन लर्निंग, आई ओ टी, बिग डेटा और जलवायु–नियंत्रण तकनीक के साथ एकीकृत करते हैं, जो इसे न्यूनतम पानी और ऊर्जा के उपयोग के साथ स्वस्थ भोजन विकसित करने में मदद करता है।

इन उगाई जाने वाली तकनीकों से नीदरलैंड में जबरदस्त लाभ हुआ है, जहां ग्रीन हाउस में अब देश की 35% सब्जियों का उत्पादन अपने 1% से भी कम खेत में कर सकते हैं।

आनुवंशिक संशोधन और सुसंस्कृत मांस

फसल सुधारने पारंपरिक प्रजनन तकनीकों के माध्यम से सूखा प्रतिरोधी गेहूं की खोज की, जिसने विकासशील दुनिया में बेहतर पैदावार की पहली लहर शुरू की। लेकिन भविष्य की खाद्य मांगों को पूरा करने के लिए अनुवांशिक इंजीनियरिंग की आवश्यकता थी।

जीनोम एडिटिंग के लिए एक नया दृष्टिकोण यानी क्लस्टर्ड, नियमित रूप से इंटरस्पेस्ड, शॉर्ट पैलिंड्रोमिक रिपीट (सीआरआईएसपीआर) तकनीक अधिक चयनात्मकता की

अनुमति देती है। यह तकनीक बेहतर पैदावार और प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रतिरोध के साथ नस्लों का निर्माण कर सकती है, और इसका उपयोग आवश्यक विटामिन, पोषक तत्वों और खनिजों के साथ फसलों के प्रचार के लिए भी किया जा सकता है। CRISPR इंजीनियर्ड एनिमल फूड कल्चर तैयार करने में मदद करता है।

मांस संवर्धन तकनीक में काफी संभावनाएं हैं, लेकिन अभी भी विकास की स्थिति में है। इस तकनीक का खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण, पशु–जनित खाद्य–संबंधी रोगों और पशु कल्याण के मुद्दों के क्षेत्रों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। नीदरलैंड की एक कंपनी डवेंड मंज वर्तमान में सुसंस्कृत ग्राउंडमीट (हैमबर्गर) उत्पाद विकसित करने पर काम कर रही है। कंपनी उम्मीद कर रही है कि प्रयोगशाला में निर्मित मांस यानी ''कसाई के बिना मांस'' – पारंपरिक मांस उत्पादन के कई पर्यावरणीय और पशु–अधिकारों के मुद्दों से बचने के लिए दुनिया की बढ़ती आबादी को उच्चगुणवत्ता वाला प्रोटीन प्रदान कर सकता है।

भोजन में 3–डी प्रिंटिंग तकनीक लागू करना

3–डी प्रिंटिंग, जो विनिर्माण उद्योगों में महत्व प्राप्त कर रही है, अब खाद्य उत्पादन में लागू की जा रही है। 3–डी प्रिंटिंग (जिसे एडिटिव मैन्युफैक्चरिंग के रूप में भी जाना जाता है) एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें वस्तुओं को बनाने के लिए सामग्री की परतें बनाई जाती हैं– और इस मामले में, खाद्य प्रसंस्करण। हाइड्रोकार्बन (पानी के साथ जैल बनाने वाले पदार्थ) का उपयोग करने वाले प्रिंटर का उपयोग खाद्य पदार्थों के मूल अवयवों को शैवाल, बत्तख और घास जैसे नवीकरणीय पदार्थों से बदलने के लिए किया जा सकता है।

नीदरलैंड्स आर्गेनाइजेशन फॉर एप्लाइड साइंटिफिक रिसर्च ने माइक्रो एल्गे के लिए एक प्रिंटिंग विधि विकसित की है जो प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, पिगमेंट और एंटीऑक्सिडेंट का एक प्राकृतिक स्रोत है, और उन अवयवों को गाजर जैसे खाद्य पदार्थों में बदल रहा है। तकनीक अनिवार्य रूप से ''मश'' को भोजन में बदल देती है। एक अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने एक शॉर्ट ब्रेडकुकी नुस्खा में मिल्ड मील वर्म जोड़ा।

भविष्य के किराना स्टोर ''खाद्य कार्ट्रिज'' का स्टॉक कर सकते हैं, जो कि खराब होने वाली संपूर्ण सामग्री के बजाय वर्षों तक रहता है, भंडारण स्थान और परिवहन आवश्यकताओं को कम करता है।

भविष्य में, 3D फूड प्रिंटर के लिए तकनीकी रूप से मांगवाला आवेदन, मांस के विकल्प हो सकते हैं। कुछ शोधकर्ता पशु प्रोटीन के प्रतिस्थापन के रूप में शैवाल के साथ प्रयोग कर रहे हैं, और एक प्रयोगशाला में उगाई गई गाय की कोशिकाओं से मांस बनाने की भी कोशिश कर रहे हैं।

2.3. क्रॉस उद्योग प्रौद्योगिकियों और अनुप्रयोगों को शामिल करें

भविष्य में ''सटीक कृषि'' और खेतों के बीच बेहतर संपर्क के साथ क्षमता और उत्पादकता बढ़ने की उम्मीद है। यह अनुमान है कि 2020 तक, 75 मिलियन से अधिक कृषि आई.ओ.टी उपकरण उपयोग में होंगे। औसत फार्म 2050 में प्रतिदिन 4.1 मिलियन डेटा पॉइंट उत्पन्न करेगा, जो 2014 में करीब 190,000 था ।

जुड़े उपकरणों की बढ़ती संख्या जटिलता को बढ़ाती है, लेकिन यह खाद्य उत्पादकों के लिए एक बड़ा अवसर है। समाधान संज्ञानात्मक प्रौद्योगिकियों का उपयोग करने में निहित है जो समझने, सीखने, तर्क करने, बातचीत करने और दक्षता बढ़ाने में मदद करते हैं। यहाँ कुछ प्रमुख गेमचेंजर रहे हैं:

1. इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IOT): नवीनतम तकनीकों की शुरूआत के साथ डिजिटल परिवर्तन कृषि जगत को बाधित कर रहा है। आईओटी प्रौद्योगिक खाद्य उत्पादन में अंतर्दृष्टि प्रदान करने के लिए संरचित और असंरचित डेटा के सहसबंधो की अनुमति देती है। आईबीएम के वाटसन जैसे आईओटी प्लेटफॉर्म मशीनलर्निंग को सेंसर या ड्रोन डेटा पर लागू कर रहे हैं, प्रबंधन प्रणालियों को वास्तविक एआई सिस्टम में बदल रहे हैं।

2. कौशल और कार्यबल का स्वचालन: संयुक्त राष्ट्र की भविष्यवाणी है कि 2050 तक, दुनिया की दो–तिहाई आबादी शहरी क्षेत्रों में रहेगी और ग्रामीण आबादी कम हो जाएगी। किसानों पर काम का बोझ कम करने के लिए नई तकनीकों की जरूरत होगी। कृषि कार्यों को दूर से किया जाएगा, प्रक्रियाओं को स्वचालित किया जाएगा, जोखिमों की पहचान की जाएगी और मुद्दों को हल किया जाएगा। भविष्य के किसानों के पास शुद्ध कृषि के बजाय प्रौद्योगिकी और जीवविज्ञान दोनों कौशल होंगे।

3. डेटा संचालित खेती : मौसम, बीजों के प्रकार, मिट्टी की गुणवत्ता, बीमारियों की संभावना, ऐतिहासिक डेटा, बाजार के रुझान और कीमतों के बारे में जानकारी का विश्लेषण और सहस बंध करके, किसान अधिक स्पष्ट निर्णय लेंगे।

4. चैट बॉट: आज कल, अल–पावर्ड चैटबॉट (वर्चुअल असिस्टेंट) का उपयोग खुदरा, मीडिया, यात्रा और बीमा क्षेत्रों

में किया जाता है। यह किसानों को उनकी विशिष्ट समस्याओं के जवाब और सिफारिशों के साथ सहायता है। कृषक इस तकनीक का लाभ उठा सकते हैं ।

ड्रोन प्रौद्योगिकी

उच्च तकनीक वाली कृषि में प्रमुख चुनौतियों का समाधान करने के लिए ड्रोन प्रौद्योगिकी में काफी संभावनाएं हैं। पूरे फसल चक्र में ड्रोन का उपयोग छह तरीकों से किया जाएगाः

1. मृदा और क्षेत्र विश्लेषण : प्रारंभिक मृदा विश्लेषण के लिए सटीक 3–डी मानचित्र तैयार करके। ड्रोन बीजरोपण की योजना बनाने और सिंचाई और नाइट्रोजन के स्तर के प्रबंधन के लिए डेटा एकत्र करने में भूमिका निभा सकते हैं।
2. रोपण : स्टार्टअप ने ड्रोन–रोपण प्रणाली बनाई है, जो रोपण लागत को 85 प्रतिशत तक कम करती है। ये प्रणाली फली के बीज को और मिट्टी में पोषक तत्व पंहुचाने में मदद करती है, जिससे फसल उगाने के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्व मिलते हैं।
3. फसल का छिड़कावः ड्रोन जमीन को स्कैन कर सकते हैं। समान कवरेज के लिए वास्तविक समय में छिड़काव। परिणाम : पारंपरिक मशीनरी की तुलना में ड्रोन से हवाई छिड़काव पांच गुना तेज होता है।
4. फसल निगरानीः अकुशल फसल निगरानी एक बड़ी बाधा है। ड्रोन के साथ, समय–श्रृंखला एनिमेशन एक फसल के विकास को दिखा सकते हैं और बेहतर प्रबंधन को सक्षम करते हुए उत्पादन अक्षमताओं को प्रकट कर सकते हैं।
5. सिंचाई सेंसर ड्रोनः यह पहचान सकते हैं कि खेत के कौन से हिस्से सूखे हैं या उनमें सुधार की जरूरत है।
6. स्वास्थ्य मूल्यांकनः दृश्य और निकट– अवरक्त प्रकाश दोनों का उपयोग कर, फसल को स्कैन करके, ड्रोन से चलने वाले उपकरण पौधों में परिवर्तन को ट्रैक करने में मदद कर सकते हैं और उनके स्वास्थ्य का संकेत दे सकते हैं और किसानों को बीमारी के प्रति सचेत कर सकते हैं।

यूएवीएस में एक दिन ड्रोन के स्वायत्त समूह शामिल हो सकते हैं, डेटा एकत्र कर सकते हैं और कार्य कर सकते हैं। वास्तविकता बनने में सबसे बड़ी बाधा उच्चगुणवत्ता वाले डेटा और संख्या क्रंचिंग सॉफ्ट वेयर एकत्र करने में सक्षम सें सर हैं, जो उस उच्च तकनीक वाले सपने को वास्तविकता बना सकते हैं।

ब्लॉक चेन और कृषि मूल्य श्रृंखला की सुरक्षा

ब्लॉक चेन, वितरित लेजर तकनीक, मुख्य रूप से आभाषी मुद्राओं में उपयोग की गई है, इसे कृषि सहित अन्य प्रकार के लेन देन पर भी लागू किया जा सकता है।

ब्लॉकचेन अक्षमताओं को कम कर सकता है और खाद्य सुरक्षा, किसान के वेतन और लेन–देन के समय में सुधार कर सकता है। आपूर्ति श्रृंखलाओं में पता लगाने की क्षमता में सुधार करके, यह नियामकों को दूषित खाद्य पदार्थों के स्रोत की शीघ्रता से पहचान करने और संदूषण की घटनाओं के दौरान प्रभावित उत्पादों के दायरे को निर्धारित करने में सक्षम बनाता है। इसके अतिरिक्त, प्रौद्योगिकी खाद्य खराब होने में योगदान देने वाली आपूर्ति श्रृंखला में बाधाओं का पता लगा कर कचरे को कम कर सकती है।

ब्लॉकचेन की पारदर्शिता खाद्य धोखाधड़ी से लड़ने में भी मदद कर सकती है। जैविक के लिए उपभोक्ता मांग के रूप में। जीएमओ–और एंटी बायोटिक–मुक्त भोजन चढ़ता है, फर्जी लेबलिंग के मामलों से खबरें व्याप्त हैं। छोटे से छोटे लेन–देन – चाहे खेत, गोदाम, या कारखाने में– पर कुशलता पूर्वक निगरानी की जा सकती है और पूरी आपूर्ति श्रृंखला में संचार किया जा सकता है जब एलओटी प्रौद्योगिकियों, जैसे सेंसर और आरएफआईडी टैग के साथ जोड़ा जाता है। एक शिपिंग और लॉजिस्टिक्स कंपनी Maersk के पास इंट्रा–कॉन्टिनेंट सप्लाई चेन है जिसमें दर्जनों कर्मी और सैकड़ों इंटरैक्शन शामिल हैं। उनका अनुमान है कि ब्लॉक चेन धोखाधड़ी और मानवीय त्रुटि को कम करने वाली दक्षता में सुधार करके उन्हें अरबों बचा सकता है।

खुलेपन का लाभ सभी ईमानदार बाजार सहभागियों को मिलता है। ब्लॉकचैन प्रौद्योगिकियां, बिचौलियों को समाप्त करने और लेनदेन शुल्क को कम करने के साथ–साथ मूल्य वसूली और विलंबित भुगतान को रोक सकती हैं, जिससे उचित मूल्यनिर्धारण हो सकता है और छोटे किसानों को उनके फसल मूल्य के एक बड़े हिस्से पर कब्जा करने में मदद मिल सकती है।

नैनोटेक्नोलॉजी और सटीक कृषि

20वीं सदी की हरितक्रांति कीटनाशकों और रासायनिक उर्वरकों के अंधाधुंध उपयोग से प्रेरित थी, जिसके परिणाम स्वरूप मिट्टी की जैवविविधता का नुकसान हुआ और रोगजनकों और कीटों के खिलाफ प्रतिरोध में वृद्धि हुई।

नई क्रांति सटीक कृषि होगी। नैनोटेक्नोलॉजी द्वारा संचालित'' इस क्रांति में पौधों को नैनो कणों को वितरित किया जाएगा और सटीक खेती के लिए उन्नत बायो सेंसर होंगे। नैनो इन कैप्सुलेटे पारंपरिक उर्वरक, कीटनाशक, और शाकनाशी पोषकतत्वों और कृषि रसायनों को धीमी और निरंतर तरीके से जारी करेंगे, जिसके परिणामस्वरूप पौधों को सटीक खुराक मिलेगी।

नैनो टेक्नोलॉजी सटीक खेती के लाभों में से हैं:

1. मोटे तौर पर 60 प्रतिशत लागू उर्वरक पर्यावरण में खो जाते हैं, जिससे प्रदूषण होता है।
2. नैनो फर्टिलाइजर्स एग्रोकेमिकल्स की धीमी, निरंतर रिलीज में मदद करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप सटीक खुराक होती है।
3. अधिक से अधिक पौध संरक्षण और रोगों का उपचार।
4. बायो सेंसर फसलों में कीटनाशकों का पता लगा सकते हैं, जिससे अधिक जानकारी पूर्ण निर्णय लिए जा सकते हैं।

फूड शेयरिंग और क्राउड फार्मिंग

अंत में साझा अर्थव्यवस्था और क्राउड सोर्सिंग का भी भोजन की बर्बादी को रोकने में एक स्थान है।

प्रौद्योगिकी ने समुदायों को अपने सामान और सेवाओं को साझा करने में सक्षम बनाया है। यह पहले राइड शेयरिंग और हाउस शेयरिंग में लोक प्रिय हुआ, और अब इसे भोजन सहित हर उद्योग में लागू किया जा रहा है।

सामाजिक उद्यमियों द्वारा स्थापित ओलियो ने लोगों को उनके पड़ोसियों और स्थानीय दुकानों से जोड़ने के लिए एक ऐप बनाया है ताकि अतिरिक्त भोजन को त्यागने के बजाय साझा किया जा सके।

एक और सामाजिक उद्यमशीलता परियोजना, नारंजस डेलकारमेन ने क्राउड फार्मिंग की अवधारणा विकसित की है। नारंजस डेल कारमेन ने एक ऐसी प्रणाली बनाई है जिसमें व्यक्ति का उन पेड़ों और जमीन पर स्वामित्व होता है जो किसान खेती करता है। इस तरह, उन पेड़ों के फल उनके मालिकों के पास जाते हैं, उत्पादन और खपत के बीच एक सीधा संबंध बनाते हैं और मूल्य श्रृंखला के साथ अधिक उत्पादन और अपशिष्ट से बचते हैं।

"आप जिस तरह बोलते है, बातचीत करते हैं, उसी तरह लिखा भी कीजिए। भाषा बनावटी नहीं होनी चाहिए।"

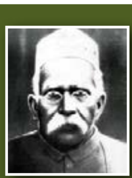

महावीर प्रसाद द्विवेदी

लीची के प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

प्रवीण दादासाहेब माने एवं पंचम कुमार सिंह
नालन्दा उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा, (बिहार)

लीची एक प्रमुख उपोष्ण कटिबन्धीय फल है। इस फल का जन्म स्थान दक्षिणी चीन है। 17 वीं शताब्दी में लीची भारत आने पर अब चीन के बाद भारत लीची उत्पादन में दूसरे नम्बर पर पहुँच गया है तथा इसके क्षेत्रफल में लगातार वृद्धि हो रही है। भारतवर्ष में लीची के क्षेत्रफल और उत्पादन के दृष्टिकोण से बिहार राज्य का स्थान सर्वोच्च है और देश के कुल उत्पादन का लागभग 74 प्रतिशत लीची बिहार से ही प्राप्त होता है। मुजफ्फरपुर के शाही किस्म की लीची अपने स्वादिष्ट और लुभावने फल के कारण विश्व प्रसिद्ध रही है और विदेशों में इसकी माँग बढ़ती ही जा रही है। अतः लीची बागान का उचित प्रबन्धन आवश्यक है।

लीची विभिन्न प्रकार के कीटों से अक्रांत होता है जिसका कुप्रभाव इसके उत्पादन एवं गुणवता दोनो पर पड़ता है। निम्न कीट लीची को मुख्य रूप से प्रभावित करते है।

फल एवं बीज छेदक (स्टोन बोरर) – इस कीट का लावों सालों भर लीची के कोमल, मुलायम पत्तो एवं टहनियों में जीवन निर्वाह करता है। छोटी कोमल पत्तियों के मध्य सिरे को छेदने के बाद लाव पत्तियों के दोनो भाग के बीच में भी सुरंग बना लेता है। लार्वा द्वारा छोटी–छोटी टहनियाँ भी ग्रसित हो जाती है। अक्रांत पौधा दूर से देखने पर जली हुआ दिखाई पड़ता हैं ।

नियंत्रण :– मंजर लगने के पहले इन्डोसल्फान 35% (11.5 मि.ली./लीटर पानी) या कार्वेरिल 50% घुलनशील (2 ग्रा./लीटर पानी) या फास्फोमिडान 85% तरल दवा (0.5 मि. ली./ली. पानी) का छिड़काव करें। अप्रैल के तीसरे सप्ताह में इन्डोसल्फान (1.5 मि.ली./ लीटर पानी) का फलों पर छिड़काव करें। मई के प्रथम सप्ताह में नमुना (0.5 मि.ली./लीटर पानी/ या फेनमेलरेट 11 मि.ली./3 लीटर पानी) का छिड़काव करें। अंतिम छिड़काव के 10–15 दिन बाद ही फलों की तुड़ाई करें। पुरानी अक्रांत पंत्तियों, टहनियों को साल में दो बार फल तोड़ते समय मई तथा अक्टूबर माह में तोड़कर जला दें या जमीन में गढ़ढ़ा खोदकर गाड़ दें ।

लीची माईट :– लीची माईट समुदाय की ही सूक्ष्म मकड़ी है। इसका शरीर बेलनाकार सफेद और चमकीला होता है। इसके चार जोड़े पैर होते है। इसकी लंबाई 0.043 से 0.15 मि.मी. तक होती है। मादा माईट "इरीनीयम' के जड़ में ही अंडे देती है। अंडे से वयस्क माईट बनने में 15 से 20 दिनों का समय लगता है। मखमली इरीनीयम उच्च ताप, एवं आद्रता से माईट को सुरक्षा प्रदान करता है। इसके निम्फ और प्रौढ़ दोनों ही हानिकारक है जो लीची के नयी कोमल पत्तियों, टहनियों, फलों एवं बढ़ते हुए कच्चे फलों को क्षति पहुँचाते हैं। निम्फ एवं प्रौढ़ मकड़ी पौधों के कोमल भाग का रस चूसती हैं। रस चूसने से ग्रसित उत्तक उत्तेजित हो जाते हैं और रेशे निकल आते है जिसे इरीनियम कहते हैं। यह इरीनियम आक्रमण की तीव्रता की स्थिति में पत्तियों के उपरी सतह की ओर बढ़ने लगता है और धीरे–धीरे पूरी पत्तियों पर फैल जाता है। डालियाँ भी प्रभावित हो जाती है। प्रभावित डालियों पर मंजर नहीं लगते।

नियंत्रण :– अक्रांत टहनियों को मंजर निकलने के एक माह पहले ही तोड़कर जला देना लाभदायक होता है। रासायनिक विधि से नियंत्रण के लिए डायकोफॉल 18.5% या इथिलॉन 25% का (1.5 से 2.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी) छिड़काव करे।

लीफ माइनर :– यह वयस्क कीट छोटा होता है, जिसका पिल्लु पत्तियों की उपरी त्वचा के नीचे रहकर वहाँ के उत्तक को खाते हुए आगे की ओर बढ़ता है। इससे पत्तियाँ सूखने लगती है । इस कीट का आक्रमण साधरणतया नयी पत्तियों पर होता है। नियंत्रण के लिए किसी अर्न्तव्यापी कीटनाशक या फास्फोमिडान 85% का (0.5 मि.ली./ली. पानी) का छिड़काव लाभप्रद होता है।

पत्ती लपेटक कीट :– इस कीट का पिल्लू लीची की पत्तियों को लम्बवत् लपेटकर अंदर ही अंदर इसकी हरियाली को खाता है जिससे पत्तियाँ समय के पूर्व ही सूखकर गिरने लगती है। इस कीट के नियंत्रण हेतु फॉस्फोमिडान 85% दवा अथवा डायमेथोयेट या इन्डोसल्फान का छिड़काव करना चाहिए।

तना छेदक कीट :– यह कीट टहनियों में छेदकर इसके अंदर ही अंदर खाते हुए सुराख बना देता है जिससे टहनियाँ सूख जाती है। इसके नियंत्रण के लिए अक्रांत सूखी टहनियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए तथा कीड़े द्वारा बनाये गए

सुराख को साफ करके इसमें डी.पी.भी.पी. से भिंगोये कपड़े या रूई भरकर गीली मिट्टी से बंद कर देना चाहिए ।

छाल खाने वाले कीडे :– लीची के तने तथा शाखाओं पर कोड़े छिलके में छेदकर इसे खाते हैं। यह कीट अप्रैल माह तक छिलका खाते रहता है और लकड़ी में भी सुराख कर देता है। इस कीट की मौजूदगी लकड़ी का बुरादा जैसा जाली में लटकता हुआ दिखाई देता है। सभी जालीनुमा बुरादों को इकट्ठा कर जला देना चाहिए या मिट्टी में गाड़ दें।

इस कीट के नियंत्रण के लिए तने की सफाई कर इन्डोसल्फान 35% (1.5 मि.ली./ली. पानी) दवा का छिड़काव कर दें। पेड़ से झाड़े गये अवशेष को जलाकर नष्ट कर दे क्योंकि इसमें कीड़े रह सकते हैं जो पुनः पेड़ पर चढ़ जायेंगे। जुलाई माह में 4 किलो नीम की खल्ली, 1 किलो अंडी की खल्ली खाद देते समय जड़ से 1 मी. दूर गोलाई में मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें। ऐसा करने से पौधों का स्वास्थ्य ठीक रहता है तथा कीट व्याधि का प्रकोप भी कम होता है। यह उपचार सभी लीची उत्पादक को अवश्य करना चाहियें ।

> वही भाषा जीवित और जागृत रह सकती है जो जनता का ठीक-ठीक प्रतिनिधित्व कर सके और हिंदी इसमें समर्थ है।

पीर मुहम्मद मूनिस

सरसों की उन्नत खेती : खाद एवं उर्वरक

ऋषिकेश तिवारी एवं शिखा उपाध्याय
जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

सरसों रबी में उगाई जाने वाली प्रमुख तिलहन फसल है। इसकी खेती सिचिंत एवं संरक्षित नमी द्वारा के बारानी क्षेत्रों में की जाती है। राजस्थान का देश के सरसों उत्पादन में प्रमुख स्थान है। पश्चिम क्षेत्र में राज्य के कुल सरसों उत्पादन का 29 प्रतिशत पैदा होता है। लेकिन क्षेत्र में सरसों की औसत उपज (700 किलो ग्राम प्रति हैक्टेयर) काफी कम है। उन्नत तकनीकों के उपयोग द्वारा सरसों की औसतन पैदावार 30 से 60 प्रतिशत तक बढ़ाई जा सकती है।

किस्म	पकने की अवधि	औसत उपज	विशेषताएं
पूसा जय किसान	125–130	18–20	सफेद रोली उखटा व तुलासिता रोग रोधी सिचिंत व असिंचित बरनी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त।
आर्शीवाद	125–130	16–18	देरी में बुवाई की जा सकती है सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त।
आर.एच.–30	130–135	18–20	दाने मोटे होते हैं मोयला का प्रकोप कम सिंचित व असिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त।
पूसा गोल्ड	125–130	18–20	मोटे रोग कम लगते हैं।
लक्ष्मी (आर.एच. 8816)	135–140	20–22	फलियां पकने पर चटकती नहीं, दाना मोटा और काला होता हैं।
क्रांति (पी.आर.15)	125–130	16–18	तुलसिता व सफेद रोलीरोधक, दाना मोटा व कत्थई रंग का असिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त।

भूमि व उसकी तैयारी

सरसों की खेती के लिए दोमट व बलुए भूमि सर्वोत्तम रहती है। सरसों के लिए मिटटी भुरभुरी होनी चाहिए, क्योंकि सरसों का बीज छोटा होने के कारण अच्छी प्रकार तैयार की हुई भूमि में इसका जमाव अच्छा होता है। पहली जुताई मिटटी पलटने वाले हल से करनी चाहिए इसके पश्चात एक क्रास जुताई हैरो से तथा एक कल्टीवेटर से जुताई कर पाटा लगा देना चाहिये।

बीज एवं बुआई

सरसों के लिए 4 से 5 किलो ग्राम बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त रहता हैस बारानी क्षेत्रों में सरसों की बुआई 25 सितम्बर से 15 अक्टूबर तथा सिंचाई क्षेत्रों में 10 अक्टूबर से 25 अक्टूबर के बीच करनी चाहिए। फसल की बुआई पंक्तियों में करनी चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 से 50 की दूरी तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखनी चाहिये। सिंचित क्षेत्रों में फसल की बुआई पलेवा देकर करनी चाहिये खाद एवं उर्वरक सरसों की फसल के लिए 8–10 टन गोबर की सड़ी हुई या कम्पोस्ट खाद को बुआई से कम से कम तीन से चार सप्ताह पूर्व खेत में अच्छी प्रकार मिला देनी चहिए। इसके पश्चात् मिट्टी की जाँच के अनुसार सिंचित फसल के लिए 60 किलो ग्राम नाइट्रोजन एवं 40 किलोग्राम फास्फोरस की पूर्ण मात्रा बावई के समय कुंडों मेंए 87 किलो ग्राम डीएपी व 32 किलो ग्राम यूरिया द्वारा 65 किलोग्राम व 250 किलोग्राम सिंगलसुपर फास्फेट के द्वारा देनी चाहिये। नाइट्रोजन की शेष 30 किलो मात्रा को पहली सिंचाई के समय 65 किलो ग्राम यूरिया प्रति हैक्टेयर के द्वारा छिड़क देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त 40 किलोग्राम गंधक चूर्ण प्रति हैक्टेयर की दर से फसल जब 40 दिन की हो जाये तो देना चाहिये। असिंचित क्षेत्र में 40 किलो ग्राम नाइट्रोजन व 40 किलो ग्राम फास्फोरस को बुआई के समय 87 किलो ग्राम डी.ए.पी. व 54 किलो ग्राम यूरिया द्वारा प्रति हैक्टेयर की दर से होनी चाहिये।

सिंचाई

सरसों की खेती के लिए 4.5 सिंचाई पर्याप्त होती है। यदि पानी की कमी हो तो चार सिंचाई पहली बुवाई के समय दूसरी शाखाऐं बनते समय (बुवाई के 25-30 दिन बाद) तीसरी फूल प्रारम्भ होने

के समय (45-50 दिन) तथा अंतिम सिंचाई फली बनते समय (70-80 दिन बाद) की जाती है। यदि पानी उपलब्ध हो तो सिंचाई दाना पकते समय बुवाई के 100-110 दिन बाद करनी लाभदायक होती है। सिंचाई फव्वारे विधि द्वारा करनी चहिये।

फसल चक्र

फसल चक्र का अधिक पैदावार प्राप्त करने, भूमि की उर्वराशक्ति बनाये रखने तथा भूमि में कीड़े, बीमारियों एवं खरपतवार कम करने में महत्पूर्ण योगदान होता है। सरसों की खेती के लिए पश्चिमी क्षेत्र में मूंग, सरसो, ज्वार, सरसों बाजरा, सरसों एक वर्षीय फसल चक्र तथा बाजरा–सरसों–मूंग–ज्वार–सरसों दो वर्षीय फसल चक्र उपयोग में लिये जा सकते हैं। बारानी क्षेत्रों में जहाँ केवल रबी में फसल ली जाती हो वहाँ सरसों के बाद चना उगाया जा सकता है।

निराई–गुड़ाई

सरसों की फसल में अनेक प्रकार के खरतपतवार जैसे गोयला, चील, मोरवा, प्याजी इत्यादि नुकसान पहुंचाते हैं। इनके नियंत्रण के लिए बुवाई के 25 से 30 दिन पश्चात कस्सी से गुड़ाई करनी चाहिये। इसके पश्चात दूसरी गुड़ाई 50 दिन बाद करनी चाहिये। सरसों के साथ उगने वाले खरपतवारों को नियंत्रित करने कें लिए बाजार में उपलब्ध पेंडीमेथालिन की 3 लीटर मात्रा बुवाई के 2 दिनों तक प्रयोग करनी चाहिये। सरसों की फसल में आग्या, औरोबंकी नामक परजीवी खरपतवार फसल के पौंधों की जड़ पर उगकर अपना भोजन प्राप्त करते है।

पन्टेड बग व आरा मक्खी

यह कीट फसल को अंकुरण के 7–10 दिनों में अधिक हानि पहुंचता है इस कीट की रोकथाम के लिए एन्डोसल्फान 4 प्रतिशत मिथाइल पैराथियोन 2 प्रतिशत चूर्ण 20 से 25 किलो हैक्टेयर की दर पर भुरकाव करना चाहिये।

मोयला

इस कीट का प्रकोप फसल में अधिकतर फूल आने के पश्चात् मौसम में नमी व बादल होने पर होता है। यह कीट हरे, काले एवं पीले रंग का होता है पौधे के विभिन भागों पत्तियों, शाखाओं, फूलों एवं फलिओं का रस चूसकर नुकसान पहुंचता है। इस कीट को नियंत्रित करने के लिए फास्फोमीडोन 85 डब्लू.सी. की 250 मिली या इपीडाक्लोरप्रिड की 500 मिली या मेलाथियोन 50 ई 25 लीटर पानी में घोल बनाकर एक सप्ताह के अंतराल पर दो छिड़काव करने चाहिए।

बीज उत्पादन

बीज उत्पादन के लिए ऐसी भूमि का चुनाव करना चाहिये, जिसमें पिछले वर्ष सरसो की खेती न की हो। सरसों के चारों ओर 200 से 300 मीटर की दूरी तक सरसों की फसल नहीं होनी चाहिये। सरसों की खेती के लिए प्रमुख कृषि क्रियाएं फसल सुरक्षा, अवांछनीय पौधों को निकलना तथा उचित समय पर कटाई की जानी चाहिए। फसल की कटाई करते समय खेत को चारों ओर से 10 मीटर क्षेत्र छोड़ते हुए बीज के लिए लाटा काटकर अलग सुखाना चाहिये तथा दाना निकाल कर उसे साफ करके ग्रेडिंग करना चाहिए। दाने में नमी 8–9 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिये। बीज को कीट एवं कवकनाशी से उपचारित कर लोहे की टंकी या अच्छी किस्म के बोरों में भरकर सुरक्षित जगह भंडारित कर देना चाहिए। इस प्रकार उत्पादित बीज को किसान अगले वर्ष बुवाई के लिए प्रयोग कर सकते हैं।

कटाई एवं गहाई

फसल अधिक पकने पर फलियों के चटकने की आशंका बढ़ जाती है अतः पौधों के पीले पड़ने एवं फलियां भूरी होने पर फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। लाटे को सुखाकर थ्रेसर या डंडो से पीटकर दाने को अलग कर लिया जाता है।

उपज एवं आर्थिक लाभ

सरसों की उन्नत विधियों द्वारा खेती करने पर औसतन 15 – 20 क्विंटल प्रति हैक्टयर दाने की उपज प्राप्त हो जाती हैं। तथा एक हैक्टेयर के लिए लगभग 25 हजार रूपये का खर्च आ जाता है। यदि सरसों का भाव 55 रूपये प्रति किलो हो तो प्रति हैक्टेयर लगभग 50 हजार रूपये का शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

जड़ीय औषधीय पौधे : उपयोग एवं लाभ

शोभा सोंधिया, नीलम राजपूत एवं सौम्या मिश्रा
भा.कृ.अनु.प – खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

संसारभर में विभिन्न प्रकार के रोगों के उपचार के लिये पादपों से प्राप्त औषधियों का प्रयोग किया जाता है जो पौधों के विभिन्न भागों से निकाली जाती है। विश्व की सभी चिकित्सा पद्धतियां पौधों के उपर निर्भर होती है अतः पौधों का उपयोग बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है। ऐसा अनुमान है कि विश्व की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या जड़ी बूटियों पर निर्भर करती है। यह देखा गया है कि नई–नई खोजों के आधार पर विभिन्न प्रकार की औषधियों को प्राप्त करके उनका प्रयोग किया जा रहा है। कभी–कभी यह प्रयोग मानव स्वास्थ के लिये हानिकारक भी सिद्ध हो रहा है। अतः पुरानी चिकित्सा पद्धति के अनुसार मनुष्य ने फिर से आयुर्वेदिक यूनानी तथा होम्योपेथिक चिकित्सा को अपनाना प्रारम्भ किया है। जिसमें अधिकतर पौधों के विभिन्न भागों को जड़ी बूटी के रूप में अथवा सत्व के रूप में औषधि की भांति प्रयोग में लाया जाता है। इसे हर्बल उपचार पद्धति कहते है।

जड़ तथा भूमिगत भागों से प्राप्त औषधियां

1. वचनाग :

देशी नाम – वचनाग, वत्सनाग, भारतीय ऐकोनाइट

वानस्पतिक नाम – *ऐकोनीटम नैपेलस,* ऐफेरॉक्स

औषधीय महत्व वाले भाग – कंन्दिल जड़े

औषधि का नाम – इसे वचनाग कहते हैं। इससे ऐकोनाइट नामक ऐल्केलॉइड ऐकोनीटम की कंदिल जड़ों से प्राप्त किया जाता है।

औषधीय उपयोग –

1. टिंक्चर के रूप में यह वातशूल या गाठिया सायटिका तथा तीव्र गाठिया होने पर बाहरी लेप के रूप में प्रयोग किया जाता है।
2. इसे स्नायुमण्डल के रोगों, दर्द बुखार आदि में उपयोग किया जाता है।
3. मधुमेह, कुष्ठ, लकवा एवं अस्थमा में भी यह औषधी लाभदायक होती है।
4. कंद को दूध के साथ उबालकर सेवन करने से मधुमेह, दमा, जोड़ो का दर्द आदि ठीक हो जाता है।
5. यह आयुर्वेदिक औषधियों जैसे– हिंगुलेश्वर रस, मृत्यून्जय रस, आनंद भैरव, अग्निदण्डी आदि के निर्माण में प्रयुक्त होता है।

वचनाग

2. मुलेठी :

वानस्पतिक नाम – *ग्लाइसीराइजा ग्लेवर*

अन्य सामान्य नाम – मुलेठी, जेठी–मथ

मुलैठी का पौधा बहुवर्षीय शाक होता है जिसे दक्षिणी यूरोप तथा पश्चिमी एवं मध्य एशिया में अधिक उगाया जाता है।

औषधीय महत्व वाला भाग – जड़

औषधीय उपयोग –

1. इसकी जड़ो को सुखाने के पश्चात् छोटे–छोटे टुकड़े बना लिये जाते है। जिनका उपयोग बुखार, दर्द, खांसी तथा साँस संबंधी बीमारियों के इलाज में किया जाता हैं।
2. मुलैठी का उपयोग बहुत सी औषधियों के कड़वे स्वाद को दूर करने के लिये किया जाता है।

मुलेठी

3. सफेद मूसली :

वानस्पतिक नाम – *क्लोरोफाइटम बोरिविलिएनम*

अन्य सामान्य नाम – कुलाई

औषधीय महत्व वाले भाग – जड़े।

रासायनिक व औषधीय गुण – सफेद मूसली की शुष्क जड़ो में लगभग पांच प्रतिशत नमी उपस्थित होती हैं। इसमें कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, फाइबर्स, सैपोनिन्स तथा अनेक प्रकार के खनिज लवण होते है।

औषधीय महत्व :–

1. शुष्क जड़ को पीसकर प्राप्त चूर्ण को दवा के रूप में लेने से सामान्य कमजोरी समाप्त हो जाती है। इसका सेवन टॉनिक के रूप में किया जाता है।
2. इसके जड़ के चूर्ण का सेवन लैगिंक क्षमताओं में वृद्धि लाने हेतु किया जाता है।
3. इसके जड़ चूर्ण का लगभग 20 ग्राम को दूध के साथ उबालकर प्रतिदिन दो बार सेवन करने से लैगिंक अक्षमताओं तथा आंतरिक कमजोरी।
4. जड़ो को गाठिया के उपचार में उपयोग किया जाता है।

सफेद मूसली :

4. सर्पगंधा :

वानस्पतिक नाम – *राउबॉल्फिया सर्पेन्टाइना*

अन्य नाम – सर्पेन्टाइन, छोटा चांद

औषधीय महत्व वाले भाग– पत्तियां एवं जड़

सर्पगंधा के जड़ो की छाल में लगभग 80 ऐल्केलाइड्स होते हैं। जिसमें रिसर्पिन एवं सर्पेन्टाइन प्रमुख होते हैं।

औषधीय उपयोग –

1. पत्तियों का रस आंखो के कर्निया से संबंधित रोगों के उपचार में प्रयोग किया जाता है।
2. जड़ के सत्व को बच्चों के जन्म के समय फीटस को बाहर निकालने हेतु जटिल अवस्थाओं में दिया जाता है।
3. जड़ का उपयोग आंत कृमिनाषक के रूप में, ज्वर को कम करने हेतु तथा टॉनिक के रूप में किया जाता है।
4. तंत्रिका तंत्र की गड़बड़ियों, अनिद्रा को समाप्त करने, उच्च रक्तचाप को ठीक करने, मानसिक रोग के उपचार तथा अत्याधिक तनाव को कम करने हेतु भी इसके जड़ के चूर्ण का सेवन किया जाता है।

यह छोटा झाड़ीनुमा पौधा होता है। तीन–चार वर्ष पुराने पौधों के जड़ को दवा के रूप में उपयोग करते है। इस पौधे का वर्णन चरक संहिता में भी मिलता है।

सर्पगंधा

5. सतावर :

वानस्पतिक नाम – *ऐस्पेरेगस रैसेमोसस*

अन्य सामान्य नाम – बहुपुत्रा, शतपदी, शतमूती, शतावरी

औषधीय महत्व वाले भाग– जड़े, ट्यूबर

औषधीय उपयोग –

1. इसके मूल का सेवन तंत्रिका की गड़बड़ियों, मंदाग्नि, डायरिया, डीसेंट्री, तपेदिक, मिरगी, कोढ़ आदि बीमारियों में उपचार किया जाता है।
2. मूल ट्यूबर, मूत्रबर्द्धक, स्फूर्तिदायक, पाचनकारी होता है। यह पेट दर्द का भी शमन करता है।

सर्पगंधा

औषधीय गुणो से है भरपूर,
जड़ीय पौधे हमारे लिये है कोहिनूर

कोई भी देश सच्चे अर्थों में तब तक स्वतंत्र नहीं है, जब तक वह अपनी भाषा में नहीं बोलता।

महात्मा गांधी

हरे चारे के उत्पादन के लिए सस्य क्रियाएं और पद्धतियां

पिजूषकांति मुखर्जी और जितेंद्र कुमार दुबे
भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

चारा फसलें पौधों की प्रजातियां हैं जो जानवरों को चारे के रूप में खिलाने के लिए उगाई और काटी जाती हैं (हरा काटा और ताजा खिलाया जाता है), साइलेज (अवायवीय स्थिति के तहत संरक्षित) और घास (निर्जलित हरा चारा)। चारा फसलें पशुधन आधारित कृषि प्रणाली का महत्वपूर्ण घटक हैं। हरे चारे की उपलब्धता पशुधन पालन की उत्पादकता और लाभप्रदता को निर्धारित करती है। दूध उत्पादन की कुल लागत का लगभग 60% चारे का होता है। गुणवत्तापूर्ण हरे चारे पर आधारित आहार प्रणाली में सुधार करके दुग्ध उत्पादन और पशुपालन की लागत को काफी कम किया जा सकता है।

महत्वपूर्ण सिंचित चारा फसलों को उगाने हेतु सस्य क्रियाएं और पद्धतियां

पानी फसल उत्पादन के लिए सबसे महत्वपूर्ण घटक है, खासकर चारे वाली फसलों में जहां कम समय में अधिकतम वानस्पतिक विकास वांछित होता है। सिंचाई का प्रबंधन गहन चारा उत्पादन के लिए संसाधनों के अधिकतम उपयोग की अनुमति देता है, जो हमारे देश में छोटी जोतों के साथ बहुत महत्वपूर्ण है।

अनाज की चारा फसलें

अनाज के चारे और घास की शाकीय गुणवत्ता फूल आने के बाद खराब होने लगती है। मक्का, ज्वार, बाजरा और जई जैसे अनाज के चारे पशुओं को ऊर्जा से भरपूर हराचारा प्रदान करते हैं। विकास, पुनर्जनन क्षमता, उपज और जड़ी–बूटी की गुणवत्ता के संदर्भ में इनमें व्यापक अनुकूलन क्षमता और परिवर्तनशीलता है।

विभिन्न अनाज चारा फसलों का पैकेज और पद्धतियां

फसल	बीज दर (किग्रा/हेक्टेयर)	बोवाई समय	अंतर पंक्ति अंतर (सेमी)	खाद की खुराक और शेड्यूलिंग	सिंचाई अंतराल और संख्या	फसल काटने वाले अनुसूची	हरा चारा उपज (टन/हेक्टेयर)
ज्वार/ ज्वार/ चरी (एकल कट)	छिड़कावः 20–25 सीधी बुवाईः 12–15	जून जुलाई	30–40	60:30:30 किग्रा एनः पीः बुवाई के समय किग्रा/ हैक्टेयर उसके बाद का समय शीर्ष ड्रेसिंग के साथ एक बार में 30 किग्रा टन/हैक्टेयर महीने के बाद बुवाई।	वर्षा पर निर्भर करता है (शुष्क काल 10–12 दिन मध्यान्तर)	65–70 दिन बुवाई के बाद	35–40
ज्वार/ ज्वार/ चरी (बहु कट)	छिड़कावः 20–25 सीधी बुवाईः 15–20	मार्च अप्रैल	30–40	70:30:30 किग्रा एनःपीः बुवाई के समय के./ हैक्टेयर उसके बाद का समय शीर्ष ड्रेसिंग 50 किलो टन/हैक्टेयर के बाद प्रत्येक कट।	गर्मीः 5–6 बार मानसूनः बारिश पर निर्भर करता है	पहली कटाई पर 55–60 दिन बुवाई के बाद का 45 दिन के बाद काटें	80–90
बाजरा/मोती बाजरा (एकल कट)	छिड़कावः 10–12 सीधी बुवाईः 8–10	जून जुलाई	30–40	50:30:30 किग्रा एनःपीः बुवाई के समय किग्रा./ हैक्टेयर. उसके बाद का समय शीर्ष ड्रेसिंग के साथ एक बार में 30 किग्रा टन/हैक्टेयर महीने के बाद बुवाई।	निर्भर करता है वर्षा भर (इं शुष्क मंत्र 10–12 दिन मध्यान्तर)	60–65 डीएएस	40–45

फसल	बीज दर (किग्रा/हेक्टेयर)	बोवाई समय	अंतर पंक्ति अंतर (सेमी)	खाद की खुराक और शेड्यूलिंग	सिंचाई अंतराल और संख्या	फसल काटने वाले अनुसूची	हरा चारा उपज (टन/हेक्टेयर)
बाजरा/मोती बाजरा (बहु कट)	प्रसारणः 15–20 लाईन बुवाईः 10–15	मार्च–अप्रैल	30–40	60:30:30 किग्रा एनःपीः बुवाई के समय किग्रा./ हैक्टेयर उसके बाद का समय शीर्ष ड्रेसिंग 50 किलो टन/हैक्टेयर के बाद प्रत्येक कट।	गर्मीः 4–6बार मानसूनः निर्भर करता है बारिश पर	पहली कटौती पर 50–55 दिन बाद का 35 पर काटें 40 दिन	90–100
मक्का/ मक्का	प्रसारणः 60–70 लाईन बुवाईः 50–60	गर्मीः मार्च–अप्रैल मानसून जून जुलाई	25–30	50:40:40 किग्रा एनःपीः बुवाई के समय किग्रा./ हैक्टेयर उसके बाद का समय शीर्ष ड्रेसिंग के साथ एक बार में	गर्मीः 7–8 बार मानसूनः निर्भर करता है वर्षा पर (इं शुष्क काल 8–10 दिन मध्यान्तर)	60–70 दिन	40–45
जई (एकल/ कट)	प्रसारणः 70–80 लाईन बुवाईः 60–70	अक्टूबर अंत करना इसका सप्ताह नवंबर	25–30	80:40:40 किग्रा एनःपीः बुवाई के समय किग्रा./ हैक्टेयर उसके बाद का समय शीर्ष ड्रेसिंग के साथ एक बाद में 40 किग्रा टन/हैक्टेयर महीने के बाद बुवाई	3–4 बार	70–75 दिन	40–45
जई (बहु/ कट)	प्रसारणः 70–80 लाईन बुवाईः 60–70	अक्टूबर अंत करना इसका सप्ताह नवंबर	25–30	100:40:40 किग्रा एनःपीः बुवाई के समय किग्रा./ हैक्टेयर उसके बाद का समय शीर्ष ड्रेसिंग के साथ 40 किलो टन/हैक्टेयर के बाद प्रत्येक कट।	7–8 बार	पहली कटौती पर 65 दिन बाद का 35 पर काटे–40 दिन	55–60

दलहनी चारा फसलें

फलीदार चारा फसलों में वायुमंडलीय नाइट्रोजन को उनकी जड़ों पर नोड्यूल गठन के माध्यम से स्थिर करने की क्षमता होती है और बाहरी स्त्रोतों से कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। फलीदार चारे का विशेष महत्व है क्योंकि उच्च शाक प्रोटीन और नाइट्रोजन की जरूरतों के लिए मिट्टी से आंशिक स्वतंत्रता।

विभिन्न फलीदार चारा फसलों हेतु सस्य क्रियाएं और पद्धतियां

फसल	बीज दर (किग्रा/हेक्टेयर)	बोवाई समय	अंतर– पंक्ति अंतर (सेमी)	खाद की खुराक और शेड्यूलिंग	सिंचाई अंतराल और संख्या	फसल काटने वाले अनुसूची	हरा चारा उपज (टन/हेक्टेयर)
लोबिया/लोबिया (ग्रीष्मकालीन फसल)	छिड़कावः 25–30 सीधी बुवाईः 20–25	मार्च– अप्रैल	40–50	20 किग्रा एन और 60 किग्रा P_2O_5/हे. बुवाई समय	6–7	70–75 दिन	35–40
लोबिया/लोबिया (बरसात का मौसम में कट)	छिड़कावः 25 –30 सीधी बुवाईः 20–25	जून जुलाई	40–50	20 किग्रा एन और 60 किग्रा P_2O_5/हे. बुवाई समय	इस पर निर्भर करते हुए वर्षा (शुष्क काल में 10–12 दिन मध्यान्तर)	60–65 दिन	35–40

फसल	बीज दर (किग्रा / हेक्टेयर)	बोवाई समय	अंतर– पंक्ति अंतर (सेमी)	खाद की खुराक और शेड्यूलिंग	सिंचाई अंतराल और संख्या	फसल काटने वाले अनुसूची	हरा चारा उपज (टन / हेक्टेयर)
ग्वार / क्लस्टर बीन (ग्रीष्म कालीन कट)	प्रसारणः 25 –30 सीधी बुवाईः 20–25	मार्च– अप्रैल	30–40	20 किग्रा एन और 60 किग्रा P_2O_5 / हैक्टेयर बुवाई समय	5–6	70–75 दिन	30–35
ग्वार / क्लस्टर बीन (वर्षा मौसमी फसल)	छिड़कावः 30 –35 सीधी बुवाईः 25–30	जून जुलाई	30–40	20 किग्रा एन और 60 किग्रा P_2O_5 / हैक्टेयर बुवाई समय	इस पर निर्भर करते हुए वर्षा (शुष्क काल में 10–12 दिन मध्यान्तर)	65–70 दिन	30–35
राइसबीन / गैमुंग / लाल लोबिया	छिड़कावः 30 –35 सीधी बुवाईः 25–30	मार्च– सितंबर	20–25	20 किलो पर, 80 किलो P_2O_5 बुवाई समय	4–5 की संख्या में गार्मियो के दौरान और वर्षा आधारित मानसून	65–75 दिन	30–35
बरसीम	छिड़कावः 25–30 सीधी बुवाईः 20–25	2 पखवाड़े का अक्टूबर	20–25	20 किलो एन, 80 किलो P_2O_5 और 40 किग्रा K_2O/ हैक्टेयर बुवाई समय	8–12	पहली कटौती पर 50–55 दिन बाद का 30 पर काटें 35 दिन	100–120
ल्यूसर्न / रिजका	छिड़कावः 20–25 सीधी बुवाईः 15–20	सितंबर अक्टूबर	30–35	20 किलो एन. 70 किलो K_2O/हैक्टेयर बुवाई समय	10–14	पहली कट 60–65 दिन पर	80–100

बारहमासी घास

बारहमासी घास साल भर पौष्टिक और स्वादिष्ट चारा प्रदान करती हैं। बारहमासी घास तेजी से बढ़ती है और अधिक शाक पैदा करती है जो हरे चारे और साइलेज के रूप में खिलाने के लिए उपयुक्त है। ये घास उच्च तापमान में अच्छी तरह से विकसित होती हैं और काफी लंबे समय तक सूखे की स्थिति का सामना कर सकती हैं।

सिंचाई चैनल के बांधो पर बाजरा नेपियर हाइब्रिड उगाना

मेड़ो पर बाजरा नेपियर हाइब्रिड को उगाना

बाजरा नेपियर हाइब्रिड और गिनी घास हेतु सस्य क्रियाएं

फसल	बीज दर (किग्रा/हेक्टेयर)	बोवाई समय	अंतर पंक्ति अंतर (सेमी)	खाद की खुराक और शेड्यूलिंग	सिंचाई अंतराल और संख्या	फसल काटने वाले अनुसूची (DAS-days बुवाई के बाद)	हरा चारा उपज (टन/हेक्टेयर)
बाजरा नेपियर हाइब्रिड	35,000 जड़े निकल जाती हैं या तना कटाई है	फरवरी–अगस्त (गर्मी रोपण अंतर्गत सिंचाई)	75सेमी 50सेमी	भूमि तैयारी 60:50:40 किग्रा एन.पी.के/हे. पर बुवाई के समय उसके बाद शीर्ष के साथ ड्रेसिंग 40 किग्रा एन/हैक्टेयर प्रत्येक कट के बाद। 20 का जोड़ 25 टन एफ.वा.ई.एम./ हैक्टेयर के दौरान आवश्यक है।	मार्च से मई के दौरान 15–18 दिनों के अंतराल पर और गर्मी के महीनों में 10–12 दिनों के अंतराल पर	पहली कटौती पर 60–65 दिन बाद का 25 पर काटें–तीस दिन	100–140 वर्ष
गिनी घास	40,000 जड़े	फरवरी–जुलाई		60:60:50 किग्रा एनः पीः के	मार्च से मई के दौरान	पहली कटौती पर	80–100 वर्ष
	स्लिप्स हैक्टेयर और 3–4 किग्रा बीज/हे.	(गर्मी रोपण अंतर्गत सिंचाई)	50 सेमी 50 सेमी	एन/हैक्टेयर पर बुवाई का समय उसके बाद शीर्ष के साथ ड्रेसिंग 40 किग्रा एन/ हैक्टेयर प्रत्येक कट के बाद। 20 का जोड़–25 टन एफवा. ईएम/ हैक्टेयर के दौरान आवश्यक है। भूमितैयारी	15–18 दिनों के अंतराल पर और गर्मी के महीने में 10–12 दिनों के अंतराल पर	60–65 दिन बाद का 25 पर काटें–तीस दिन	

बारहमासी चारा जैसे बाजरा नेपियर हाइब्रिड, गिनी घास आदि को क्षेत्र की सीमाओं और सिंचाई चैनलों की मेढ़ों पर प्रभावी ढंग से उगाया जा सकता है। ये क्षेत्र मौजूदा फसलों और फसल प्रणाली के साथ कोई प्रतिस्पर्धा नहीं करते हैं। जिन भूमि क्षेत्रों का किसी भी कृषि प्रयोजनों के लिए उपयोग नहीं किया जाता है, उन्हें बारहमासी चारा उत्पादन के तहत लाया जा सकता है। इन भूमि क्षेत्रों के अतिरिक्त, सामुदायिक भूमि को बारहमासी चारा उत्पादन के लिए भी नियोजित किया जा सकता है

कच्चे प्रोटीन की मात्रा और विभिन्न चारा फसलों की विविधता

चारे की फसल	क्रूड प्रोटीन संतुष्ट (प्रतिशत)	प्रजाति
मक्का/मक्का दूध या आटे की अवस्था में (*जिया मेज* एल.)	9–10	अफ्रीका लंबा और विजय
ज्वार/ज्वार/चारी–50 प्रतिशत पुष्पन अवस्था पर (*सोरघम बाइकोलर* (एल.) मोएंच।	9–10	सिंगल कटः पीसी–6, पीसी–9, राज चारी–1, राज चारी–2 मल्टी कट : एसएसजी–59–3, पंत चारी–5, पूसा चारी हाइब्रिड–109, सीओएफएस–29, सीअे–27, एएस–16
बाजरा–50 प्रतिशत फूल आने की अवस्था में (*पेनिसेटम ग्लोकम* एल.)	7–10	सिंगल कट : राज बाजरा मल्टी कट : जायंट बाजरा

जई / जय–50 प्रतिशत फूल आने की अवस्था मे *(एवैना सैटिवा* एल.)	10–11.50	सिंगल कटः JHO 822 और केंट मल्टी कटः JO 1 और JHO 851
लोबिया / लोबिया (*विग्ना अनगुइकुलता* एल)	20–24	बुंदेल लोबिया 1 और बुंदेल लोबिया 2
ग्वार / क्लस्टर बीन (*साइमोप्सिस टेट्रागोनालोबा* एल. तौब)	17–20	बुंदेल खार 1 और बुंदेल खार 2
राइसबीन / गैमुंग / रेडबीन (*विग्ना अंबलेट* (अंगूठे) ओहवी और ओहाशी)	20–22	विधान 1 और विधान 2
बरसीम (*ट्राइफोलियम अलेक्जेंड्रिनम* एल.)	17–22	मेस्कावी, वार्डन, बीबी–3
ल्यूसर्न / रिजका (*मेडिकागो सैटिवा* एल.)	15	सिरसा–8, आनंद–2, आनंद–3
बजरा नेपियर हाइब्रिड / शंकर नेपियर (*पेनिसेटम ग्लोकम* पी. परप्यूरियम।)	8.7–14(CO_4-10%) (CO_5-15%)	सीओ 4, सीओ 5, आईजीएफआरआई 3, एनबी 21
गिनी घास (पैनिकम अधिकतीजाक।)	10	बुंदेल गिनी 1, बुंदेल गिनर 2 और हैमिल

स्त्रोतः आईसीएआर–आईजीएफआरआई, झांसी द्वारा प्रकाषित फोरेंज क्रॉप्स एंड देयर मैनेजमेंट पर तकनीकी बुलेटिन।

मक्का+लोबिया मिश्रित फसल

मक्का+लोबिया मिश्रित फसल (प्रत्येक फसल का 50 प्रतिशत बीज दर) चारे वाली मक्का की एकमात्र हरे चारे की उपज की तुलना में कुल हरे चारे की उपज 41-45% अधिक दे सकती है। हालाँकि कटाई का समय बहुत महत्वपूर्ण है और मक्का + लोबिया मिश्रित फसल को बुवाई के 55 से 58 दिनों के भीतर आवश्यकता होती है। कटाई में देरी से हरे चारे की पैदावार में भारी कमी आ सकती है।

बरसीम+गोभी सरसों (*ब्रासिका नेपस वर नेपस*) मिश्रित फसल

पहली कटाई में, कम जीवाणु नाइट्रोजन स्थिरीकरण और कम शाखाओं के कारण बरसीम की चारे की उपज कम होती है। पहली कटाई में उपज की भरपाई करने के लिए, बरसीम के बीज को गोभी सरसों के 700–800 ग्राम बीज के साथ मिलाकर और बरसीम+गोभी सरसों की मिश्रित फसल के साथ बोया जाता है, जिससे पहली कटाई पर हरे चारे की कुल उपज 38–42% तक बढ़ जाती है। हरे चारे की उपज में सुधार के अलावा, गोभी सरसों की चौड़ी पत्तियां कई खरपतवारों के विकास को दबा सकती हैं।

बरसीम में कासनी / कासनी *(चिकोरियम इंटीबस)* प्रबंधन

कसनी / कासनी बरसीम की फसल से जुड़ा एक प्रमुख खरपतवार है। इस खरपतवार की प्रकृति ऐसी होती है कि यह खेत से लेकर बीज तक और इसके विपरीत भी प्रभावित करता है। फसल की अंतिम कटाई के बाद सामान्य नमक के 10% घोल का उपचार करके और मिट्टी के उलटे हल से गहरी गर्मी की जुताई करके खेत में संक्रमण की तीव्रता को कम किया जा सकता है। आमतौर पर बरसीम के बीज के साथ कासनी मिलाई जाती है।

मक्का पर लोबिया का पूरक प्रभाव

55 दिन के बाद मक्का पर लोबिया का पूरक प्रभाव

मक्का पर लोबिया का प्रतिस्पर्धात्मक प्रभाव

चूँकि कासनी के बीज का आकार बरसीम के बीज जैसा होता है; साधारण तरीकों से इन्हें अलग करना मुश्किल हो जाता है। हालांकि बरसीम का बीज अंडाकार होता है जबकि कासनी का बीज शंक्वाकार होता है। बरसीम के बीज से कासनी के बीज निकालने के लिए 10 प्रतिशत साधारण नमक के घोल का प्रयोग किया जाता है। कासनी के बीज बरसीम की तुलना में घनत्व में हल्के होते हैं, सतह पर तैरते हैं जबकि बरसीम के बीज कंटेनर के तल पर बैठ जाते हैं। इस प्रकार कासनी के बीजों को निकालकर बरसीम के बीजों को एकत्र कर लिया जाता है।

साल भर चारा उत्पादन

ओवरलैपिंग क्रॉपिंग सिस्टम जिसमें बरसीम उगाना शामिल है, वसंत में बाजरा नेपियर हाइब्रिड/गिनी घास के साथ अंतर–रोपण और बरसीम की अंतिम फसल के बाद गर्मियों के दौरान लोबिया के साथ बी एन हाइब्रिड/गिनी घास के अंतर–पंक्ति स्थानों में इंटरक्रॉपिंग वर्ष भर करना हरे चारे की आपूर्ति कर सकता है। हरे पौष्टिक चारे की उच्च उपज प्राप्त करने और मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के उद्देश्य से गहन चारा उत्पादन प्रणाली तैयार की गई है। है। साल भर हरा चारा उपलब्ध कराने के लिए सुनिश्चित सिंचाई के तहत ज्वार+लोबिया–बरसीम+गोभी सरसों–मक्का+लोबिया और ज्वार (मल्टीकट)+लोबिया–बरसीम+ गोभी सरसों जैसे बहुफसली क्रमों में बांध या गैर–प्रतिस्पर्धी भूमि क्षेत्रों पर बाजरा नेपियर हाइब्रिड/गिनी घास लगाया जाता है।

अफ्रीकन टाल की उच्च हरे चारे की उपज

ओट सिंगल कट किस्म

ओट मल्टी कट किस्म

कुसुम फसल में सल्फर आवश्यक

उमेश कुमार पटेल,
दाऊ श्री वासुदेव चंद्राकर कामधेनु विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, अंजोरादुर्ग (छ.ग.)

कुसूम में सल्फर की पूर्ति के लिए जिप्सम एक बहुत ही उपयोगी उर्वरक है। इसमें 20 प्रतिशत सल्फर होता है। सल्फर अमीनों एसिड तथा प्रोटीन निर्माण में सहायक होता है, जिससे तेल की प्रतिशत मात्रा बढ़ती है। यह पत्ती के हरेपन के निर्माण में सहायक होता हैं, जिसमें पौधो में भोजन निर्माण अधिक होने से उपज में वृद्धि होती है तथा कुसुम फसल में तेल की गुणवत्ता एवं उपज दोनो में सुधार होता है।

मृदा में पर्याप्त मात्रा में सल्फर होने से पौधों के जड़ो का विकास अच्छा होता है। सल्फर के सभी महत्वपूर्ण कार्यों के कारण तिलहनी फसलों में इसका उपयोग अधिक किया जाता है। सल्फर की पूर्ति सल्फर पाउडर डालकर भी की जा सकती है लेकिन जिप्सम का प्रयोग सर्वोत्तम है। भारत में पाई जाने वाली जिप्सम की मात्रा राजस्थान के बीकानेर, नागौर तथा हनुमानगढ़ क्षेत्र में है। जिप्सम अन्य सल्फर उर्वरको की अपेक्षा सस्ता एवं आसानी से उपलब्ध होता है। शुद्ध जिप्सम में 23.3 प्रतिशत कैल्शियम तथा 18.6 प्रतिशत सल्फर की मात्रा होती है, इसमें साधारण तौर पर पाये जाने वाले जिप्सम में 20 प्रतिशत कैल्शियम तथा 15.16 प्रतिशत सल्फर पाई जाती है। अन्य सल्फर उर्वरको की अपेक्षा जिप्सम अधिक लाभप्रद है। जिप्सम में सल्फर के साथ–साथ कैल्शियम भी पाया जाता है, जिससे पौधो की वृद्धि अच्छी होती है। क्षारीय

मृदा में जिप्सम डालने पर भूमि का पी.एच. मान कम हो जाता है, जिससे भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ जाती है और आवश्यक खनिज तत्व भी मिल जाते हैं। इससे भूमि में सुधार भी होता है। जिप्सम की मात्रा से मृदा में प्राप्त सल्फर की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। जिप्सम डालने का तरीका यह है कि यह ढेलों के रूप में मिलता है, इन्हे तोड़कर बारीक कर ले फिर खेत में समान रूप से दें तथा 10 से.मी. की गहराई तक अच्छी तरह मिलाकर दें। इसका खड़ी फसल में भी उपयोग किया जाता है।

जिप्सम के लाभ

» **मृदा सघनता को कम करनाः** जीवांश खाद के साथ जिप्सम के प्रयोग से मृदा मुलायम हो जाती है, जिससे जुताई में असानी होती है और फसल अच्छी होती है।

» **मृदा क्षरण एवं जल अप्रवाह कम करना** : जिप्सम तेज प्रवाह के विरूद्ध सुरक्षात्मक कार्य करता है, जिससे मृदा क्षरण भी नियंत्रित होता है।

» **मृदा संगठन में सुधार** : जिप्सम जड़ वृद्धि को बढ़ाता है एवं मृदा में वायु तथा पानी का संचार बढ़ाता है।

» **लवणीय मृदा का सुधार** : लवणीय मृदाओं के सुधार के लिए आर्थिक रूप से उपयोगी है।

» **जल उपयोग क्षमता में वृद्धि** : फसलों द्वारा जल उपयोग क्षमता में जिप्सम के प्रयोग से वृद्धि होती है। अतः फसल अवधि के बीच सूखे में यह बहुत महत्वपूर्ण है।

» **जल प्लावन को कम करता है** : जिप्सम मृदाओं की जल निकास क्षमता में वृद्धि करता है, जिससे जल प्लावन की समस्या कम होती है।

» **मृदा सुधारक की क्रिया विधि बढ़ाता है** : जिप्सम विभिन्न मृदा सुधारकों की क्रिया विधि में सुधार करके मृदा संगठन को उन्नत करता है।

» **जीवांश पदार्थ को क्ले से जोड़ना** : जीवांश पदार्थ की उपयोगिता एवं महत्व में जिप्सम के साथ मिलाने से वृद्धि होती है।

» **मृदा की कठोर परत बनने से रोकता है** : जिप्सम मृदा की कठोर परत बनने से रोकता है, जिससे बीज अंकुरण जल्दी व अच्छा होता है।

» **मृदा पी.एच. कम करता है :** जिप्सम के प्रयोग से मृदा पी. एच. मान में सुधार होता है, जिससे अच्छी वृद्धि प्राप्त होती है।

जिप्सम के उपयोग

मृदा सुधारक के रूप में : मृदा में जब विनिमेय सोडियम या सोडियम बाइकार्बोनेट, सोडियम कार्बोनेट तथा सोडियम सल्फेट लवणों की प्रचुरता हो जाती है, तब वह क्षारीय मृदा कहलाती है। इसका पी.एच. संतृप्तावस्था में 8.2 या इससे अधिक होता है तथा संतृप्त निष्कर्ष की विद्युत चालकता सीमारहित तथा विनिमेय सोडियम 15 प्रतिशत या इससे अधिक होता है। क्षारीय मृदाओं की देखरेख पहचान के लिए, वर्षा ऋतु में जल काफी समय तक भरा रहता है। मृदा गीली होने पर चिकनी हो जाती है तथा इसके ऊपर भरा हुआ जल गदला रहता है और सुखने पर दरारे पड़ जाती हैं। क्षार ग्रस्त मृदाओं में पौधो की वृद्धि या तो कम या बिल्कुल नही होती। सामान्य भाषा में इन मूदाओं को ऊसर के नाम से जाना जाता है।

क्षारीय मृदा के सुधार के लिए जिप्सम $CaSO_4.2H_2O$ एक अत्यंत सस्ता और प्रभावकारी सुधारक है। जिप्सम में उपस्थित कैल्सियम मृदा में उपस्थित सोडियम आयन को प्रतिस्थापित कर देता है। जिससे कि मृदा की रासायनिक दशा में सुधार होता है। 2Na- (मृदा) + $CaSO_4Ca$ (मृदा)+Na_2SO_4(निक्षालित) जिप्सम सोडियम कार्बोनेट के साथ अभिक्रिया करके कैल्सियम कार्बोनेट में रूपांतरित कर देता है और सोडियम को सल्फेट के रूप में निक्षालित कर देता है। Na_2CO_3+$CaSO_4$+$CaCO_3$+Na_2SO_4(निक्षालित) जिप्सम की प्रयोजनीय मात्रा मृदा के पी.एच. मान पर निर्भर करती है। इससे जानने के लिए 100 ग्राम मृदा से विनिमेय सोडियम 1 मि.ली. तुल्यांक की परिकलन किया जाता है और 1 हैक्टेयर मृदा (30 से.मी. गहरी परत) के लिए सामान्यतः 48 क्विंटल जिप्सम की आवश्यक होती है।

जिप्सम की प्रयोगविधि

जिप्सम को वर्षा ऋतु से पहले खेत की जुताई करके फैला देना चाहिए। जिप्सम मिलाते समय जल की काफी मात्रा खेत में लगभग 10 से 15 दिनों तक भरी रहना चाहिए।

सल्फर के स्त्रोत के रूप में

जिप्सम सल्फर का सबसे सस्ता एवं सुलभ स्त्रोत है। फसल उत्पादन में सल्फर एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व है। आजकल कई स्थानों में लगातार एक ही तरह की फसल लगाने से मृदा में सल्फर तत्व की कमी भी हो जाती है। जिप्सम में 13 से 19 प्रतिशत तक सल्फर उपस्थित होता है। अतः उसे सल्फर के स्त्रोत के रूप में उपयोग किया जाना लाभदायक है।

सल्फर तत्व की कमी के प्रमुख कारण निम्न हैः

- अधिक उपज एवं फसल सघनता के कारण मृदा सल्फर का अधिक दोहन होना।
- मिट्टी परीक्षण के अनुसार अनुसंशित उर्वरकों का प्रयोग न होना।
- सल्फर का प्रयोग मृदा में दोहन ही अपेक्षा कम होना।
- सल्फर रहित उर्वरकों का प्रयोग करना।
- फसल अवशेषों का पुनः चक्रण न होना।
- मृदाक्षरण एवं निक्षालन द्वारा सल्फर का ह्रास होना।
- अधिक सल्फर उपयोग करने वाली फसलों का (दलहन और तिलहन) का क्षेत्रफल बढ़ना।

सल्फर के कार्य

- सल्फर पौधों के क्लोरोफिल अमीनों अम्ल एवं एन्जाइम आदि का महत्वपूर्ण संरचनात्मक घटक है, इस प्रकार सल्फर के उपयोग से उत्पाद की गुणवत्ता एवं उपज दोनो में वृद्धि होती है।
- बीजो में तेल का प्रतिशत बढ़ाती है।
- सल्फर युक्त अमीनों एसिड के संश्लेषण एवं प्रोटीन का प्रतिशत बढ़ता है।
- चारे का पोषक महत्व बढ़ता है।
- गेंहू की बेकिंग क्वालिटी बढ़ाता है।
- गन्ने में शर्करा की मात्रा बढ़ता है।

सल्फर की पूर्ति के लिए जिप्सम का प्रयोग

फसल उत्पादन में सल्फर एक प्रमुख सीमित घटक है। सल्फर के अभाव में फसल का उत्पादन एवं उपज की गुणवत्ता दोनो ही प्रभावित होती है। अतः अधिक फसलोत्पादन के लिए सल्फर की अनुसंशित मात्रा बुवाई के समय आधार खाद के रूप में प्रयोग करना अतिआवश्यक है। भारत वर्ष में कुसुम की खेती मुख्यतः तेल के लिए की जाती है, कुसुम के बीजों में 24–36 प्रतिशत तेल पाया जाता है। कपड़े व खाने के रंगों में कुसुम का प्रयोग किया जाता है। वर्तमान में कृत्रिम रंगों का स्थान, कुसुम से तैयार रंग के द्वारा ले लिया गया है। यह तेल खाना–पकाने व प्रकाश के लिए जलाने के काम आता है। यह साबुन, पेंट, वार्निश, लिनोलियम तथा इनसे संबंधित

पदार्थों को तैयार करने के काम में भी आता है। इसके तेल से तैयार पेंट व वार्निश में स्थायी चमक व सफदी होती है। कुसुम के तेल का प्रयोग विभिन्न दवाइयों के रूप में भी किया जाता है। कुसुम का उत्पत्ति स्थान भारत, पाकिस्तान व इसके आस – पास का क्षेत्र माना जाता है। यहीं से इसका प्रचार व प्रसार विश्व के अन्य देशों को हुआ। कुसुम का तेल गुणवत्ता में सूरजमुखी के तेल से भी उत्तम माना जाता हैं। विश्व के कुसुम उत्पादक प्रमुख देशों में भारत, अमेरिका, कनाडा और इथोपिया आदि हैं। भारत में कुसुम की खेती करने वाले प्रमुख राज्यों में महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश व गुजरात एवं छत्तीसगढ आदि हैं।

बुवाई का समय

फसल बोने का उपयुक्त समय सितम्बर माह के अंतिम से अक्टूबर माह के प्रथम सप्ताह तक है।

बुवाई का तरीका

कुसुम फसल के बीज की बुवाई पंक्तियों में करना लाभकारी रहता है ।

बीज की दुरी

इसकी फसल की बुआई में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 40–45 सेमी. व पौधे से पौधे की दूरी 20–25 सेमी. रखना सर्वोत्तम होता है।

बीज की गहराई

कुसुम फसल के बीज की गहराई लगभग 3–4 पर बुआई करना उपयुक्त रहता है ।

बीज की मात्रा

बुवाई के लिये कुसुम की फसल की बीज की मात्रा 20–25 किग्रा०प्रति हैक्टेयर पर्याप्त रहता है।

बीज उपचार

बुवाई से पूर्व इस बीज को कैप्टान या थीरम या मैंकोजेब एवं जैव उर्वरक की 3–3 ग्राम मात्रा से प्रति किग्रा० बीज की दर से उपचारित कर बुआई करना चाहिये।

जलवायु

कुसुम की फसल एक ठण्डी जलवायु की फसल है। इसके अंकुरण के लिये उपयुक्त तापक्रम लगभग 15°C है तथा पौधों की वृद्धि एवं बढ़वार के समय लगभग 24-28°C उचित रहता है।

मृदा का चुनाव

कुसुम की फसल विभिन्न प्रकार की मृदाओं में उगाई जाती है लेकिन अच्छे उत्पादन के हेतु कुसुम फसल के लिये बलुई भूमि, मध्यम काली मिट्टी से लेकर भारी काली मिट्टी उपयुक्त मानी जाती है। मृदा का pH मान 6–5 से 8 के बीच उपयुक्त रहता है।

खेत की तैयारी

कुसुम की खेती के लिए मिट्टी को देसी हल या कल्टीवेटर से दो या तीन बार जोताई करें और प्रत्येक जुताई या हैरो के पश्चात् भूमि में नमी संरक्षण हेतु पाटा लगाना आवश्यक होता है। ध्यान रहे खेत में जलभराव की समस्या न रहे।

खाद एवं रासायनिक उर्वरक

कुसुम की फसल के लिये बुवाई से पहले खेत तैयारी के समय लगभग 15 टन सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हैक्टेयर की दर से मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देनी चाहिए। तथा रासायनिक उर्वरक के रूप में 60 किग्रा नाइट्रोजन, 40 किग्रा. फास्फोरस व 20 किग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग किया जाना चाहिये। कुल मात्रा का दो तिहाई नाइट्रोजन व सम्पूर्ण फास्फोरस तथा पोटाश बुवाई के समय प्रयोग करने चाहियें। नाइट्रोजन की शेष मात्रा बुवाई के 45 दिन बाद टाप – ड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करनी चाहिये। ध्यान रहे रासायनिक उर्वरक मिट्टी परिक्षण के आधार पर ही देना चाहिए। कुसुम फसल मे सल्फर एक आवश्यक पोषक तत्व है अतः सल्फर की उपरोक्त निर्धारित मात्रा को देनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार की रोकथाम के लिए समय–समय पर आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई करना चाहिए।

सिंचाई

कुसुम एक असिंचित क्षेत्रों में उगाई जाने वाली फसल है। इन क्षेत्रों में कुसुम की फसल की खेती वर्षा पर आधारित होती है, यदि सिंचाई जल उपलब्ध है तो बुवाई के 30 दिन बाद एक सिंचाई करनी चाहिये।

फसल की कटाई

कुसुम की फसल बुवाई के 130–140 दिनों पश्चात् पककर तैयार हो जाती है ।

उत्पादन

इस प्रकार सल्फर पोषक तत्व के प्रयोग से असिंचित क्षेत्रों में कुसुम फसल की उपज 10–12 क्विटल/हैक्टेयर होती है, व सिंचित क्षेत्रों में 14–18 क्विटल/हैक्टेयर तक उपज प्राप्त हो जाती है।

राजस्थान में आलू की उन्नत खेती एवं वर्तमान परिदृश्य

डी.एल. यादव[1], प्रताप सिंह[1], बी एल नागर[1], प्रतिक जैसानी[1] एवं रीतू मावर[2]
[1]कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, कृषि विश्वविद्यालय, (राजस्थान)
[2]केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान)

1 प्रस्तावना

आलू की बाजार में मांग वर्षभर बनी रहती है इसलिए किसानों का रूझान आलू की खेती की ओर अधिक होने लगा है। किसान आलू के उत्पादन को बढ़ाने के लिए ऐसी किस्मों का चुनाव करना चाहता है जो कम समय में पककर तैयार हो जाए जिससे उसे लाभ प्राप्त हो सके। आलू की खेती देश के बड़े भाग पर की जाती है। विश्व के कई देशों में आलू आज भी "जीविका भोजन" है। आलू को सब्जियों के राजा के नाम से जाना जाता हैं। वर्तमान में आलू के उत्पादन में विश्व में चीन के बाद भारत का दूसरा स्थान है। भारत में आलू उत्पादन में उत्तर प्रदेश अग्रणी राज्य है। इसके बाद पश्चिम बंगाल, बिहार, गुजरात, मध्यप्रदेश, पंजाब, हरियाणा, असम एवं छतीसगढ राज्य हैं। वर्तमान में सब्जियों का उत्पादन 187.5 मिलियन टन हैं। जिसमें आलू का उत्पादन 51.3 मिलियन टन (कुल सब्जी उत्पादन का 27.4 प्रतिशत है) जो कि पिछले पांच वर्षो में औसत उत्पादन से 5 प्रतिशत अधिक हैं। कुल सब्जी का क्षेत्रफल 10.2 मिलियन हैक्टेयर है जिसमें आलू का क्षेत्रफल 2.14 मिलियन हैक्टेयर (कुल सब्जी के क्षेत्रफल का 20.5 प्रतिशत) हैं।

राजस्थान में कुल सब्जी का क्षेत्रफल 166235.8 हैक्टेयर है जिसमें आलू का क्षेत्रफल 13819 हैक्टेयर है एवं राज्य का कुल सब्जी उत्पादन 1699584 MT हैं। जिसमें आलू का उत्पादन 278519 MT है एवं आलू की उत्पादकता 201.6 क्विंटल है। राजस्थान के मुख्य उत्पादक जिलें धौलपुर, भरतपुर, हनुमानगढ, कोटा, सिरोही, श्रीगंगानगर एवं जालौर प्रमुख है। मनुष्य द्वारा प्रयोग की जाने वाली विभिन्न प्रकार की सब्जियों में आलू का प्रमुख स्थान है। आलू आज हमारे खाने का एक अहम हिस्सा बन गया। कई सब्जियां बिना आलू के अधूरी हैं। आलू के बिना किचन की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। जब आलू के दाम आसमान छूते हैं तो पूरे भारत में हंगामा मच जाता है। आलू स्वास्थ्य के लिए भी बहुत लाभदायक है। आलू में अनाज के बराबर ही प्रोटीन पाया जाता है। वहीं, इसमें विटामिन सी भी पाया जाता है। आलू में आयरन के साथ–साथ फॉस्फोरस, पोटेशियम, मैग्नीशियम जैसे खनिज तत्व भी पाए जाते हैं। आलू में ऐसे तत्व भी पाए जाते हैं, जो बढ़ती उम्र के साथ रोगों को रोकने में सहायक होते हैं। आलू की फसल से अन्य प्रमुख खाद्यान्न के मुकाबले कम समय में ही अधिक खाद्य प्रति इकाई क्षेत्र में पैदा किया जा सकता हैं।

खेतों तथा भंडारगृह में लगने वाले कीट एवं रोग आलू को बहुत नुकसान पहुंचाते हैं। गंभीर संक्रमण की स्थिति में फसल को कीटों द्वारा 40–50 प्रतिशत तक नुकसान होता है। आलू के कुछ प्रमुख कीटों व रोगों का विवरण एवं नियंत्रण के उपाय प्रस्तुत किये गये है जिनको अपनाकर फसल को नुकसान से बचाकर उत्पादन में सहज बढोतरी की जा सकती है।

राज्य में आलू की काफी संभावनाएं हैं क्योंकि राजस्थान में साल भर हरी सब्जियाँ उपलब्ध नहीं होती हैं। यदि अच्छी गुणवत्ता के बीज, उचित विपणन प्रणाली, पर्याप्त कोल्ड स्टोरेज और सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है, तो निश्चित रूप से आलू की संभावना उज्ज्वल होगी। प्रति इकाई क्षेत्र में उच्च उत्पादन प्राप्त करने के लिए फ्रंट लाइन प्रदर्शनों के साथ–साथ विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से किसानों को शिक्षित करना आवश्यक है। प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना के लिए दक्षिण पूर्व राजस्थान सबसे उपयुक्त क्षेत्र है। इससे मांग बढ़ेगी और किसानों को राज्य में अधिक आलू उगाने के लिए प्रेरित करेगी।

2 जलवायु एवं भूमि

आलू के लिये शीतोष्ण जलवायु तथा कन्द बनने के समय उपयुक्त तापक्रम 18 से 20 डिग्री सेन्टीग्रेड होना चाहिये। यह फसल पाले से प्रभावित होती है। आलू की फसल सामान्य तौर पर सभी प्रकार की भूमि में उगाई जा सकती है परन्तु हल्की बलुई दोमट मिट्टी वाला उपजाऊ खेत जहां जल निकास की सुविधा हो इसके लिये विशेष उपयुक्त रहता है। खेत का समतल होना भी आलू की फसल के लिये आवश्यक है। आलू को 6 से 8 पी एच वाली भूमि में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है परन्तु लवणीय तथा क्षारीय भूमि इस फसल के लिये पूर्णतया अनुपयुक्त रहती है।

3 उन्नत किस्में

कुफरी संगम

इस किस्म में रोग प्रतिरोधी क्षमता अधिक होती है. इसमें पछेता झुलसा बीमारी को सहन करने की क्षमता अधिक होती है. खास बात यह है कि किसानों को परीक्षण से उत्पादित बीज दिया जा रहा है। यह किस्म कुफरी चिप्सोना, कुफरी बहार, फ्राइसोना से अधिक उत्पादन देगी। यह किस्म देश के 8 राज्यों के लिए खास उपयोगी मानी गई है। इसमें उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, उत्तराखंड, छत्तीसगढ़ हरियाणा और पंजाब का नाम शॉामिल है. इसकी बुवाई उत्तरी मैदान में अक्टूबर के दूसरे पखवाड़े में कर सकते हैं. इसके अलावा केंद्रीय मैदान में अक्टूबर से नवंबर के पहले पखवाड़े तक कर सकते हैं।

कुफरी गंगा

कुफरी गंगा सबसे कम समय में तैयार होने वाली प्रजाति है। साथ ही इसका उत्पादन भी अच्छा है। यह प्रजाति जहां कम समय में तैयार हो जाती है, वहीं अधिक उत्पादन मिलता है। इसके अलावा इस बीज में रोगों से लड़ने की क्षमता भी अन्य प्रजातियों से ज्यादा होती है। आलू की कुफरी गंगा प्रजाति अगेती फसल के लिए सबसे उपयुक्त रहती है।

इस आलू का कंद सफेद क्रीम अंडाकरण में होता है इसमें उथली आंखे और गूदा सफेद क्रीमी होता है। इसमें शुष्क पदार्थ 18 प्रतिशत होता है। यह प्रजाति होपर एवं माइट रोग से प्रतिरोधी है। यह करीब 75–80 दिन में तैयार हो जाती है। इसकी उपज 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है।

कुफरी नीलकंठ

कुफरी नीलकंठ ऑक्सीकरण रोधी है और संकर की औसत उपज 35–38 टन/ हैक्टेयर होती है। यह संकर कंद उत्कृष्ट स्वाद के साथ गहरे बैंगनी काले रंग लिए होते हैं। मलाईदार गूदा, बेहतर भंडारण स्थायित्व (कटाई पश्चात जीवनकाल), मध्यम शुष्कता (18 प्रतिशत) और मध्यम सुप्तता के साथ–साथ आकार में अंडाकार होते हैं। यह पकाने में आसान होता है। भुरभुरा होने के साथ–साथ खाना पकाने के बाद मलिनकिरण से मुक्त होता है। भारत में ज्यादातर सफेद या पीले रंग के छिलके वाले आलू पसंद किए जाते हैं।

कुफरी लीमा

कम समय में तैयार होने वाली इस फसल में रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक होगी, जो किसानों के लिए लाभदायक साबित होगी। समय से पहले आलू की इस प्रजाति में फसल का आकार अच्छा होगा और अन्य प्रजाति की अपेक्षा किसानों के लिए यह काफी लाभकारी होगी। यह किस्म उष्मा सहनशील है जो कि अगेती फसल कि तुलना में 15 से 20 दिन पहले बुवाई कर सकतें है। पौधो की ऊचाई 55–60 सेमी, पत्तियां गहरी हरी आकार मध्यम, फूल रंगीन होता हैं। इसकी किस्म का आलू अण्डाकार सफेद चितका वाला व कम गहरी आंखों वाला होता हैं। यह विषाणु प्रतिरोधी, सुत्रकृमी रोग से मध्यम प्रतिरोधी एवं पिछेती झूलसा से सुग्राही हैं। इसकी भण्डारण क्षमता अच्छी है एवं औसत पैदावार 300–350 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

कुफरी पुश्कर– यह किस्म सफेद क्रीम वाली अण्डाकार मध्यम गहरी आंख वाली होती है । औसत पैदावार 300–350 क्विं./है. होती हैं।। यह मध्यम अवधि वाली एवं पिछेती झुलसा से प्रतिरोधी किस्म है ।

कुफरी सुर्या– यह किस्म सफेद क्रीम वाली अण्डाकार कम गहरी आंख वाली होती है । औसत पैदावार 300–350 क्विं./है. होती है। यह मध्यम अवधि वाली एवं पिछेती झुलसा से प्रतिरोधी किस्म है ।

कुफरी ख्याति– यह किस्म सफेद क्रीम वाली अण्डाकार. मध्यम गहरी आंख वाली होती है । औसत पैदावार 250–300 क्विं./है. होती है। यह अगेती अवधि वाली एवं पिछेती झुलसा से प्रतिरोधी किस्म है ।

कुफरी सिन्दुरी :– इस किस्म के आलू का आकार गोल व आखें कुछ गहरी होती है व रंग कुछ लालिमा लिये हुए होता है। यह किस्म 110 से 120 दिन में पक कर तैयार हो जाती है इसकी पैदावार 250 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

कुफरी ज्योति :– इसके कन्द अण्डाकार सफेद रंग के तथा कई आंखों वाले होते है। मैदानी भागों में इसकी पकाव अवधि 100 दिन तथा औसत उपज 200 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। यह किस्म अगेती व पिछेती झुलसा रोग प्रतिरोधी है तथा इसकी भण्डारण क्षमता अच्छी होती है।

कुफरी बहार :– इसके कन्द बड़े सफेद गोल से अण्डाकार, चिकने तथा मध्यम गहरी आंखो वाले होते है। इसकी पकाव अवधि 90 से 100 दिन तथा औसत उपज 250 से 350 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है। मध्यम भण्डारण क्षमता वाली यह किस्म अगेती व पिछेती झुलसा, वाइरस, सूखा रोग व पाले के लिये सुग्राही है।

अन्य किस्में – कुफरी चिप्सोना–1, कुफरी चिप्सोना–2, कुफरी चिप्सोना–3, कुफरी चिप्सोना–4, जे आई 5857, जे एच 222 एवं कुफरी लालिमा।

4 खेत की तैयारी एवं बुवाई

इसकी खेती के लिये खेत की जुताई बहुत अच्छी तरह होनी चाहिए। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा फिर दो तीन बार हैरो या देशी हल से जुताई कर मिट्टी को बारीक भुरभुरी कर लेनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाये जिससे ढेले न रहे। भूमि उपचार के लिये अन्तिम जुताई के समय फोरेट 10 जी 10 किलों या क्यूनॉलफॉस 1.5% चूर्ण 25 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि में भलि–भांति मिला देवें इससे भूमिगत कीटो से फसल की रक्षा होती है।

आलू की बुवाई :– आलू की मुख्य फसल को सितम्बर के अन्तिम सप्ताह से अक्टूबर के अन्त तक बो देना चाहिए। कोटा क्षेत्र में बुवाई का उपयुक्त समय अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक है। बुवाई के समय मौसम हल्का ठण्डा होना चाहिए। बीज की मात्रा व बुवाई से पूर्व कंन्दों को, 2 ग्राम थायरम +1 ग्राम बाविस्टिन प्रति लीटर पानी के घोल में 20 से 30 मिनट तक भिगोये तथा छाया में सुखाकर बुवाई करें।

5 बीज की मात्रा व उपचार

बुवाई के लिये रोग रहित प्रमाणित स्वस्थ कंद ही उपयोग में लाने चाहिए। सिकुड़े हुए या सूखे कन्दों का इस्तेमाल नही करना चाहियें। बीज कम से कम 2.5 सेन्टीमीटर व्यास के आकार का या 25 से 35 ग्राम वजन के साबुत कंद होने चाहिए। विभिन्न परिस्थितियों में एक हैक्टेयर भूमि में बुवाई के लिये 25 से 30 क्विंटल आलू के कंदो की आवश्यकता होती है। बुवाई से पूर्व बीज को स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 0.1% अथवा टोपसिन एम 0.2% या बाविस्टीन 0.1% के घोल से उपचारित करना चाहिए असके बाद बीजों को एजोटोबेक्टर कल्चर से उपचारित कर छाया में सुखाकर काम में लेना चाहिए।

6 खाद एवं उर्वरक

फसल की बुवाई के एक माह पूर्व 250–350 गाड़ी प्रति हैक्टेयर गोबर की खाद देकर भलि–भांति खेत में मिला देना चाहिए। इसके अलावा उर्वरकों का प्रयोग भी आवश्यक है। जहां तक सम्भव हो सके मृदा परीक्षण के आधर पर ही उर्वरकों का प्रयोग करें। सामान्य तौर पर 187 किलो नत्रजन, 125 किलोग्राम फास्फोरस एवं 125 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर के हिसाब से देना चाहिये। नत्रजन की आधी मात्रा, फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पूर्व कूड़ों में ऊर कर देना चाहिये। नत्रजन की शेष आधी मात्रा बुवाई के 30–35 दिन बाद मिट्टी चढ़ाने के साथ देंवे।

7 सिंचाई एवं निराई गुड़ाई

फसल की सिंचाई :– आमतौर पर आलू की फसल के लिये 10 से 15 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। लेकिन कोटा सम्भाग में पलेवा के अतिरिक्त 4 से 5 सिंचाईयां पर्याप्त रहती है। फसल के अंकुरित होते ही सिंचाई प्रारम्भ कर देना चाहिए। मैदानी भागों में जहां सर्दियो में बुवाई की गयी हो ओर तापमान अधिक हो या बलुई या बहुत हल्की मिट्टी हो तो अंकुरण के पूर्व भी सिंचाई करनी पड़ती है। सर्वप्रथम हल्की सिंचाई करनी चाहिए। इसके बाद सामान्य सिंचाई करते है। परन्तु किसी भी दशा में नालियों को तीन चौथाई से ज्यादा नहीं भरना चाहिये। डोलियों पर पानी चढ़ जाने से उसका ऊपरी भाग कड़ा हो जाता है। इस कारण आलू की जड़ें भली–भांति नहीं फैलने से आलू समान रूप से नही बढ पाते। हल्की मध्यम दर्जे की बलुई मिट्टी में 7 से 10 दिन में तथा भारी मिट्टी में 10 से 15 दिन के बाद सिंचाई करनी चाहिए। जैसे जैसे फसल पकती जाये सिंचाई का अन्तर बढाते जायें। पकने से 15 दिन पूर्व सिंचाई बन्द कर देवें।

निराई गुड़ाई :– कंद की बुवाई के 30 से 35 दिन बाद जब पौधे 8 से 10 से मी के हो जावें तो खरपतवार निकाल कर मिट्टी चढा देनी चाहिये। इसके एक माह बाद दुबारा मिट्टी चढ़ावें।

रासायनिक खरपतवार नाशी द्वारा नियन्त्रण

आलू फसल में अंकुरण से पूर्व मेट्रीब्यूजीन 0.75 किग्रा. सक्रिय तत्व प्रति है. तथा 30 दिन पर एक हाथ से निराई–गुड़ाई करने पर खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण पाया गया।

8 प्रमुख रोग व कीट एवं उनका प्रबंधन

पिछेती अंगमारी रोग

पत्तियों पर जल सख्त धब्बे बनते हैं, तनों व कंदों पर भी इस रोग का प्रकोप देखा जाता हैं अन्तः पौधे मर जाते हैं। जिसकी वजह से पैदावार में काफी कमी होती है। पैदावार में कमी फसल की अवस्था पर निर्भर करती है। इस रोग के विकास हेतु 10–20 डिग्री से0 तापमान, 80 प्रतिशत से अधिक आपेक्षिक आर्द्रता, बादलों का छाया रहना व रूक–रूककर बारिश होना आदि परिस्थितियां रोग फैलाने में सहायक हैं।

रोकथाम

- रोग के लक्षण दिखाई देते ही फसल पर मैंकोजेब दवा का 0.2 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करें और रोग की उग्रता को देखते हुए यह छिड़काव 8–10 दिनों के अंतराल पर दोहराये।
- सीमित जल की सिंचाई करके रोग को कम किया जा सकता हैं।
- बुवाई के लिए स्वस्थ एवं रोग रहित कंद ही काम में लें। रोग ग्रस्त बीज के लिए आलू काम में नहीं लें।

- साइज़ोफैमिड 35.4% एससी 200 ग्राम / हैक्टेयर के दो स्प्रे और यदि आवश्यक हो तो 10 दिनों के बाद इसे दोहराएं।

अगेती अंगमारी रोग

पत्तियों पर छोटे–छोटे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं तथा जब इन धब्बों को देखा जावे तो ऐसा लगता है कि इनका केन्द्र तो एक है लेकिन उनके गोलों का आकार अलग–अलग है। इसे हम सकेन्द्रिक वलय (कन्सेन्ट्रिक रिंग) कहते हैं। सूखे वातावरण में धब्बे कठोर हो जाते हैं व नम वातावरण में धब्बे आपस में मिलकर बड़ा क्षेत्र बना लेते हैं तथा रोग उग्र होने पर पत्तियां झुलसकर गिर जाती है।

रोकथाम

रोग दिखाई देते ही 2–3 ग्राम मैंकोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें, आवश्यकता पड़ने पर 10–15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव दोहरायें।

आलू की खड़ी फसल में रोग दिखाई देते ही पहला छिड़काव मैंकोजेब 75 डब्ल्यू.पी. (2.5 ग्राम प्रति लीटर), दूसरा छिड़काव डाइफेनकानाजोल 25 ई.सी. (0.5 ग्राम प्रति लीटर) तीसरा छिड़काव मैंकोजेब 75 डब्ल्यू.पी. (2.5 ग्राम प्रति लीटर) दस दिन के अंतराल पर घोल बनाकर छिड़काव करने से प्रभावी नियंत्रण एवं उपज की दृष्टि से प्रभावी पाया गया है।

काली रूसी

यह फफूंद जनित रोग है। खड़ी फसल पर आलू के कंदों पर देखें जा सकते है। कंदों की सतह पर फफूंद की काली–काली पपड़ी जैसी चिपकी हुई आकृति पायी जाती है ऐसे आलूओं को जब बाजार में बेचा जाता है। तो स्वस्थ आलूओं की अपेक्षा पैसा भी कम मिलता है तथा पैदावार भी कम होती है। इन कंदों को यदि बुवाई के काम में लाया जाता है तो बनने वाले आलू भी रोग ग्रसित हो जाते हैं। खड़ी फसल पर जमीन के पास वाले तने के चारों तरफ सफेद–सफेद क्रीम रंग की परत सी जमी दिखाई देती है। कम तापक्रम एवं अधिक मृदा नमी रोग को फैलाने में बहुत सहायक सिद्ध होती हैं।

रोकथाम

- रोग ग्रसित अवशेषों को इकट्ठा करके जला दें। स्वस्थ बीज बुवाई के काम में लेवें।
- भण्डारण या बुवाई से पूर्व आलू के बीजों को बोरिक एसिड रसायन का 3 प्रतिशत यानि 30 ग्राम दवा प्रति लीटर के हिसाब से घोल बनाकर 30 मिनट तक उपचारित करें या 3 प्रतिशत का घोल बनाकर बुवाई से पूर्व आलू पर छिड़काव कर छाया में सुखाकर बुवाई के लिए काम में लाया जावे तो रोग का प्रकोप कम किया जा सकता है।

ब्लैक स्कर्फ

यह रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनी* नामक फफूंद के कारण होता है जो भूमि जनित रहता है। अतः यह रोग मिट्टी तथा ग्रसित बीज बोने से फैलता है। इसके कारण अंकुरित कंदों का आगे का भाग पहले प्रभावित होता है इसमें गहरे भूरे धब्बे पड़ते हैं और कभी–कभी उगने के पूर्व ही वह नष्ट हो जाते हैं। तनों में धंसे हुए भूरे रंग के केंकर तथा आलु की त्वचा में यह फफूंदी धसी मिलती है मानों उसमें मिट्टी चिपकी हो। धोने पर यह नहीं निकलती। जिन खेतों में आप लगातार कई वर्शों से आलू ले रहे हों उनमें आलू न लें और बीज भी बदल लें। बोने के पूर्व आलू के बीज को 3 प्रतिशत बोरिक एसिड (30 ग्राम प्रति लीटर पानी) के घोल में 30 मिनट उपचारित करने के बाद ही बोयें।

जीवाणुज मृदुविगलन रोग

यह रोग *"इरविनिया कारोटोवारा"* नामक जीवाणु से होता है। आलू का मृदु विगलन रोग खेत, परिवहन एवं भण्डारण की अवधि में होता है। मृदा में नमी और तापमान अधिक होने पर खेत में इस रोग का प्रकोप ज्यादा होता है। आलू की बुवाई के समय रोग की अनुकूल परिस्थितियों के होने पर बीज कंदों का भी मृदु विगलन हो जाता है, जिससे खेत में पौधों की संख्या कम हो जाती है। विगलन कंद अंशतः या पूर्णतः धीरे या तेजी से अति मृदु, सड़े, गूदेदार ढेर सा हो जाता है। सड़े आलू को काटकर कुछ समय रख देने पर रंगहीन विगलित ढेर का रंग गुलाबी लाल हो जाता है जो शीघ्र भूरे लाल रंग में परिवर्तित हो जाता है। सड़े आलू से सड़ी गंध भी आती है। मृदा नमी व तापक्रम रोग के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

रोकथाम

- स्वस्थ कंदों को बुवाई हेतु काम में लेवें। समय पर बुवाई करें।
- रोग ग्रसित पौधों को उखाड़ कर जला दें। फसल अवशेषों को जला देना चाहिये।
- कंदों को भंडारण से पहले तीन प्रतिशत बोरिक एसिड के घोल में 30 मिनट तक डुबो कर उपचारित कर छाया में सुखायें।
- खेत में आवश्यकता से अधिक सिंचाई न करें। जल निकासी का उचित प्रबन्ध करें।

तना ऊतक क्षय रोग (स्टेम नेक्रोसिस)

स्टेम नेक्रोसिस बीमारी आलू की कंद की पैदावार में गंभीर कमी का कारण बनती है। यह एक विषाणु जनित रोग ही है। जो कि "टोस्पो वाइरस" (विषाणु) से उत्पन्न होता है। इसके लक्षण बुवाई

के 20–25 दिनों पश्चात् पौधे के तने पर काले–काले चकते के रूप में दिखाई देते हैं। रोग के प्रारम्भिक लक्षण तने एवं पर्णवृन्त पर भूरे रंग के धब्बों के रूप में प्रकट होते है जो धीरे–धीरे फैलते हैं। तना व पर्णवृन्त ऊतक क्षय के कारण काले पड़ने लगते हैं। डालियां मुरझाने लगती है एवं पौधे सूखने लगते हैं। ये रोग पर्णजीवी (थ्रिप्स) के द्वारा फैलता है। यह रोग गर्म तापक्रम एवं शुष्क आर्दता में अधिक फैलता है।

रोकथाम

- आलू की बुवाई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से तीसरे सप्ताह तक करने पर रोग का प्रकोप अधिक पाया जाता है।
- इमिडाक्लोप्रिड 17.8% एस.एल. नामक दवा के 0.06% घोल (10 लीटर पानी में 6 मि.ली.दवा) का बुवाई के 21 दिनों पश्चात् एक छिड़काव करने से भी इस रोग की उग्रता को बहुत कम किया जा सकता है।
- तना उत्तक क्षय रोग के कारण तना एवं पर्णवृन्त काले पड़ने लगते हैं। रोगग्रस्त स्थान से तना कठोर पड़ जाता है और थोड़ा सा जोर लगाने से तना आसानी से टूट जाता है, डालियां मुरझाने लगती हैं और पौधे सूखने लगते हैं। अतः आलू की खड़ी फसल में तना उत्तक क्षय रोग रोग के लक्षण दिखाई देते ही फिप्रोनिल 5% SC नामक दवा (15 मिलीलीटर दवा 10 लीटर पानी में) या डायफेन्थियुरोन 50 डब्ल्यू.पी. (10 ग्राम दवा 10 लीटर पानी में) का दस दिन के अंतराल पर दो छिड़काव करने से प्रभावी नियंत्रण एवं उपज की दृष्टि से प्रभावी पाया गया है।

मोजैक वायरस

ये वायरस माहू से फैलता है। जिससे पत्तियां सिकुड़ने लगती हैं और पौधे की ग्रोथ रुकने लगती हैं। आलू का कद छोटा रहता हैं जिससे उत्पादन घटता हैं। प्रभावित फसल को बीज में प्रयोग नहीं करें अन्यता इससे अगली फसल पर प्रभाव पड़ सकता है। नियंत्रण को डायमिथोएट 30 प्रतिशत, ईसी का प्रति मि.ली. एक लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

माहूं या चैंपा :–

माहूं कीट एक सर्वव्यापी व बहुभक्षी कीट है। ये रस चूसने वाले कीट की श्रेणी में आते हैं। *माइजस परसिकी* व *एफिस गौसिपी* नामक माहूं आलू की फसल पर प्रत्यक्ष रुप से तो ज्यादा नुकसान नहीं पहुँचाते परंतु ये पत्ती मोडक व वाई वायरस विषाणुओं को फैलाते हैं, जिससे फसल को भारी नुकसान होता हैं। रोग मुक्त बीज आलू उत्पादन में ये कीट बाधक हैं। फसल पर माहूं के प्रभाव को आँकने के लिये यदि इनकी संख्या 20 माहूं/100 पत्ती हो जाए तो इस पर रसायन का छिडकाव करना जरुरी हो जाता हो जाता है।

रोकथाम के उपाय :–

1. खेतों में या आस पास उगे हुये माहूं ग्रसित पौधों, विशेषकर पीले रंग के फूल वाले पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।
2. इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. को 3 मि.ली./10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
3. आलू की फसल में माहूं (एफिड) के प्रबंधन के लिए फ्लोनिकामिड 50 WG नामक दवा (3 ग्राम दवा 10 लीटर पानी में) का 15 दिन के अंतराल पर घोल बनाकर दो छिड़काव करने से प्रभावी नियंत्रण एवं उपज की दृष्टि से प्रभावी पाया गया है।

सफेद मक्खी :–

सफेद मक्खी एक बहुभक्षी कीट है। बेमिसिया प्रजाति की सफेद मक्खियाँ आलू की फसल को नुकसान पहुंचाती है। ये छोटे नरम शरीर वाले सफेद कीड़े पत्तियों का रस चूसते है। ये कीट मुख्य रुप से आलू में जेमिनी वाइरस और लीफ कर्ल वाइरस के लिये वाहक का कार्य करते हैं। पत्तियों से रस चूसने के कारण पौधे कमजोर हो जाते हैं। संक्रमित पत्तियों के ऊपर हनी ड्यू के स्त्राव के कारण यह सुखकर चिपचिपा हो जाता है। वाइरस के कारण पत्ते मुड जाते हैं एवं पौधे पीले पड़ जाते हैं।

रोकथाम के उपाय :–

1. आलू की फसल पर सफेद मक्खियों की संख्या को मोनिटर करने एवं इन्हे पकड़ने हेतु पीली चिपचिपी ट्रेप का प्रयोग करना चाहिए।
2. घास व वैकल्पिक परपोषी पौधों को निकाल दें।
3. आवश्यकता के अनुसार 10 दिन के अन्तराल पर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस0एल0 को 3 मि0ली0/10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
4. आलू की फसल में सफेद मक्खी के प्रबंधन के लिए डायफेन्थियुरोन 50 डब्ल्यू.पी. नामक दवा 350 ग्राम सक्रिय घटक प्रति हैक्टेयर कि दर से 10 दिन के अंतराल पर घोल बनाकर दो छिड़काव करने से प्रभावी नियंत्रण एवं उपज की दृष्टि से प्रभावी पाया गया है।

किसान करें मोती की खेती– कम निवेश में होगा बंपर मुनाफा

स्तुति मौर्या एवं दिनेश साह
बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

प्राचीन काल से ही किसान भाई पारंपरिक खेती कर रहे हैं, जिसमें वह अनाज और सब्जियों का उत्पादन करते हैं। किन्तु वर्तमान समय में अधिक लाभ कमाने के लिये किसान भाईयों द्वारा नये–नये प्रयोग किये जा रहे हैं जिसमें वह अधिक लाभ देने वाली फसलों की पैदावार कर रहें हैं। ऐसी ही एक फसल जिसे मोती कहते हैं, की खेती से अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है। मोती की मांग घरेलू बाजार के साथ–साथ अन्तंराष्ट्रीय बाजार में भी बढ़ती जा रही है। इसकी खेती से होने वाले लाभ को देखते हुये किसान इसकी खेती में दिलचस्पी दिखाने लगे हैं। अगर वैज्ञानिक तरीके से मोती की खेती की जाये तो अच्छी गुणवत्ता वाले मोती प्राप्त किये जा सकते हैं।

सीप धरती का एक ऐसा जीव है, जिसके बिना धरती पर शुद्ध पानी की कल्पना करना असम्भव है। जल स्त्रोतों को स्वच्छ और कीटाणुमुक्त रखने में सीप अहम् भूमिका निभाता है। यह एक ऐसा जीव है, जो जैविक रत्न मोती का उत्पादन करने में सक्षम है।

सीप दो प्रकार के होते हैं:–

1. खाने योग्य (Edible Oyester)
2. खेती योग्य (Pearl Oyester)

मोती की खेती में मुख्य उत्पादक जीव

- मीठे पानी वाली जीव– (क) *प्लाकुना मैक्सिमा*
  (ख) *यूनियो मारगरीटीफेरा*
- खारे पानी वाला जीव–(क) *पिनटाडा फुकाटा*
  (ख) *पिनटाडा मारगरीटीफेरा*

मोती के प्रकार:–

मुख्य रूप से मोती तीन प्रकार के होते हैं जो अलग–अलग उपयोग के आधार पर तैयार किये जाते हैं।

1. केवीटी मोती– इस किस्म का मोती सीप को आपरेशन कर उसके अन्दर फॉरेन बॉडी डालकर तैयार करते हैं। इसमें किसी भी आकार के मोती को तैयार किया जा सकता है। बाजारों में मौजूद कई तरह की चीजों में इस तरह के मोती देखने को मिल जाते हैं। जिसकी कीमत हजारों में होती है।
2. गोनट मोती– यह मोती प्राकृतिक रूप से तैयार होता है, जिसका आकार भी प्राकृतिक गोलाकार होता है। इस किस्म के मोती की कीमत चमक और आकार के आधार पर 1 हजार से 50 हजार रूपये तक होती है।
3. मेंटलटीसू– इस तरह का मोती खाने के लिये इस्तेमाल में लाया जाता है। इस किस्म के मोती को सीप के अन्दर डालकर तैयार किया जाता है। इस मोती की लोकप्रियता बाजार हेतु अधिक है। इसका इस्तेमाल च्यवनप्राश व टॉनिक को बनाने के लिये करते हैं।

मोती की खेती का उचित समय:–

सर्दियों का मौसम जैसे कि अक्टूबर से फरवरी माह, मोती के उत्पादन के लिये सबसे उपयुक्त माना जाता है। इसी मौसम में सीप में बीड को डालकर शल्य क्रिया द्वारा मोती तैयार किया जाता है। कुछ समय तक प्राकृतिक चारे और एंटी–बायोटिक पर रखकर उसे पुनः तालाब में डाल देते है।

सीप का ऑपरेशन:–

मोती को प्राप्त करने के लिये सीप का ऑपरेशन किया जाता है। ऑपरेशन से पहले 2–3 दिन के लिये खुले पानी में डालें। इससे सीप का ऊपरी हिस्सा नरम् हो जाता है। शल्य प्रक्रिया के माध्यम से 4 से 6 मिली मीटर (mm) के आकार का रेत का कण या बीड को सीप के अन्दर प्रवेश कराते हैं तथा इस दौरान

सीप का ऑपरेशन

हमें यह सावधानी रखनी चाहिए कि सीप का मुख ज्यादा न खुले। इससे सीप के मरने का खतरा बढ़ जाता है जो हमारे पैदावार तथा लाभ को प्रभावित करता है।

मोती पालन की सही विधि

मोती की खेती हेतु निम्न विधियाँ अपनानी चाहिए–

- उत्तम (सही) सीप का चुनाव– मोती को तैयार करने के लिये 03 वर्ष पुराने सीप की जरूरत होती है। जो कि पूरी तरह से स्वस्थ्य हो, इसका आकार 8 से 10 सेमी का होना चाहिये, सरकारी एवं निजी प्रक्षेत्र, प्रसिद्ध स्थान जैसे कोलकाता, तमिलनाडु तथा गुजरात आदि जगहों से अच्छे प्रकार के बीज प्राप्त किये जा सकते हैं।
- प्रारम्भिक पालन– सर्वप्रथम चुने हुये बीज को अच्छी तरह से साफ पानी में धोकर एक टैंक या छोटे तालाब में रखते हैं, उसके बाद बीज को जाल में लटकाकर तालाब जिसका आकार 20x10 फीट तथा गहराई 5–6 फीट हो में रखा जा सकता है ताकि जीव अपना जीवन आसानी से समायोजित कर सके।
- नाभिक प्रवेश– जिस आकार का हमें मोती उत्पादन करना होता है, हम उसी प्रकार के नाभिक का प्रयोग करते हैं, जो 2 मिमी का होना चाहिये। नाभिक के प्रवेश हेतु चिमटा, चाकू और कैंची का प्रयोग करते हैं। नाभिक के प्रवेश कराने के बाद पुनः सीप को पानी के अन्दर डाल देते हैं। उस समय सीप के जीव को वह नाभिक चुभता है तब मुलायम जीव एक प्रकार का तरल चिकना पदार्थ छोड़ता है यही तरल पदार्थ परत के रूप में कण पर जमता रहता है और एक मोती तैयार हो जाता है। अगर गोल आकार का मोती चाहिये हो तो उसे दो से तीन वर्ष तक पानी में रखते है और अगर कुछ अन्य आकर का मोती चाहिए तो छः माह से एक वर्ष के बीच तैयार होता है।
- मुख्य पालन– सीप का जीव बहुत ही मुलायम होता है, यह अपना आहार खुद नही बना सकते हैं। इसको बाहर से आहार देने की आवश्यकता पड़ती है। जैसे शैवाल, डायटम, इन्फूसर्या एवं चीटों से रांस आदि को आहार के रूप में ग्रहण करता है। गोबर की खाद, फलों के छिलके का उपयोग भी भोजन के रूप में किया जा सकता है।
- कटाई करना– दो से तीन वर्ष बाद उस सीप को पानी से बाहर निकाला जाता है तथा चिमटे की मदद से उसका मुंह खोलकर मोती निकाल लिया जाता है। इस प्रकार मोती की खेती से मोती प्राप्त कर बहुत अच्छा लाभ कमाया जा सकता है।

सीप की कटाई

मोती की कीमत एवं मुनाफा

लगभग 500 सीपों की खेती में 25 हजार तक का खर्च आता है। जिसमें प्रत्येक सीप से एक मोती प्राप्त होता है, यदि शल्य क्रिया के दौरान 50 सीप मर भी जाते हैं, तो 450 सीप बच जाते हैं। अगर मोतियों का बाजार मूल्य 250 प्रति मोती होता है तो किसान भाई 500 सीप से तकरीबन सवा लाख रूपये तक की कमाई कर अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं।

मोती पालन से लाभ

मोती पालन से निम्नलिखित लाभ हैं–

- चिकित्सा एवं औषधियों में
- खाद्य एवं पोषण में (खाने में)
- व्यवसाय के रूप में
- पर्यावरण को स्वच्छ बनाने में

बाजरा (मोटा अनाज) उत्पादन की उन्नत तकनीक एवं इसके लाभ

मुकेश कुमार मीणा, जी.आर. डोंगरे, इति राठी
भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र

मोटे अनाजों में बाजरा एक ऐसी फसल है जिसे मानव और पशु दोनों के लिए उगाया जाता है यह मानव के लिए दाने एवं पशुओं के लिए चारे का मुख्य स्त्रोत माना जाता है। बाजरे की खेती खरीफ के मौसम में की जाती है तथा इसको शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रो मे मुख्य रुप से उगाया जाता है। इसका उत्पादन देश के लगभग सभी राज्यों में होता है। विशेषकर राजस्थान में प्रमुख रूप से बाजरे की खेती की जाती है। इसके अलावा गुजरात, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, महाराष्ट्र, पंजाब, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, और आंध्र प्रदेश में भी बाजरे की खेती होती है। भारत के लगभग 85 लाख हैक्टेयर के क्षेत्रफल में बाजरे की फसल उगाई जाती है। जिसमे से 87 प्रतिशत का क्षेत्रफल उक्त राज्यों से आता है।

बाजरे का सेवन भारत में काफी अधिक मात्रा में किया जाता है। बाजरा सेहत के लिए बहुत ही पोष्टिक अनाज है। इसको बढ़ावा देने के लिए वर्ष 2023 को अंतर्राष्ट्रीय पोषक अनाज (श्री अन्न) के रूप में मनाया जा रहा है। बाजरे का सेवन रोटी, खिचड़ी एवं चूरमा (लड्डू) के रूप में सेहत के लिए काफी फायदेमंद होता है। इसमें भरपूर मात्रा में प्रोटीन, फाइबर और आयरन पाया जाता है, जो पाचन तंत्र और हृदय रोग में लाभदायक होता है। इसके आलावा इसमें कार्बोहाइड्रेट, केरोटीन, कैल्शियम, खनिज तत्व, राइबोफ्लेविन विटामिन बी–2 और विटामिन बी–6 की प्रचुर मात्रा पाया जाता है। बाजरे के चारे में कैल्शियम, फास्फोरस, प्रोटीन, हाइड्रोरासायनिक अम्ल और खनिज लवण सुरक्षित मात्रा में पाया जाता है, जो कि पशुओं को चारे के रूप में देना काफी लाभकारी होता है।

बाजरा खाने के फायदे

- बाजरे में काफी एनर्जी होती है, जिस वजह से यह ऊर्जा का एक अच्छा स्त्रोत भी है। बाजरा शरीर में एनर्जी को उत्पन्न करता है। यदि आप अपने वजन को घटाना चाहते है, तो बाजरा खाना आपके लिए काफी कम फायदेमंद हो सकता है। क्योकि बाजरा खाने के बाद देर तक पेट भरा हुआ महसूस होता है, जिस वजह से बार–बार भूख नहीं लगती है, और इस वजह से भूख में नियंत्रण रहता है।
- बाजरा कोलेस्ट्रॉल के लेवेल को भी नियंत्रित करता है, जिससे दिल से जुड़ी बीमारी होने का खतरा काफी कम हो जाता है। बाजरा मैग्नीशियम और पोटेशियम का काफी

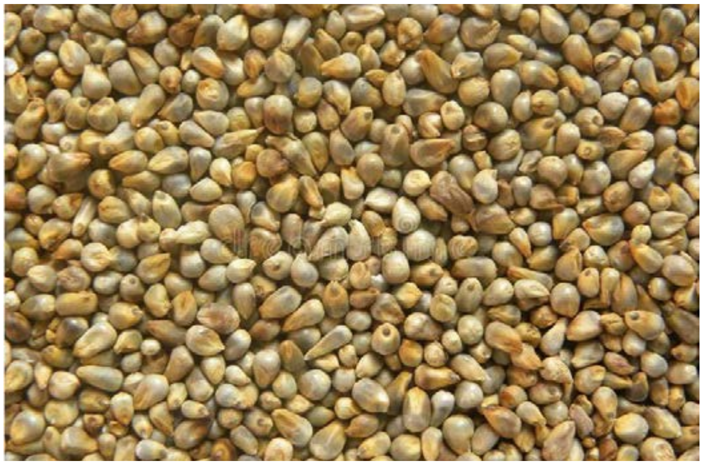

  अच्छा स्त्रोत है, जिस वजह से ब्लड प्रेशर को भी नियंत्रित रखने में सहायता मिलती है।
- बाजरे में फाइबर की मात्रा काफी अच्छी होती है, जो पाचन क्रिया को दुरुस्त रखने में सहायता करता है। बाजरे का सेवन करने से कब्ज की समस्या नहीं होती है, और भोजन भी ठीक तरह से पचता है। यदि आप पाचन की समस्या से जूझ रहे है, तो बाजरे का सेवन करना आपके लिए लाभकारी साबित हो सकता है।

जलवायु और तापमान

बाजरा की फसल तेजी से बढने वाली गर्म जलवायु की फसल है जो कि 40–75 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रो के लिए

उपयुक्त होती है। इसमे सूखा सहन करने की अदभुत शक्ति होती है। बाजरे की खेती को शुष्क और अर्धशुष्क जलवायु वाली भूमि में कर सकते है। वर्षा ऋतु का मौसम शुरू होते ही बाजरे की बुआई कर देना चाहिए, तथा शरद ऋतु से पहले फसल की कटाई कर ली जाती है। पौधों पर सिट्टे आने के दौरान उन्हें नमी की जरूरत होती है, ऐसे समय अगर बारिश नहीं होती है तो दाना कमजोर हो सकता है। बाजरे के पौधों को अंकुरण के लिए 25 डिग्री तापमान की आवश्यकता होती है, जबकि पौध विकास के लिए 30 से 35 डिग्री का तापमान चाहिए होता है। लेकिन 40 डिग्री तापमान पर भी बाजरे का पौधा अच्छी पैदावार दे देता है।

बाजरे की उन्नत किस्में

- एच.एच.बी. 299 : यह बाजरे की एक संकर किस्म है, जिसे चारे की आपूर्ति के लिए भी उगाया जाता है। इस किस्म से दाने का उत्पादन 28 से 30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर और 75 से 80 क्विंटल सूखा चारा प्राप्त होता है।
- आर.एच.बी. 234 : बाजरे की यह किस्म 80 से 85 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। यह किस्म हरित बाली रोग एवं ब्लास्ट रोग प्रतिरोधी होती है। बाजरे की इस किस्म से 30 से 32 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से उपज प्राप्त की जा सकती है।
- राज–171 : यह किस्म 80 से 85 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसमें दाने की उपज 20 से 25 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तथा चारे की पैदावार 60 से 65 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पाई जाती है। यह किस्म हरितबाली रोग प्रतिरोधक है।
- एम.पी.एम.एच.17 : बाजरे की यह किस्म 80 से 85 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। बाजरे की इस किस्म से दाने की उपज 25 से 30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से उपज प्राप्त हो जाती है, एवं 70 से 75 क्विंटल प्रति हैक्टेयर सूखा चारा प्राप्त होता है। बाजरे की यह किस्म जोगिया रोगरोधी होती है।
- हाइब्रिड पूसा 415 : इस क़िस्म के बाजरे के सिट्टे की लंबाई 30 सेमी. से भी अधिक होती है। इसका प्रति हैक्टेयर उत्पादन 25 से 30 क्विंटल होता है, तथा यह फसल 75 दिन में पककर तैयार हो जाती है। हाइब्रिड पूरा 415 को राजस्थान, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में काफी ज्यादा उगाया जाता है।
- एम.एच. 143 : इस किस्म को तैयार होने में 70 से 80 दिन का समय लगता है, जिसमे प्रति हैक्टेयर का उत्पादन 30 से 32 क्विंटल अनाज और 80 क्विंटल तक सूखा चारा मिल जाता है।
- ए.एच.बी. 1200 : यह बाजरे की एक संकर क़िस्म है, जो बुवाई से 78 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इस किस्म का उत्पादन प्रति हैक्टेयर 35 क्विंटल दाना और 70 से 75 क्विंटल सूखा चारा होता है।
- रेवती 2123 : इस क़िस्म को पकने में 85 दिन का समय लगता है, तथा बाजरे का यह पौधा अधिक फुटाव लेता है। प्रति हैक्टेयर में इस किस्म से दाना उत्पादन 30 क्विंटल तथा चारा 80 क्विंटल से अधिक मिल जाता है।
- एम.एच. 1737 : इसके पौधे की ऊंचाई अधिक होती है। इस क़िस्म को पकने में 85 दिन का समय लगता है। जिसमे प्रति हैक्टेयर का उत्पादन 35 क्विंटल अनाज और 85 से 90 क्विंटल तक सूखा चारा मिल जाता है।
- जी.वी.एच. 905 : इसके पौधे की ऊंचाई मध्यम होती है, इस क़िस्म को पकने में 75 दिन का समय लगता है। जिसमे प्रति हैक्टेयर का उत्पादन 25 से 30 क्विंटल अनाज और 75 से 80 क्विंटल तक सूखा चारा मिल जाता है।
- जवाहर– 3 एवं 4 : इस क़िस्म को मुख्यतः मध्य प्रदश एवं राजस्थान में लगाया जाता है, तथा इसको पकने में 75 से 80 दिन का समय लगता है। जिसमे प्रति हैक्टेयर का उत्पादन 20 से 25 क्विंटल दाना और 70 से 75 क्विंटल तक सूखा चारा मिल जाता है।

इसके अलावा भी कई किस्में है, जिन्हे अलग–अलग प्रदेशो में बड़ी मात्रा में उगाते है। इसमें पूसा 322, सी.जेड.पी. 9802, जी.एच.बी. 719, नंदी–70, और एच.एच.बी. 67–2, आई.सी.एम. व्ही. 221, आर.एच.बी. 177 किस्में शामिल है।

भूमि एवं खेत की तैयारी

बाजरा विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण फसल है। हालांकि बाजरा के लिए हल्की या दोमट बलुई मिट्टी उपयुक्त होती है।

बाजरे की फसल लगाने के लिए खेत को अधिक जुताई की जरूरत नहीं होती है। खेत को आरंभ में सिर्फ दो जुताई की जरूरत होती है। बुवाई के पंद्रह दिन पूर्व 10–12 टन प्रति हैक्टेयर सडी हुई गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट डालकर

जुताई कर उसे भलीभांति मिट्टी मे मिला देना चाहिए और खेत को समतल करना चाहिए, जिससे कि खेत मे पानी का ठहराव नही रहे। साथ ही पानी के निकास की उत्तम व्यवस्था का होना आवश्यक हैं। दीमक के प्रकोप की संभावना होने पर 20–25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर क्यूनालफॉस या क्लोरोपायरीफॉस 1.5 प्रतिशत पाउडर खेत मे मिलाये।

बुवाई का समय और तरीका

बाजरे की बुवाई के लिए जून का महीना एवं जुलाई का दूसरा सप्ताह तक सबसे अच्छा होता है। बाजरे के बीजो की बुवाई पहली बारिश के साथ ही खेतो में कर देना चाहिए, यदि बारिश समय से न हो तो खेत में पानी लगाकर बुवाई करना चाहिए।

बाजरे की बुवाई के लिए दो पद्धतियों को अपनाया जा सकता है, पहले पद्धति में बाजरे के बीजो को खेत में छिड़ककर हल्की जुताई कर मिट्टी में मिलाया जाता है, इसमें जुताई इस तरह से करना चाहिए कि बीज ज्यादा गहराई में न जाकर केवल 2 से 3 सेमी. गहराई में रहे। बुवाई की दूसरी पद्धति में बीजो को मशीन द्वारा बोया जाता है। इसमें बीजो को कतारों में लगाया जाता है, तथा प्रत्येक कतार से कतार की दूरी 45 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 –15 सेमी. उपयुक्त होती है। इस तरीके में भी बीजो को 2 से 3 सेमी. की गहराई में ही लगाया जाता है। एक हैक्टेयर में बाजरे की बुवाई के लिए 4–6 किग्रा. बीज पर्याप्त होते है। बीज को बुवाई से पहले एग्रोसान जीएन अथवा थीरम (3 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए।

फसल चक्र

बाजरा–चना, बाजरा–मटर / बाजरा–जौ, बाजरा–गेहूँ / बाजरा–सरसों, इत्यादि फसल चक्र अपनाया जा सकता है।

अर्न्तवर्तीय फसलें

अन्तवर्तीय अथवा मिश्रित फसले जैसे बाजरा की दो पंक्तियों के बीच में दो पंक्ति उडद/ मूंग की लगाने से उडद/मूंग की लगभग 3 क्विंटल/हैक्टेयर तक अतिरिक्त उपज मिलती है। और इसी तरह बाजरा की दो पंक्तियो के बीच मे दो पंक्ति लोबिया की लगाने से 45 दिन के अंदर 80–90 क्विंटल/ हैक्टेयर तक अतिरिक्त हरा चारा मिल जाता है।

उर्वरक

बाजरे की फसल को अधिक उर्वरक की जरूरत नहीं होती है। फसल बुवाई के दो–तीन सप्ताह पहले 10 से 12 टन प्रति हैक्टेयर सड़ी गोबर की खाद को खेत में डालना फसल के लिए लाभदायक होता है। बुवाई के समय 40 कि.ग्रा. नत्रजन, 40 कि. ग्रा. फास्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाष प्रति हैक्टेयर देना होता है। उर्वरकों की आधार मात्रा बीज के नीचे 4–5 सेमी. गहराई पर होना उत्तम होता हैं। बुवाई के लगभग 30 दिन पर शेष 40 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हैक्टेयर देनी चाहिए। अगर बाजरे की बुवाई हरे चारे के लिए की गयी है, तो प्रत्येक कटाई के पश्चात् पौधों को हल्का–हल्का उवर्रक देना चाहिए, ताकि पौधे अच्छे से वृद्धि करते रहे। साथ ही ध्यान रहे उर्वरकों का उपयोग मिट्टी की जांच के आधार पर ही करना चाहिए।

सिंचाई

बाजरे की खेती में अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। क्योकि इसकी पूरी फसल बारिश के मौसम पर निर्भर होती है, किन्तु बाजरे की फसल बुवाई के बाद अगर बारिश लंबे समय तक न हो तो फसल सूखने लगेगी, एसी स्थिति में सिंचाई करना जरूरी होता है। इसके बाद भी यदि बारिश की समस्या बनी रहती है, तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करना चाहिए। अगर बाजरे को सिर्फ हरे चारे के लिए उगा रहे है, तो सप्ताह में दो से तीन बार सिंचाई करना होता है, इससे पौधों में पानी की उचित मात्रा बनी रहती है, और पशुओ को खाने के लिए अच्छा चारा मिल जाता है।

निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

बाजरे की फसल को खास निराई–गुड़ाई की जरूरत नहीं होती है, लेकिन फिर भी यदि गुड़ाई की जाए तो पौधों की वृद्धि काफी अच्छी होती है, जिसका असर पैदावार पर देखने को मिलता है। हालांकि निराई–गुड़ाई करने से खरपतवार काफी हद तक समाप्त हो जाते है, यदि निराई–गुड़ाई नही की जाती है और खेत में अधिक खरपतवार की समस्या रहती है तो खरपतवार नाशक दवाइयों का छिड़काव करे।

सकरी एवं चौडी पत्ती के खरपतवारो के नियंत्रण के लिए लिए एट्राजिन 1.0 किग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर बोनी के तीन दिन के अंदर 500 लीटर पानी मे घोल बनाकर छिडकाव करना उचित होता है। चौड़ी पत्ती के खरपतवारों के नियंत्रण हेतु बोनी के 25 से 30 दिन पर 2,4–डी 500 किग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर 500 लीटर पानी मे घोल बनाकर छिडकाव करना चाहिए।

बाजरे की फसल में लगने वाले कीट एवं रोग व उपचार

- दीमक और सफेद लट :– यह दोनों ही कीट पौधे की जड़ो पर आक्रमण कर उन्हें हानि पहुंचाते है। यह कीट

पौधे की जड़ को काट देता है, और पौधा सूखकर पूरी तरह से नष्ट हो जाता है। इस तरह के कीट से बचाव के लिए बाजरे के पौधों की जड़ो पर क्लोरोपाइरीफॉस का छिड़काव बारिश के मौसम में किया जाता है। इसके अलावा बीज बुवाई से पहले खेत में प्रति हैक्टेयर 2 से 3 किग्रा. फोरेट का छिड़काव करे।

- तना छेदक, ब्लिस्टर बीटल, ईयरहेड, केटर पिलर :– प्रारंभिक अवस्था मे कीट प्रभावित पौधो को उखाड कर नष्ट कर देना चाहिए। तनाछेदक मक्खी का अधिक प्रकोप होने पर इसके नियंत्रण हेतु कार्बोफ्यूरॉन 3 जी. / 8–10 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर अथवा मोनोकोटोफॉस 30 एस.एल. की 750 एम.एल. मात्रा 600 लीटर पानी मे मिलाकर छिडकाव करें। नीम सीड कर्नेल एक्सट्रेक्ट (NSKE)@5 प्रतिशत का छिडकाव कम से कम दो बार करना चाहिए, जिससे कीटो की संख्या कम हो सके। निमोटोड नियंत्रण हेतु नीमखली/200 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर प्रयोग करना चाहिए।
- टिड्डियों का आक्रमण :– टिड्डियों का आक्रमण अक्सर पौधे पर उनके बड़े होने की अवस्था में देखने को मिलता है। यह टिड्डिया पौधे पत्तियों को खाकर नष्ट कर देती है, जिस वजह से पैदावार में काफी कमी आती है। फसल को टिड्डियों के आक्रमण से बचाने के लिए खेत में फोरेट का हल्का छिड़काव करना चाहिए।
- मृदुरोमिल आसिता रोग :– हालांकि बाजरे की फसल में इस तरह का रोग काफी कम देखने को मिलता है। यह रोग पौधे पर फफूंद की वजह से लगता है। फफूंद लगने की वजह से पौधा पीला पड़ने लगता है, और पौधे की वृद्धि रुक जाती है। इसके अलावा पौधे की निचली पत्तियों पर सफ़ेद रंग का पाउडर बनने लगता है। इसकी रोकथाम के लिए खेत में बीजो को बोने से पहले उन रिडोमिल एम.जेड.–72 से उपचारित करे और प्रमाणित बीजो को ही खेत में लगाए।
- अर्गट :– अर्गट एक सामान्य रोग है, जो बाजरे की फसल पर देखने को मिल ही जाता है। किन्तु आज के समय में कई ऐसी किस्में है, जिन पर इस तरह का रोग नहीं देखने को मिलता है। इस तरह का रोग पौधों पर सिट्टे आने के दौरान लगता है। इस रोग से प्रभावित होने पर बाजरे के सिट्टे पर चिपचिपा पदार्थ बनने लगता है, और कुछ समय में सूखकर गाढ़ा हो जाता है। यह मनुष्य और पशु दोनों के लिए ही हानिकारक होता है। इसकी रोकथाम के लिए प्रमाणित बीजो को ही खेत में लगाए तथा फसल की अगेती बुवाई करनी चाहिए।

कटाई एवं भण्डारण

बाजरे की फसल को तैयार होने में 80 से 85 दिन का समय लग जाता है, तथा नई उन्नत बीज की फसल 70 से 75 दिन में तैयार हो जाती है। जब बाजरे का दाना कठोर हो जाए और भूरा दिखाई देने लगे तब फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। बाजरे के पौधों की कटाई दो बार करते है, पहली कटाई में पौधों को काटते है, और दूसरी कटाई में सिट्टे को काटकर अलग करते है। कटाई के पश्चात फसल के ढेर को खेत मे खडा रखे तथा गहाई के बाद दानो को धूप मे अच्छी तरह सुखाकर भण्डारित करना चाहिए।

उपज

कटाई वाली प्रजातियों में, बुवाई के 70 से 75 दिन बाद (50प्रतिशत पूर्ण अवस्था) के बाद कटाई कर ली जाती है। बहुकटाई वाली प्रजातियों में पहली कटाई 40–45 दिन और फिर 30 दिनों के अंतराल पर काटते हैं। इस प्रकार, वैज्ञानिक रूप से उगाई जाने वाली फसलों से 450–650 क्विंटल हरा चारा प्राप्त होता है। इसी प्रकार दाने वाली प्रजातियों में जो वर्षा आधारित खेती है उसमे 15 से 20 क्विटंल तक दाना तथा 70 से 80 क्विटल तक सूखा चारा (कडवीं) प्राप्त होता है, तथा उन्नत प्रजातिया लगाने तथा वैज्ञानिक तरीके से खेती करने पर 30 से 35 क्विंटल दाना एवं 90 से 95 क्विंटल सूखा चारा प्रति हैक्टेयर तक मिल जाता है। इस तरह से बाजरे की फसल लगाकर एक अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है।

जलवायु परिवर्तन : सूक्ष्मजीवों की भूमिका

अपेक्षा बाजपाई[1], स्मृति चौहान[2] हिमांशु महावर[3]
[1]भाकृअनुप–भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान, भोपाल
[2]बरकत उल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल
[3]भाकृअनुप–खरपतवार अनुसन्धान निदेशालय, जबलपुर

जलवायु परिवर्तन औसत मौसम स्थितियों के प्रतिरूपों के वितरण में परिवर्तन है। वातावरण में वैश्विक स्तर पर बहुत तेजी से बदलाव देखे जा रहे हैं जिसके परिणाम आपातकाल की स्थिति उत्पन्न कर सकते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि यह समय जलवायु परिवर्तन की दिशा में गंभीरता से विचार करने का है। जलवायु परिवर्तन होने से अजैविक तनाव के विभिन्न रूपों जैसे तापमान में वृद्धि, ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन, मृदा लवणता तथा ओजोन परत क्षरण में वृद्धि होने से फसलों की उत्पादकता तेजी से घट रही है। जलवायु परिवर्तन का सीधा असर पादप समूह पर होता है क्यूंकि ये बाहरी प्रतिकूल वातावरण की परिस्थितियों से सीधे संपर्क में होने के वजह से जलवायु परिवर्तन से होने वाले प्रभावों के लिए अति संवेदनशील होते हैं। परिणामस्वरुप जलवायु परिवर्तन के हानिकारक कारकों से कृषि का क्षेत्र सबसे ज्यादा प्रभावित हो रहा है। पादप और सूक्ष्मजीव सह क्रमागत विकास के उल्लेख अनेकों शोध पत्रों में किये गये है साथ ही यह भी पाया गया है कि सूक्ष्मजीव न केवल पौधों के वृद्धि और विकास में सहायक होते हैं बल्कि मृदा में अजैविक तनाव की परिस्थिति में भी पौधों में सहनशीलता उत्पन्न करने में मदद करते हैं। जलवायु परिवर्तन पर कार्य कर रहे वैज्ञानिक केवीचेओली और उनके साथियों ने 2019 में अपने शोध पत्र में उल्लेख किया है कि "सूक्ष्मजीव जलवायु परिवर्तन को विनियमित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, कभी– कभार ही इन जीवों को जलवायु परिवर्तन के अध्ययनों में केन्द्रित किया गया है और जलवायु परिवर्तन के उन्मूलन की नीतियों के विकास में इन्हें शामिल नहीं किया गया।" सूक्ष्म तथा स्थूल समूह दोनों के जीव समान रूप से प्रभावशील होते हैं, परन्तु सूक्ष्मजीविक समूहों के प्रभाव पर पूरा ध्यान न होने की वजह से वे उपेक्षित हैं। हालाँकि सूक्ष्मजीवों की मदद से जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को कम करके भविष्य में मृदा की गुणवत्ता तथा फसलों की उत्पादकता में एक महत्वपूर्ण संतुलन स्थापित किया जा सकता है।

जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव

भारत एक कृषि प्रधान देश है इसलिए जलवायु परिवर्तन का विभिन्न फसलों के गुणधर्मों एवं उनके उत्पादन पर हो रहे दुष्प्रभावों पर विचार अत्यंत आवश्यक है। सामान्यतः यह देखा गया है कि फसलें बाहरी वातावरण के सीधे संपर्क में होने के कारण जलवायु में लगातार हो रहे परिवर्तनों के प्रति अतिसंवेदनशील होती है। मृदा के स्वाभाविक गुणों में बदलाव और विभिन्न रासायनिक उर्वकों के अतिप्रयोग से जो मृदा में वातावरण निर्मित हो रहा है वह सूक्ष्मजीवों कि विभिन्न प्रजातियों की सम्रद्धि एवं विकास के लिए उपयुक्त नहीं है। उदाहरण के लिए वैश्विक तापमान में वृद्धि होने पर नाइट्रोजन स्थरीकरण समूह के सूक्ष्मजीव संवेदनशील हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त धरती के वैश्विक औसत सतह तापमान में 0.5 से 1.0 डिग्री सेल्सियस की बढ़त हुई है जिसके कारण स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र में जल की उपलब्धता के लिए तनाव उत्न्न हुआ है विभिन्न आंकड़ों में यह दर्शाया गया है कि लगभग 13 प्रतिशत क्षेत्र में 2 डिग्री सेल्सियस और 6.5 प्रतिशत क्षेत्र में 1.5 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि सूखाग्रस्त इलाकों में हुई है। हाल में हुए अध्ययनों के द्वारा यह अनुमान लगाया गया है कि जलवायु परिवर्तन के कारण फसलों के बीजों की पोषण गुणवत्ता एवं उत्पादन (-3.5×10^{13} किलो कैलौरी प्रति वर्ष) में वैष्विक स्तर पर लगभग 0.8 प्रतिशत की गिरावट आई है इसके अलावा अनेक देशों में गेहूं व चावल जैसी मुख्य फसलों के उत्पादन में भी कमी देखी गई है। कृषि में जलवायु परिवर्तन के हानिकारक प्रभावों को कम करने की रणनीतियों में नीचे उल्लेखित तनाव सहनषील सूक्ष्मजीवों के उपयोग से फसलों की उत्पादकता तथा पोषण मान को बढ़ाया जा सकता है।

सूखा सहनशील सूक्ष्मजीव

ऐसा अनुमानित है कि वर्ष 2050 तक धरती के वैश्विक तापमान में 1.5 से 1.8 डिग्री सेल्सियस तक की बढ़ोत्तरी हो जाएगी। निःसंदेह सभी वनस्पतियाँ गर्म तापमान के लिए

अतिसंवेदनशील होती हैं इसलिए यह उत्पादकता को कम करने का प्रमुख कारक है। तापमान बढ़ने से जल की कमी हो जाती जिससे सूखाग्रस्त क्षेत्र का विस्तार हो जाता है जो सभी प्रकार की फसलों जैसे गेहूं, धान, दालें व मक्का आदि की प्रकाष संश्लेषण की दर को कम कर देता है।

पौधों के मूल परिवेश एवं अन्य क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के कृषि उपयोगी व पौधों के मित्र सूक्ष्मजीव पाए जाते हैं जो अपनी अनेकों जैविक क्रियाओं के संपादन द्वारा पौधों के लिए उपयोगी विभिन्न जैवरसायनों का स्त्रावण करते हैं तथा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से पौधों के विकास में सहयोगी होते हैं। बहुत से सूक्ष्मजीव जैसे *एजोस्पिरिलियम, एजोटोबेक्टर, बेसिलस, बर्खोलडेरिया, सूडोमोनास* आदि एसीसी डीएमीनेस प्रकिण्व का स्त्रावण करते हैं जिससे इथेलीन का स्तर कम हो जाता है। इस क्रियाविधि के द्वारा ये सूक्ष्मजीव सूखा तनाव क्षेत्रों में विकास करते हैं। सूखा तनाव परिस्थितियों में ये सूक्ष्मजीव एब्सिसिक एसिड के द्वारा पौधों में तनाव पित्रैक हाव भाव को उत्तेजित कर उनमें रन्धों के खुलने को नियंत्रित करते हैं जिससे वाष्पोत्सर्जन कम हो जाता है। इसके अलावा सूक्ष्मजीव इण्डोल एसिटिक एसिड पादप होर्मोन का स्त्रावण करते हैं जिससे पार्ष्विक मूल विकसित होती है जो मृदा से जल के अवशोषण को बढाती है। सूक्ष्मजीव विभिन्न जैवपदार्थ जैसे प्रोलीन, ग्लाइसिन, बीटेन, ग्लूटामेट और ट्रीहेलोस को संचित करके परासरण दबाव को कम करता है जबकि जीवाणु द्वारा स्त्रावित बाह्यबहुषर्करा (एक्सोपोलीसेकेराइड) पौधों की कोशिका झिल्ली अखंडता को सूखा तनावपूर्ण वातावरण में भी बनाये रखता है। *बेसिलस* और *क्लेबशिला* प्रजातियां भी सूखा तनाव क्षेत्र में अपना विकास करते हैं। ये पौधौं के संवहनी पंप को जीन स्तर पर नियंत्रित करते हैं। फाइटोहोर्मोन एबसिसिक एसिड, जेस्मो. निक एसिड और गिब्ब्रेलिक एसिड पादपों में प्रतिउपचायक (एंटीऑक्सीडेंट) के स्तर को बढ़ाते है, रंधों को नियंत्रित कर वाष्प उत्सर्जन को विनियमित करते हैं उदाहरण स्वरुप *एजोस्पिरिलियम* प्रजाति पत्तियों की जल धारण क्षमता को कम करके पौधों में जल योजन को बढ़ाता है। विभिन्न अध्ययनों से यह जानकारी मिलती है कि गर्म वातावरण में उत्पन्न हुए सूक्ष्मजीवों में अधिक तापमान को सहन कर विकास करने की क्षमता पाई जाती है। अतः इन सूक्ष्मजीवों की पहचान कर उनके विशिष्ट गुणों पर शोध के द्वारा कृषि में जलवायु परिवर्तन से होने वाले दुष्प्रभावों को कम करने के लिए इनका प्रयोग किया जा सकता है।

ग्रीनहाउस गैस चयापचयी सूक्ष्मजीव

ग्रीनहाउस गैसें जैसे कार्बन डाईऑक्साईड, मीथेन, नाइट्रोजन ऑक्साइड तथा क्लोरोफ्लोरोकार्बन की मात्रा बहुत तेजी से वातावरण में बढ़ रही है। हालाँकि वातावरण में लगातार हो रहे इन गैसों के अन्तप्रर्वाह को सूक्ष्मजीवों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है क्यूँकि सूक्ष्मजीवों में ग्रीनहाउस गैसों के चयापनचय की क्षमता पाई जाती है। उदाहरण के तौर पर *मिथानोबेक्टेरिया* और *मिथानोब्रावीबेक्टर* जैसे जीवाणु मीथेन गैस को चयापचय करके स्थिर पदार्थ में बदल देते हैं। उसी प्रकार मेथनॉल जो मीथेन गैस के उत्सर्जन के द्वारा बनता है उसे *मीथायलोट्रोप्स* जीवाणु जैसे *मिथायलोबेक्टेरियम* और *मीथायलोवोरस* के द्वारा अवशोषित किया जाता है। यह भी देखा गया है कि कुछ सूक्ष्मजीव जैसे *राइजोफेगस इर्रेगुलारिस* अत्यधिक क्षमता से नाइट्रस ऑक्साइड गैस के उत्सर्जन को कम करते हैं। कुछ सूक्ष्मजीवों में पाए जाने वाले एंजाइम जैसे नाइट्रेटरिडक्टेज और मीथेन मोनोऑक्सीजिनेज के जीन की अनुवांशिक उत्तेजन के द्वारा इनमे ग्रीनहाउस गैसों के चयापचय की क्षमता को बढाया जा सकता है। इस दिशा में शोधों के नए आयामों में पाया गया है कि *इ. कोलई* जीवाणु में 11 जीनों का समावेश करके उसमें ग्लूकोस के स्थान पर कार्बन डाईऑक्साईड के स्वांगीकरण को अनुवांशिक उत्तेजन के द्वारा बढाया जा सकता है, जिससे वायुमंडल में ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा को कम किया जा सकता है। अनुवांशिक उत्तेजित *क्यूप्रीएवीडस निकेटर* और *पायरोकोकस फुरीओसस* कार्बन डाईऑक्साईड, का स्वांगीकरण कर स्थिर जैव ईंधन में बदल देते हैं। भविष्य में जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से निपटनें के लिए रणनीतियाँ बनाने हेतु इस प्रकार के सूक्ष्मजीवों की क्षमताओं का उपयोग किया जा सकता है।

लवणता सहनशील सूक्ष्मजीव

सुक्ष्मजीवी प्रजातियाँ जैसे की *बेसीलस, सूडोमोनास, एग्रोबैक्टी. रियम, स्ट्रेप्टोमायसिस* और *एक्रोमोबेक्टर* लवणता से उत्पन्न तनाव को जीन ट्रांसक्रिपशन स्तर पर कम करते हैं। ऐसा देखा गया है कि *वरिओवोरिक्स, पेराड़ोक्सास* आदि सूक्ष्मजीव लवणता तनाव क्षेत्रों में ए.सी.सी. डीएमिनेस, एक्सोपोलीसेकेराइड और वाष्पशील कार्बनिक पदार्थों का स्त्रावण करते हैं तथा रंध्र नियंत्रण, वाष्पोत्सर्जन, कोशिका का स्फीत दबाव को विनियमित करते हैं। अन्य सूक्ष्मजीव जैसे *राइजोबियम* और *सूडोमोनास* परासरण दबाव कम करते है। पत्तियों में तनाव की स्थिति में प्रोलीन का उत्पादन बढ़ जाता है और जीवाणु के प्रभाव

से परासरण दवाव कम होने पर पत्तियों में जल का स्तर संतुलित हो जाता है। इसी प्रकार *क्लेबशिला* रूबूस्को प्रकिण्व के स्तर को पौधों में नियंत्रित करके तनाव स्थिति में भी प्रकाश संश्लेषण की दर को नियमित रखने में मदद करता है।

सूक्ष्मजीवों पर हुए निरीक्षणों में यह पाया गया है कि बहुत से सूक्ष्मजीवों में अति लवणता वाली मिट्टी की उर्वरकता में वृद्धि करने की क्षमता होती है। कुछ समूह जैसे *एक्टिनोबेक्टर* और *फरमीक्यूट,* लवणता तनाव से मृदा में जो सूखा तवाव उत्पन्न होता है उस परिस्थिति में भी प्रबल रूप से विकसित होते हैं। इसलिए कृषि में इन पादप उपयोगी सूक्ष्मजीवों के प्रसंग से मृदा को अनेक फायदे हो सकते हैं। *बेसिलस मेगाटीरियम* भी द्रवचालित प्रवाहिता तथा वाष्पोत्सर्जन की दर को विनियमित करने के लिए जाना जाता है। शोध में ऐसा पाया गया है कि फलीदार पौधों में ट्रीहेलोस–6–फॉस्फेट के जीन की अति अभिव्यक्ति से लवणता सहनशीलता प्रेरित होती है। इस दिशा में निर्देशित होकर कार्य संपादन के द्वारा लवण सहनशील सूक्ष्मजीवों के इनोकुलम के विकास को प्रेरित कर कृषि के लिए उपयोगी ऐसे नवीन जैविक खाद (बायोफर्टिलाइजर) को बनाया जा सकता है जो मृदा की लवण तनाव की स्थिति में भी कृषि में उत्पादकता को बढ़ाने में सहायक होंगे।

रेडीयेशन तनाव सहनशील सूक्ष्मजीव

वायुमंडल में उपस्थित ओजोन परत का जलवायु परिवर्तन होने के कारण दिन–प्रतिदिन परत का क्षरण हो रहा है जिससे सूर्य से पराबैगनी किरणें धरती कि सतह तक ज्यादा पहुँचने लगी हैं। इसके हनिकारक प्रभाव जैसे की तापमान में वृद्धि और त्वचा का कर्क रोग, बहुतायत देखने में आ रहे हैं। कुछ सूक्ष्मजीवों जैसे *मिथायलोबेक्टेरियम एक्सटोरक्यूएंस, बेसिलस मेगाटेरियम, रोड़ोस्पिरिलियम रुबरुम* आदि में ऐसे गुण पाया जाते है कि ये जीव अपनी स्वयं की कोषिका के डी.एन.ए., प्रोटीन व लिपिड्स को पराबैगनी किरणों के हानिकारक प्रभाव से होने वाले निम्नीकरण से बचने के लिए कुछ विशेष प्रकार के रंजकों का संचय करते हैं। ये रंजक इन किरणों का अवरुद्ध कर कोशिका की रक्षा करने में मदद करते हैं। केरोटीनोइड नामक रंजक जो लगभग सभी प्रकार के पौधों, कवक और बहुत से जीवाणुओं की प्रजातियाँ जैसे *एसिटीनोबेक्टर, बेसिडियोमायसिटीज, सोरडारिओमाय सिटीज, क्लामायडोमोनाडेल्स, मिथायलोबेक्टेरियेसी* आदि में बहुतायत में पाया जाता है। अन्य प्रकार के रंजक जैसे लायकोपीन, जेएक्सानथिन, बीटा–केरोटीन, कैनथाक्सानथिन, रोडोएक्सानथिन, एस्टाएक्सानथिन, ओस्किलाएक्सानथिन और जेंथोफिल्स आदि कोशिका झिल्ली की आतंरिक सतह पर जलरोधी क्षेत्रों में पाए जाते हैं और फ्री रेडिकल्स जैसे फोटो. सिस्टम–2 के डी आई प्रोटीन्स से होने वाले नुकसान से प्रकाश संश्लेषण के रिएक्शन सेंटर की बचाव की प्रक्रिया में सम्मिलित होते हैं।

सूर्य से उत्सर्जित होने वाली पराबैंगनी किरणें विभिन्न फसलों के उत्पादन, पोषक मान एवं जैवभार को बहुत नुकसान पहुंचाती हैं। ऐसा पाया गया है कि पराबैंगनी किरणों के प्रभाव से सोयाबीन के बीजों के तेल में अवांछनीय बहु असंतृप्त लिनोइक अम्ल व लिनोएनिक अम्ल की मात्रा बढ़ रही है जबकि एकलसंतृप्त ओलिक अम्ल, प्रोटीन्स, कार्बोहाइड्रेट व वसीय अम्लों की मात्रा घट रही है। इसी प्रकार के दूसरे शोध अध्ययनों में यह पाया गया है कि पराबैंगनी किरणों की मात्रा में 20 प्रतिशत की बढोतरी होने पर फसलों के उत्पादन में लगभग 6 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है। केरोटीनोइड रंजक जीवों की कोशिका के लिए विकिरणरोधी सतह की तरह कार्य कर पराबैंगनी किरणों के दुष्प्रभाव से बचाता है।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक समस्या है। इसमें प्राकृतिक कारकों के अलावा मानव गतिविधियों ने भी प्रमुख योगदान दिया है। मनुष्य प्राकृतिक कारकों पर तो नियंत्रण नहीं कर सकता लेकिन वह कम से कम यह तो सुनिश्चित जरूर कर सकता है कि वह वातावरण पर नकारात्मक प्रभाव डालने वाली अपनी गतिविधियों को नियंत्रण में, रखे ताकि धरती पर सामंजस्य बनाया जा सके। इसके साथ ही जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों को खत्म करने के लिए महत्वपूर्ण सूक्ष्मजीवों की पहचान व उपयोग करना पौधों को तनाव के प्रति सहनशील बनाने के एक आशाजनक प्रयास है। यह इस समय की माँग है कि सूक्ष्मजीवों की विभिन्न व विशिष्ट कार्य क्षमताओं का प्रयोग जैव विविधता को संतुलित करने व शुद्ध जलवायु को पुर्नस्थापित करने में किया जाए। सूक्ष्मजीवों की विभिन्न प्रजातियों के जीवों की क्षमताओं का जलवायु परिवर्तन तथा वातावरण की समस्याओं के निवारण हेतु एक बड़े स्तर पर अनुसंधान किए जाने की आवश्यकता है।

संरक्षित खेती: मृदा स्वास्थ्य में सुधार का प्रभावी विकल्प

अल्पना कुम्हरे[1], वी. के. चौधरी[1], मुनि प्रताप साहू[1], विकास सिंह[1], यागिनी टेकाम[2], नरेन्द्र कुमार[1], सोनाली सिंह[1] एवं आनंद सैयाम[1]
[1]भा.कृ.अनु.प. – खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, महाराजपुर, जबलपुर, (म.प्र.)
[2]जवाहर लाल नेहरु कृषि विश्व विद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

परिचय

विश्व की जनसंख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, जिसके कारण आवासीय एवं औद्योगिक भूमि की आवश्यकता बढ़ी है जिससे, कृषि भूमि का तेजी से आवासीय एवं औद्योगिक क्षेत्र में परिवर्तन हो रहा है। परिणामस्वरूप कृषि योग्य भूमि सीमित होने से फसल उत्पादन में कमी आई है। वहीं दूसरी तरफ जनसंख्या की खाद्य पदार्थ की मांग बढ़ी है, अतः खाद्य पदार्थ की मांग की पूर्ति हेतु प्रति इकाई क्षेत्रफल में अधिकतम फसल उत्पादन की आवश्यकता है। परन्तु किसानो द्वारा अपनायी जाने वाली परंपरागत कृषि पद्धितियां (एकल–फसल, रसायनो का अनुचित उपयोग, जुताई के लिए भारी यंत्रों का प्रयोग और फसल अवशेषों को कृषि भूमि में जलाना आदि) मृदा स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव डालते हैं जिनके कारण कृषि योग्य भूमि में मृदा क्षरण होता है। परिणामस्वरूप फसल उत्पादन में कमी हो जाती है, अतः वर्तमान समय में फसल उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ मृदा स्वास्थ्य में सुधार हेतु संरक्षित खेती को अपनाने की आवश्यकता है। एफ. ए. ओ. (2014) ने संरक्षित खेती को "स्थायी दृष्टिकोण के रूप में अनुशंसित किया है जो प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण की रक्षा करते हुए टिकाऊ फसल उत्पादन को बनाए रखने के लिए, कृषि पारिस्थितिकी का प्रबंधन कर सकती है। "संरक्षित खेती में शामिल तीन मुख्य सिद्धांत–1. शून्य जुताई या न्यूनतम जुताई के माध्यम से न्यूनतम भूपरिष्करण 2. फसलों के अवशेष द्वारा मृदा का आवरण एवं 3. उचित फसल–चक्र या अंतरवर्ती फसल प्रणाली के माध्यम से फसल विविधीकरण। इन सिद्धांतों के अलावा एक अन्य घटक "एकीकृत पौध संरक्षण एवं एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन" भी प्रस्तावित किया गया है। संरक्षित खेती के, मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों पर कई लाभकारी प्रभाव हैं, साथ ही मृदा के स्वास्थ्य पर पारंपरिक कृषि पद्धतियों के हानिकारक प्रभावों को कम करती है। संरक्षित खेती के अंतर्गत दुनिया में लगभग 156 मिलियन हैक्टेयर और भारत में 2 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र है। पिछले एक दशक के दौरान संरक्षित खेती का विस्तार 10 मिलियन हैक्टेयर की वार्षिक दर से बढ़ रहा है। संरक्षित खेती का यह व्यापक रूप से अपनाया जाना इसकी व्यवहार्यता और स्थिरता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

मृदा स्वास्थ्य पर पारंपरिक कृषि पद्धतियों का प्रभाव

पारंपरिक कृषि पद्धतियों से आशय, एक–फसल, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक और शाकनाशी के अनुचित उपयोग, विभिन्न जुताई के कार्य जैसे–मोल्डबोर्ड या पशु–चालित हल, हैरोइंग, ड्रिलिंग, कल्टीवेटर और अवशेषों को हटाना है, जिनके प्रयोग से मृदा के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अक्षम या दोषपूर्ण कृषि पद्धतियों की एक विस्तृत श्रृंखला को भौतिक, रसायनिक और जैविक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है जो मृदा के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं (चित्र 1)।

चित्र 1: मृदा क्षरण के प्रकार, कारण एवं मृदा के स्वास्थ्य पर प्रभाव (स्रोतः रामटेके एवं अन्य 2023)

संरक्षित खेती की आवश्यकता

मृदा क्षरण दुनिया की सबसे गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं में से एक है और यह बिना उपचारात्मक कार्रवाई के और भी तेजी से बढती जाएगी। विश्व स्तर पर, कुल मृदा क्षेत्र का लगभग 25 प्रतिशत पहले ही ख़राब हो चुका है और 2050 तक 90 प्रतिशत से अधिक ख़राब हो सकता है। अनियंत्रित मृदा अपरदन, सघन खेती, वनों की कटाई, औद्योगीकरण को बड़े पैमाने पर मृदा क्षरण के लिए जिम्मेदार प्रमुख कारकों के

रूप में पहचाना जाता है। इनमें से, सघन खेती के दुष्प्रभावों के कारण मृदा के स्वास्थ्य एवं फसल उत्पादन सम्बन्धित चुनौतियों का समाधान ढूंढना जरूरी है, जिससे कृषि स्थिरता और सघनता के लक्ष्यों को पूरा किया जा सके। वर्तमान में, दुनिया भर में कई प्रमाण हैं जो मृदा के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभावों को दूर करने, मृदा क्षरण से बचने, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और कृषि उत्पादन से जुड़े ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लिए, एक स्थायी प्रणाली के रूप में संरक्षित कृषि की क्षमता प्रदर्शित करते हैं।

चित्र 2: संरक्षित खेती के सिद्धांत एवं मृदा स्वास्थ्य पर लाभ

चित्र 2: संरक्षित खेती के सिद्धांत एवं मृदा स्वास्थ्य पर लाभ

संरक्षित खेती के माध्यम से मृदा स्वास्थ्य को सुधारने की रणनीतियाँ–

1. न्यूनतम यांत्रिक भूपरिष्करण

न्यूनतम यांत्रिक भूपरिष्करण से आशय उन कृषि क्रियाविधि से है जिसमें यांत्रिक रूप से मृदा को पलटे बिना कम जुताई की जाती है। शून्य जुताई या न्यूनतम जुताई बहुत महत्वपूर्ण कृषि पद्धति है, जो न्यूनतम यांत्रिक भूपरिष्करण के मानदंडों का पालन करती है।

न्यूनतम जुताई – न्यूनतम जुताई की अवधारणा सर्वप्रथम संयुक्त राज्य अमेरिका में शुरू की गई। न्यूनतम जुताई एक ऐसी प्रणाली है जिसका मुख्य उद्देश्य एक अच्छी बीज क्यारी, तेजी से अंकुरण और अनुकूल स्थिति सुनिश्चित करने के लिए न्यूनतम आवश्यक सीमा तक ही जुताई करना है। जुताई को दो तरह से कम किया जा सकता है,

1. कृषि कार्यों को नहीं करना जो लागत की तुलना में अधिक लाभकारी नहीं है एवं
2. बीज बोने और खाद डालने जैसे कृषि कार्यों को एक साथ करना।

न्यूनतम जुताई के अंतर्गत कृषि भूमि तैयार करने के लिए, पारंपरिक जुताई की तुलना में जुताई की गहराई (अधिकतम 15 सेमी.) कम रखी जाती है एवं मिट्टी को पलटते नहीं है। इसके अंतर्गत हल एवं हैरो की बजाय टाइन एवं डिस्क का उपयोग किया जाता है। मिट्टी को नहीं पलटने से, नमी बनाए रखने में मदद मिलती है, सतह के अपवाह का जोखिम कम होता है, और भूमि को बाढ़ और सूखे से बचाने में मदद मिलती है।

शून्य जुताई– शून्य जुताई, न्यूनतम जुताई का चरम रूप है। शून्य जुताई में, प्राथमिक जुताई पूरी तरह से टाल दी जाती है और द्वितीयक जुताई, केवल पंक्ति क्षेत्र में बीज क्यारी की तैयारी तक ही सीमित होती है। इसके अंतर्गत सीधी बुवाई को शामिल किया है जिसमें, हैप्पी सीडर जैसे यंत्रों का प्रयोग फसल उगाने में किया जाता है। यंत्र एक साथ चार कार्य करता है:– पंक्ति क्षेत्र में चीरा लगाकर एक संकीर्ण पट्टी साफ करता है, बीज डालने के लिए मिट्टी खोलता है, बीज डालता है और बीज को ठीक से ढांक देता है।

- न्यूनतम यांत्रिक भूपरिष्करण प्रक्रिया में भारी प्रक्षेत्र मशीनों का प्रयोग कम किया जाता है, जिससे मृदा के उप–सतह की कठोरता कम हो जाती है एवं हार्ड पैन का निर्माण नहीं होता है। जिसके कारण मिट्टी में मौजूद फसलों की जड़ों का विकास अधिक होता है, एवं जड़ों द्वारा आवश्यक पोषक तत्वों और जल का अधिक अवशोषण किया जाता है। इसके अलावा, जल की पारगम्यता, मृदा की सरंध्रता, जल धारण क्षमता एवं वायु के संचारण में वृद्धि होती है जिसका फसलों के वृद्धि एवं विकास में लाभकारी प्रभाव पड़ता है। अतः अधिक उत्पादक फसलें प्राप्त होती है (तालिका 1)।
- न्यूनतम यांत्रिक भूपरिष्करण प्रक्रिया में कार्बनिक पदार्थों का सूर्य के प्रकाश से संपर्क कम हो पाता है जिससे कार्बनिक पदार्थ का ऑक्सीकरण नहीं होता है एवं मृदा में इसकी अधिकता बनी रहती है। कार्बनिक पदार्थ मृदा के एकत्रीकरण द्वारा इसकी समग्र स्थिरता एवं सरंध्रता को बढ़ाते है जिससे मृदा अपरदन कम होता है।
- पारंपरिक जुताई की तुलना में, न्यूनतम भूपरिष्करण से मृदा में मौजूद लाभकारी सूक्ष्मजीव (जीवाणु, कवक आदि) एवं केंचुआ इत्यादि को यंत्रों द्वारा कोई खास नुकसान

नहीं पहुँचता है एवं इनकी संख्या में बढ़ोतरी होती रहती है। इन जीव जंतुओं का मृदा की उर्वरता बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान होता है परिणामस्वरूप, फसलों की अधिक उपज प्राप्त होती है।

2. कार्बनिक पदार्थ से मृदा का स्थायी आवरण

फसल अवशेष. फसलों की कटाई के बाद बचा हुआ भाग होता है जिसे संरक्षित खेती के अंतर्गत कृषि भूमि में ही छोड़ दिया जाता है। यह मृदा के स्थायी आवरण का मुख्य घटक है, जिसे कभी भी जलाया नहीं जाना चाहिए अन्यथा मृदा की सतह से हटाया जाना चाहिए। जलाने से न केवल वायु प्रदूषण में काफी वृद्धि होती है बल्कि, खनिजीकरण दर भी बढ़ती है, जिससे मृदा के कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों की तेजी से कमी होती है।

- फसल अवशेष, मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवों का मुख्य खाद्य पदार्थ होता है, जिसका अपघटन करके इन्हें जैविक कार्बन में परिवर्तित कर देते है। अतः फसल अवशेष, लाभकारी सूक्ष्मजीवों (जीवाणु, कवक इत्यादि) की सक्रियता एवं आबादी को बढ़ाते हैं। ये सूक्ष्मजीव मृदा में आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाते हैं जो फसलों की उत्पादकता बढ़ाने में सहायक होते है।
- फसल अवशेष, मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ा देते है, जिससे मिट्टी की सरंध्रता एवं जलीय चालकता बढ़ती है और सतह की कठोरता, सतह से पानी के बहाव में कमी होती है। फसल अवशेष, सूर्यप्रकाश को परावर्तित करता है एवं ताप अवरोधक की तरह कार्य करता है, जिससे मृदा में उच्च तापमान का प्रभाव कम हो जाता है अतः मृदा से पानी का वाष्पीकरण कम होता है। यह मिट्टी के एकत्रीकरण में सुधार करता है, जिससे बौछारी अपरदन का प्रभाव कम हो जाता है।
- फसल अवशेष मृदा में कार्बन जब्तीकरण द्वारा जैविक कार्बन की मात्रा को बढ़ाता है (तालिका–1) एवं ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को कम करता है।

3. फसल चक्र या अंतरवर्ती फसल प्रणाली के माध्यम से फसल विविधीकरण

फसल विविधीकरण से आशय, एक ही या विभिन्न प्रजातियों से संबंधित फसलों की एक से अधिक किस्मों की फसल चक्र और अंतरवर्ती फसल प्रणाली के रूप में खेती करना है। एक ही क्षेत्र में एक ही फसल को कई वर्षों तक उगाने से मृदा की गुणवत्ता खराब हो जाती है, और यह मृदा के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती है। अतः किसानों को फसल की कम उपज मिलती है। फसल चक्र एवं अंतरवर्ती फसल प्रणाली को किसानों द्वारा अपनाने से फसल उत्पादन में आने वाली कई तरह की परेशानियों जैसे उपज में कमी, खरपतवार, कीट एवं रोग की समस्या आदि से छुटकारा मिलता है।

फसल चक्र– किसी निश्चित क्षेत्र में, निश्चित अवधि के लिए भूमि की उर्वरता को बनाये रखने के उद्देश्य से फसलों को अदल–बदल कर उगाने की प्रक्रिया फसल चक्र कहलाती है। फसल चक्र में कम से कम तीन अलग–अलग फसलें शामिल होनी चाहिए।

अंतरवर्ती फसल प्रणाली– अंतरवर्ती फसल प्रणाली से आशय दो या दो से अधिक फसलों को एक ही क्षेत्र में निश्चित पंक्ति अन्तराल में उगाना है। इसका मुख्य उद्देश्य संसाधनों (जल, पोषक तत्त्व आदि) का उपयोग करके अधिकतम उपज का उत्पादन करना है।

- फसल विविधीकरण में फलीदार या दलहनी फसलों को मिलाने से मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ जाती है, क्योंकि इनकी जड़ों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले बैक्टीरिया पाये जाते हैं जो मृदा में प्राकृतिक रूप से नाइट्रोजन स्थिर करते हैं।
- फसल चक्र में, फसलों की अदला–बदली से खाद्य फसलों पर हमला करने वाले खरपतवारों, कीड़ों और बीमारियों का जीवन–चक्र पूरा नहीं हो पाता है, जिससे इनके संक्रमण का जोखिम कम हो जाता है। इसके आलावा, रासायनिक कीटनाशकों एवं शाकनाशियों पर किसानों की निर्भरता भी कम जाती है।
- फसल विविधीकरण मिट्टी के संघनन को कम करती हैं, जिससे फसल बीज सहजता से अंकुरित होते हैं, जड़ें फैलती हैं। इसके अलावा, पानी की पारगम्यता बढ़ती है जिससे सतह प्रवाह एवं मृदा अपरदन कम होता है।
- फसल विविधीकरण जल धारण क्षमता, सरंध्रता, और पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण में वृद्धि करता है एवं मृदा अपरदन में कमी करता है।
- चूंकि अलग–अलग फसलें जलवायु परिदृश्यों के लिए अलग–अलग तरीकों से प्रतिक्रिया देती है अतः फसल विविधीकरण कुल फसल विफलता के जोखिम को काफी कम कर देता है ।
- फसल विविधीकरण किसानों को बाजार में बिक्री के लिए अधिशेष उत्पाद उगाने में सक्षम बनाता है। इस प्रकार खाद्य और पोषण सुरक्षा दोनों को सुगम बनाता है ।

तालिका 1 : संरक्षित खेती का पारंपरिक खेती के सापेक्ष मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव

फसल प्रणाली	मृदा स्वास्थ्य के सूचक	मृदा की गहराई	संरक्षित खेती	स्त्रोत
धान–गेहूं (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	जल की मात्रा	0–5 सेमी.	परंपरिक खेती की तुलना में 8 प्रतिशत अधिक नमी की मात्रा	रॉय एवं अन्य 2022
		5–15 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 5 प्रतिशत अधिक नमी की मात्रा	
धान–गेहूं (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	मृदा अंतर्वेधन का प्रतिरोध	15–20 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 13–21 प्रतिशत कम मृदा अंतर्वेधन का प्रतिरोध	रॉय एवं अन्य 2022
		20–25 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 32–34 प्रतिशत कम मृदा अंतर्वेधन का प्रतिरोध	

फसल प्रणाली	मृदा स्वास्थ के सूचक	मृदा की गहराई	संरक्षित खेती	स्त्रोत
धान–गेहूं (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	नाइट्रोजन की उपलब्धता	5–15 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 13 प्रतिशत अधिक नाइट्रोजन	रॉय एवं अन्य 2022
धान–गेहूं (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	फॉस्फोरस की उपलब्धता	0–5 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 142 प्रतिशत अधिक फॉस्फोरस	रॉय एवं अन्य 2022
		5–15 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 133 प्रतिशत अधिक फॉस्फोरस	
धान–गेहूं (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	पोटेशियम की उपलब्धता	0–5 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 98 प्रतिशत अधिक पोटैशियम	रॉय एवं अन्य 2022
धान–गेहूं (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	माइक्रोबियल बायोमास कार्बन (एमबीसी)	0–5 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 192 प्रतिशत अधिक एमबीसी	रॉय एवं अन्य 2022
		5–15 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 74–102 प्रतिशत अधिक एमबीसी	
धान–गेहूं (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	डीहाइड्रोजिनस एक्टिविटी (डीएचए)	0–5 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 93 प्रतिशत अधिक डीएचए	रॉय एवं अन्य 2022
धान–गेहूं–मूंग (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	मृदा की संरध्रता	15–30 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 17 प्रतिशत अधिक सरंध्रता	मंडल एवं अन्य 2019
धान–गेहूं–मूंग (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	मृदा का जैविक कार्बन	0–15 सेमी.	पारंपरिक खेती की तुलना में 32 प्रतिशत अधिक जैविक कार्बन	मंडल एवं अन्य 2019
धान–गेहूं–मूंग (पारंपरिक जुताई) धान–गेहूं–मूंग (शून्य जुताई + फसल अवशेष)	उपज	–	पारंपरिक खेती की तुलना में 17 प्रतिशत अधिक गेहूं की उपज	मंडल एवं अन्य 2019

4. एकीकृत पौध संरक्षण

कीटों, रोगों, खरपतवारों के नियंत्रण हेतु कीटनाशकों, कवकनाशियों और शाकनाशियों पर निर्भरता निरंतर बढती जा रही है जिससे कीटनाशकों और शाकनाशियों की प्रतिरोधकता, अवशेष और पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही है। इन समस्याओं के निवारण हेतु इन रासायनों के उपयोग में कमी करना आवश्यक है। एकीकृत पौध संरक्षण एक ऐसी रणनीति है जिसमें शस्यविधि, भौतिक, जैविक एव रासायनिक नियंत्रण द्वारा फसलों की कीटों, रोगों, खरपतवारों से सुरक्षा की जाती है जिससे कीटनाशकों, कवकनाशियों और शाकनाशियों का कम से कम प्रयोग किया जाता है। एकीकृत पौध संरक्षण के अंतर्गत एकीकृत खरपतवार प्रबंधन एवं एकीकृत रोग और कीट प्रबंधन आते है।

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन के अंतर्गत, निवारक उपाय, शस्यविधि, यांत्रिक और रासायनिक नियंत्रण द्वारा खरपतवार की समस्या को कम किया जाता है। विभिन्न निवारक उपायों में खरपतवार मुक्त फसल बीज का उपयोग, खरपतवार के

बीजों को एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में फैलने से रोकना, अच्छी तरह से सड़ी हुई खाद/कम्पोस्ट का उपयोग आदि शामिल हैं। शस्यविधि में पलवार विधि, फसल चक्र एवं अंतरवर्ती फसल प्रणाली शामिल हैं। यांत्रिक विधि में निदाई और रासायनिक विधि में शाकनाशियों का विवेकपूर्ण उपयोग शामिल है।

एकीकृत रोग और कीट प्रबंधन

एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन, कीटों और रोग पैदा करने वाले मृदा के जीव जंतुओं के नियंत्रण की सभी विधियों (निवारक उपाय, यांत्रिक, जैविक तथा रासायनिक नियंत्रण) के समुचित तालमेल पर आधारित है। इसका लक्ष्य जीव जंतुओं की संख्या को 'आर्थिक क्षति सीमा' के नीचे बनाये रखना है। संरक्षित खेती, कीटों और रोगों के नियंत्रित के लिए, जैविक गतिविधियों (परजीवी एवं अन्य जीवजंतु के प्रयोग) पर निर्भर करती है। कीटों और रोगों की समस्या को कम करने के लिए, एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन में फसल चक्र, अन्य लाभकारी पौधों से बने पदार्थ, साथ ही रासायनिक कीटनाशकों, और फफूंदनाशकों का विवेकपूर्ण उपयोग शामिल है।

- एकीकृत पौध संरक्षण, मृदा में मौजूद सूक्ष्मजीव एवं वर्म (केंचुआ) की जैवविविधता को बनाये रखता है, जिससे हवा का संचार एवं पोषक तत्वों का स्तर बढ़ जाता है। इसके अलावा, मृदा के ऊपर विभिन्न प्रकार के लाभदायक कीट जैसे लेडीबर्ड बीटल, मकड़ी आदि पाए जाते है, जो फसलों को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों का शिकार कर उन्हें खा जाते है जिससे इन कीटों का जैविक नियंत्रण होता है एवं रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग कम होता है ।
- एकीकृत पौध संरक्षण के अंतर्गत, शून्य–जुताई एवं अन्य संरक्षित खेती की पद्धतियों (फसल विविधीकरण) के परिणामस्वरूप कीटनाशकों, कवकनाशियों और शाकनाशियों जैसे रसायनों का उपयोग धीरे–धीरे कम हो जाता है, जिससे मृदा में विषैले पदार्थों की मात्रा में कमी होती है जोकि मृदा प्रदूषण को कम करता है ।
- एकीकृत खरपतवार प्रबंधन, खरपतवारों के प्रकोप को कम करता है जिससे फसलों को पानी, पोषक तत्त्व, कार्बन डाई ऑक्साइड एवं प्रकाश पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है। अतः अधिक बायोमास बनने से फसलों की अधिक उपज प्राप्त होती है ।

5. एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन में, मृदा की उर्वरता बढ़ाने और अजैविक खाद (यूरिया, डीएपी आदि) की आवश्यकता को कम करने के लिए जैविक (हरी खाद, फसल अवशेष आदि) और अजैविक खाद के साथ–साथ जैव–उर्वरक (राइजोबियम, एजोटोबेक्टर, पीएसबी आदि) और वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग शामिल है।

- यह प्रबंधन अजैविक खाद के उपयोग को धीरे–धीरे कम करने के साथ–साथ जैविक खाद एवं जैव–उर्वरकों के उपयोग को बढ़ावा देता है जिससे मृदा में विषैले पदार्थों में कमी होती है एवं मृदा स्वास्थ्य में सुधार होता है ।
- जैविक खाद एवं जैव–उर्वरक में कार्बनिक पदार्थ अधिक होता है जिससे मृदा में मौजूद लाभकारी सूक्ष्मजीवों के विकास को बढ़ावा मिलता है। ये सूक्ष्मजीव पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण द्वारा फसलों के जड़ क्षेत्र में इसकी उपलब्धता को बढ़ाते है जिससे फसलों का उत्पादन अधिक होता है ।

निष्कर्ष

संरक्षित खेती एक ऐसी कृषि पद्धति है, जिसका उद्देश्य पर्यावरणीय प्रभाव को कम करते हुए मृदा के स्वास्थ्य में सुधार करना है। न्यूनतम भूपरिष्करण, फसल अवशेष के उपयोग, फसल विविधीकरण, एकीकृत पौध संरक्षण एवं एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन द्वारा मृदा क्षरण में कमी होती है और मृदा के स्वास्थ्य में सुधार होता है, जिससे स्वस्थ और अधिक उत्पादक फसलें प्राप्त होती हैं। संरक्षित खेती किसानों को लाभ पहुंचाने के अलावा, ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को कम करके और प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करके कृषि स्थिरता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके अलावा, संरक्षित खेती जल धारण में सुधार करके किसानों को जलवायु परिवर्तन के अनुकूल बनाने में मदद करती है। अतः संरक्षित खेती कृषि के लिए एक आशाजनक दृष्टिकोण है, जो किसानों और मृदा स्वास्थ्य दोनों को लाभान्वित करती है।

जैविक कीटनाशकः बाधाएं और चुनौतियाँ

आर.एस. सेंगर एवं वर्णित अग्रवाल
सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ, (उ.प्र.)

सारांश

हरित क्रान्ति के समय देश की बढ़ती हुई जनसंख्या को पर्याप्त भोजन उपलब्ध कराने के लिए विभिन्न प्रकार के रसायनिक उर्वरकों एवं रसायनिक कीटनाशकों का प्रयोग फसल की उत्पादकता बढ़ाने के लिए करना पड़ा। कुछ वर्षो के बाद ही यह ज्ञात हो गया कि रसायनिक कीटनाशक न केवल पारिस्थितिकी तंत्र अपितु पशु एवं मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। तदुपरान्त वैज्ञानिक समुदाय ने रसायनिक कीटनाशकों के नकारात्मक प्रभाव को कम करने के लिए इसके विकल्प का अध्ययन करना शुरू किया और विभिन्न जैवकीटनाशकों को विकसित करने में सफलता पाई, जो न केवल पयार्वरण हितैषी हैं, बल्कि इनका कोई भी नकारात्मक प्रभाव मानव स्वास्थ पर नहीं पड़ता है। यह जैव कीटनाशक जानवरों, पौधों, सूक्ष्मजीवियों और कुछ खनिज सामाग्रियों के फार्मूलेशन से तैयार किया जाता है। सर्वाधिक रूप से प्रयोग होने वाले जैवकीटनाशक सूक्ष्मजीव एवं पौधों के उत्पाद होते हैं, जो हानिकारक कीटों को रोकने में सक्षम होते हैं। जैवकीटनाशकों में जैवकवकनाशी *(ट्राइकोडर्मा)*, जैव खरपतवारनाशी *(फाइटोप्थोरा)*, जैव पीड़कनाशी *(बैसिलस थुरिंजिएन्सिस)*, आदि शामिल हैं, इनको फार्मूलेशन के अनुसार तीन प्रमुख वर्गों में विभाजित किया गया है, जिनमें सूक्ष्मजीवी कीटनाशक, जैवरासायनिक कीटनाशक एवं पादप समाविष्ट संरक्षक शामिल हैं। सूक्ष्मजीव जैवकीटनाशकों में तीन चौथाई से अधिक केवल *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* का प्रयोग किया जाता है, जबकि अन्य जैव कीटनाशकों में नीम के पेड़ से व्युत्पन्न, वैकुलो वायरस, *ट्राईकोडर्मा, ट्राईकोग्रामा,* इत्यादि प्रमुख हैं। जैवकीटनाशकों की पर्यावरण संरक्षण में उपयोगिता के कारण विश्वस्तर पर इनके उपयोग में लगभग 10 प्रतिशत की वार्षिक दर से वृद्धि हो रही है। लेकिन भारत में इनको अपनाने में कुछ बधाऐं और चुनौतियां आ रही हैं। इनको अपनाने में आने वाली प्रमुख बधाओं में किसान में जागरूकता की कमी, पंजीकरण में कठिनाई, इनके लिए बनी कठोर नीतियां, उपभोक्ताओं की नकारात्मक धारणाएं एवं अर्थव्यवस्था की समस्याएं प्रमुख रूप से शामिल हैं। भारत में जैवकीटनाशकों को अपनाने में कुछ चुनौतियां भी हैं। जैसे– जैव नियन्त्रक एजेन्ट के चयन में कठिनाई, अच्छी तकनीकी का अभाव, अनुभवी लोगों की कमी, प्रयोग विधि की जानकारी का अभाव, कीटों में जैवकीटनाशकों के प्रतिरोध का विकास, प्रदर्शन और स्वजीवन, आदि से सम्बन्धित हैं। अतः इस लेख में जैवकीटनाशकों के पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धित लाभ, प्रकार, वर्तमान में विश्वस्तर एवं भारत वर्ष में इनके उपयोग की स्थिति के साथ–साथ कुछ कमियां जैसे कीट विशिष्टता, तापमान के प्रति अस्थिरता, आदि वर्णित हैं।

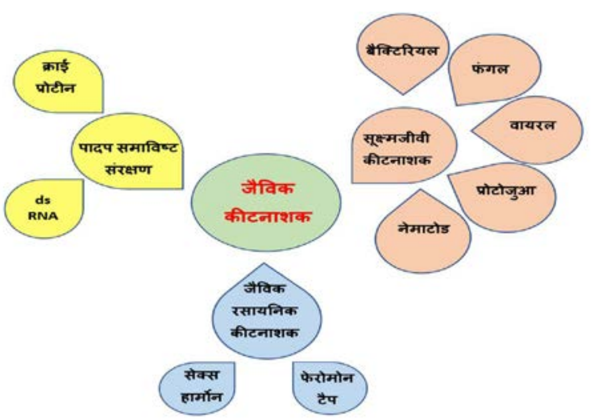

परिचय

भारत क्षेत्रफल की दृष्टि से दुनिया का सातवां सबसे बड़ा देश है, और विश्व का लगभग 2.4 प्रतिशत भू–भाग भारत में आता है। जबकि जनसंख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में दूसरा स्थान है, यहां विश्व की लगभग 18 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। इतनी अधिक जनसंख्या के लिए प्राकृतिक विधि से खेती करके पर्याप्त अनाज उपलब्ध कराना असम्भव है, इसलिए देश की बढ़ती हुई जनसंख्या को पर्याप्त भोजन उपलब्ध कराने के लिए विभिन्न प्रकार के रसायनिक उर्वरक एवं रसायनिक कीटनाशकों का प्रयोग करना पड़ा, जिसका प्रभाव फसलों के पैदावार पर सकरात्मक परन्तु अन्य जीवों और मनुष्यों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। रसायनिक कीटनाशकों के कारण मृदा की उर्वरता और जैव विविधता घटी जबकि जल प्रदूषण तथा पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव बढा है। इसलिए पर्यावरण, पारिस्थितिकी तंत्र और मानव स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए सुरक्षित और कुशल कृषि प्रौद्योगिकियों की तत्काल आवश्यकता है।

जैव कीटनाशकों की अवधारणा आज महत्वपूर्ण रूप से लक्षित प्रजातियों के लिए एक उच्च चयनात्मकता लेकिन गैर–लक्षित जीवों के लिए न्यूनतम प्रभाव, कम पर्यावरणीय दृढ़ता, उच्च प्रभावशीलता, प्रतिरोधों के विकास को रोकने, खाद्य श्रृंखला के भीतर जैव संकेंद्रण और जैव आवर्धन से बचने के लिए जीवित जीव और जैविक पदार्थ फसल सुरक्षा एजेंटों के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आम बोलचाल की भाषा में ऐसे वर्ग के कीटनाशक जिसे प्राकृतिक पदार्थों का उपयोग करके उत्पादित किया जाता है उस जैवकीटनाशक कहते है। जबकि यूएसईपीए के अनुसार जैवकीटनाशकों को जानवरों, पौधों, बैक्टीरिया और कुछ खनिजों जैसे प्राकृतिक सामग्रियों से प्राप्त फॉर्मूलेशन के रूप में परिभाषित किया गया है। एक लक्षित कीट के लिए विशिष्ट रोगजनक सूक्ष्म जीवों पर आधारित जैव कीटनाशक कीट समस्याओं के लिए पारिस्थितिक रूप से प्रभावी समाधान प्रदान करते हैं। सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले जैवकीटनाशक जीवित जीव हैं, जो लक्षित कीट के लिए रोगजनक हैं। इनमें बायोफंगिसाइड्स *(ट्राइकोडर्मा),* बायोहर्बिसाइड्स *(फाइटोप्थोरा)* और बायोइंसेक्टिसाइड्स *(बैसिलस थुरिंजिएन्सिस)* शामिल हैं। जैव कीटनाशक कृषि और सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों के लिए एक संभावित पर्यावरण हितैषी विकल्प है, जिसमें सूक्ष्मजीवों और अन्य प्राकृतिक स्त्रोतों से प्राप्त माइक्रोबियल कीटनाशकों, जैव रसायनों की एक विस्तृत श्रृंखला और प्रक्रियाओं में आनुवंशिक समावेश शामिल है। जैवकीटनाशकों को उनके उत्पादन के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है, जो नीचे वर्णित हैं।

जैवकीटनाशकों की मुख्य श्रेणियाँ

चूंकि जैवकीटनाशक अलग–अलग प्रकार के जैव स्रोतों से बनाये जाते हैं और उनकी क्रियाविधि व क्षमता अलग–अलग होती है। अतः जैवकीटनाशकों को उनकी क्रियाविधि के अनुसार तीन वर्गों में विभक्त किया गया है, जो निम्नानुसार है:

क. सूक्ष्मजीवी कीटनाशक

ख. जैवरासायनिक कीटनाशक

ग. पादप समाविष्ट संरक्षक (पी.आई.पी.) कीटनाशक

क. सूक्ष्मजीवी कीटनाशक

सूक्ष्मजीवी कीटनाशकों में सक्रिय संघटक के रूप में सूक्ष्मजीव जैसे जीवाणु, कवक, विषाणु, प्रोटोजोआ या शैवाल होते हैं। हालांकि प्रत्येक संघटक की सक्रियता लक्षित कीट के लिए विशिष्ट होती है। सूक्ष्मजीवी कीटनाशक कई अलग–अलग

प्रकार के कीटों को नियंत्रित कर सकते हैं। यह कीटों में बीमारी उत्पन्न कर, कीटों से प्रतियोगिता कर या अन्य क्रियाओं के माध्यम से सूक्ष्मजीवों की स्थायित्व को रोककर कीट का अवरोधन करते हैं। उदाहरण के लिए कुछ ऐसे कवक चिन्हित किये गये हैं, जिनमें से कुछ खरपतवारों को नियंत्रित करते और अन्य कवक जो विशिष्ट कीड़ों को मारते हैं। सबसे व्यापक रूप से ज्ञात माइक्रोबियल कीटनाशक जीवाणु *बैसिलस थुरिंजिनेसिस* या बीटी की किस्में हैं। यह एक प्रोटीन पैदा करता है जो विशिष्ट कीटों के लिए हानिकारक है। यह गोभी, आलू और अन्य फसलों में कुछ कीड़ों को नियंत्रित करता है। *बी. थुरिंजिनेसिस* से बने उत्पादों में विभिन्न प्रकार के विषाक्त पदार्थों होते हैं जो कीड़ों की एक या अधिक प्रजातियों को मारने की क्षमता रखते हैं।

ख. जैव रासायनिक कीटनाशक

जैव रसायनिक कीटनाशक प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले पदार्थ हैं जो गैर विषैले तंत्र द्वारा कीटों को नियंत्रित करते हैं। जैव रसायनिक कीटनाशकों में ऐसे पदार्थ शामिल होते हैं जो कीटों की वृद्धि या प्रजनन में बाधा डालते है। जैसे पौधे के विकास नियामकता ऐसे पदार्थ जो कीटों को दूर भगाते या आकर्षित करते (फेरोमोन) हैं। प्राकृतिक यौगिक जो गैर विषैले तरीके से रोगजनकों को नियंत्रित करते अथवा सुगंधित पौधों के अर्क जो कीटों को जाल की ओर आकर्षित करते हैं।

ग. पादप समाविष्ट संरक्षक (पीआईपी) कीटनाशक

पादप समाविष्ट संरक्षक, वह कीटनाशक पदार्थ है जो पौधे में जैवप्रौद्योगिकी विधि से विशिष्ट आनुवांशिक पदार्थ के प्रवेश कराने पर पौधों में ही उत्पन्न होते हैं। उदाहरण के लिए

वैज्ञानिक, बीटी कीटनाशक प्रोटीन के लिए उत्तरदायी जीन को लेकर कपास के आनुवांशिक पदार्थ में प्रवेश कराते हैं और तब कपास के पौधे में स्वयं कीट को नष्ट करने की क्षमता विकसित हो जाती है। पिछले दो दशकों से विभिन्न प्रयोगशालाओं के वैज्ञानिक विभिन्न फसलों की ट्रांसजेनिक किस्मों को तैयार कर रहे हैं। इन किस्मों में बीटी जीन समावेषित होते हैं, जो *बैसिलस थुरिंजिनेसिस* जीवाणु से प्राप्त प्रोटीन (जिसे क्रिस्टल प्रोटीन δ–एंडोटॉक्सिन या क्राईप्रोटीन कहा जाता है) से बने होते हैं। जब कीट इन पौधे के तनों, पत्तियों, फलों आदि को खाते हैं तो कीटनाशक प्रोटीन कीटों को स्थिर कर देते या मार देते हैं। पादप समाविष्ट संरक्षक के प्रमुख उदाहरण बीटी कपास और बीटी मक्का है।

जैव–कीटनाशकों के प्रमुख उत्पाद :–

भारत में उपयोग किए जाने वाले जैवकीटनाशकों के प्रमुख उत्पाद निम्नलिखित हैं:

1. नीम के पेड़ के व्युत्पन्न :–

नीम के पेड़ के व्युत्पन्नों में कई रसायन होते हैं, जो विभिन्न प्रकार के कीटों की प्रजनन क्षमता और पाचन क्रिया को प्रभावित करता है। नीम के व्युत्पन्न उत्पाद निम्नलिखित हैं:

नीम की पत्तियां :–

नीम की पत्तियों में कीटनाशक क्षमता होती है, क्योंकि इनमें विशेष प्रकार के रसायनिक तत्व पाये जाते हैं जिन्हें विज्ञान की भाषा में लिमोनोइडस कहते हैं। इसका प्रयोग कवक जनित रोगों, सुंडी, माहू, इत्यादि के नियंत्रित करने के लिये किया जाता है। 10 लीटर घोल बनाने के लिए 1 किलो पत्तियों को रातभर पानी में भिगोकर अगले दिन सुबह इसको अच्छी तरह कूट या पीसकर पानी में मिलाकर पतले कपड़े से छानकर कीटनाशक के रूप में प्रयोग कर सकते है।

नीम की गिरी :–

नीम के बीजों में लिपिड, प्रोटीन और टेरपेनोइड्स के विभिन्न घटक पाये जाते हैं। नीम की गिरी में अजादिराच्टिन नाम का प्रमुख जैव रसायन पाया जाता है। नीम की गिरी को कीटनाशक के रूप में उपयोग करने के लिए 20 लीटर पानी में एक किलो नीम के बीजों के छिलके उतारकर अच्छी प्रकार से कूटकर भिगो दे और इसे एक पतले कपड़े में बांधकर पानी में रातभर के लिए डाले दें। अगले दिन इस पोटली को मसल–मसल कर निचोडें व पानी को छान लें और इस पानी में 20 ग्राम देसी साबुन या 50 ग्राम रीठे का घोल मिला दें। इस घोल को कीट व फफूंदनाशक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

नीम का तेल :–

नीम के तेल में विभिन्न जैव रसायन जैसे निंबोलिनिन, निंबिन, निंबिडिन, निंबिडोल, सोडियम निंबिनेट, गेडुनिन, सालैनिन और क्योर सेटिन पाये जाते हैं। यह रसायन जैवकीटनाशक के रूप में कार्य करते हैं। एक लीटर नीम के तेल का कीटनाशक बनाने के लिए, एक लीटर पानी 15 से 30 मि.ली. नीम का तेल अच्छी तरह मिलाये और इसमें 1 ग्राम देसी साबुन या रीठे का घोल मिलाएं। एक एकड़ की फसल के लिए 1 से 3 ली. तेल की आवश्यकता होती है। नीम के तेल का छिड़काव करने से गन्ने की फसल में तना बांमक व सीरस बांमक बीमारियों को नियंत्रित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त नीम का तेल कवक जनित रोगों में भी प्रभावी है। इस घोल का प्रयोग इसे बनाने के तुरंत बाद करें अन्यथा तेल पानी से अलग होकर सतह पर फैलने लगता है जिससे नीम के तेल से बना कीटनाशक प्रभावी नहीं रहता।

नीम की खली का घोल :–

नीम के बीज से तेल निकालने के बाद बची हुई खली भी कीटनाशक के रूप में प्रयोग की जाती है। क्योंकि इस खली में भी विभिन्न जैव रसायन पाये जाते हैं जो कीटनाशक के रूप में कार्य करते हैं। 50 लीटर नीम की खली का घोल बनाने के लिए 1 किलोग्राम नीम की खली को 50 लीटर पानी में एक पतले कपड़े में पोटली बनाकर रातभर के लिए भिगो दें। अगले दिन इसे मसल कर छान लें। एक एकड़ की खड़ी फसल में 50 लीटर नीम की खली के घोल का छिड़काव करें। यह बहुत ही प्रभावकारी कीट व रोग नियंत्रक है।

2. *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* (बीटी) :–

चूंकि *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* (बीटी) में एक विशिष्ट प्रकार का प्रोटीन, जिसे क्रिस्टल प्रोटीन δ–एंडोटॉक्सिन या क्राई प्रोटीन कहा जाता है, पाई जाता है इसमें कीटों को मारने की क्षमता होती है। अतः इस प्रोटीन का प्रयोग विभिन्न कीटनाशक के रूप में कृषि कीटों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* विश्व स्तर पर सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला जैव कीटनाशक है। यह मुख्य रूप से कपास में अमेरिकी सुंडी और चावल में तना छेदक जैसे लेपिडोप्टेरस कीटों का एक रोग ज़नक़ है। जब इसे कीट लार्वा द्वारा अंतर्ग्रहण किया जाता, तो यह विषाक्त पदार्थों को छोड़ता है जो कीट के मध्य आंत को नुकसान पहुंचाता है और अंततः कीट को मार देता हैं।

3. बैकुलो वायरस :–

यह लक्षित विशिष्ट वायरस हैं जो कई महत्वपूर्ण पौधों के कीटों को संक्रमित और नष्ट कर सकते हैं। प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले बैकुलो वायरस का उपयोग कीटों की एक विस्तृत श्रृंखला को नियंत्रित करने के लिए किया जा सकता है। अधिकांश बैकुलो वायरस का उपयोग जैवकीटनाशकों के रूप में किया जाता है अर्थात, उन्हें सिंथेटिक रसायनिक कीटनाशकों के उपयोग के समान उच्च घनत्व वाले कीट आबादी पर छिड़का जाता है। बैकुलो वायरस कीट आबादी के आकार को विनियमित करने में एक महत्वपूर्ण पारिस्थिति क भूमिका निभाते हैं। कई वर्षों से बैकुलो वायरस को वानिकी और कृषि के खिलाफ लक्षित जैव नियंत्रण एजेंटों के रूप में लागू किया गया है। पारिस्थितिक तंत्र में बैकुलो वायरस अक्सर विभिन्न प्रकार के कीड़ों के दमन में एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के लिए, जिप्सीमोथका वायरस, लिमैंट्रियाडिस्पर, को कीट की घनी आबादी का प्रमुख प्राकृतिक नियामक माना जाता है।

4. ट्राइकोडर्मा :–

ट्राइकोडर्मा एक कवकनाशी है जो मिट्टी में पैदा होने वाली बीमारियों जैसे जड़ की सड़न के खिलाफ प्रभावी है। यह शुष्क भूमि फसलों जैसे मूंगफली, मूँग और चना के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है, जो इन रोगों के लिए अतिसंवेदनशील होते हैं।

5. ट्राइकोग्रामा :–

ट्राइकोग्रामा कई वर्षों से लेपिडोप्टेरान कीटों के नियंत्रण के लिए उपयोग किया जा रहा है। ट्राइकोग्रामा को परजीवी दुनिया का ड्रोसोफिला माना जा सकता है, क्योंकि उनका उपयोग पानी के बहाव के लिए किया गया है। ट्राइकोग्रामा विशेष रूप से अंडो परजीवी होते हैं। व विभिन्न लेपिडोप्टेरान कीटों के अंडों में अंडे देते हैं। अंडे देने के बाद, ट्राइकोग्रामा लार्वा मे जवान अंडे को खिलाते और नष्टकर देते हैं।

जैव कीटनाशकों की वर्तमान स्थिति :–

बढ़ती हुई लागत और रसायनिक कीटनाशकों के नकारात्मक प्रभाव ने जैवकीटनाशकों के विचार को फसल संरक्षण और उत्पादन के लिये आवश्यक विकल्प बना दिया। इसलिए ऐसे जैव सक्रिय पदार्थों की आवश्यकता है जो प्रभावी रूप से कीटों से लड़ते हैं तथा मनुष्यों, जानवरों और पर्यावरण पर न्यूनतम प्रभाव डालते हैं। जैव कीटनाशकों का प्रयोग सब्जियों सहित प्रमुख फसलों के लिए समन्वित रोग प्रबंधन कारक (आईपीएम) रणनीति का एक महत्वपूर्ण घटक है। सबसे प्रसिद्ध उदाहरण नीम आधारित उत्पाद हैं जो कई कीटों के खिलाफ प्रभावी साबित हुए हैं। कई जैव–कीटनाशक जो व्यावसायिक रूप से किसानों के लिए उपलब्ध हैं।

वर्तमान में विश्वस्तर पर लगभग 175 पंजीकृत जैव–कीटनाशक और 700 उत्पाद सक्रिय हैं। भारत में अभी तक केवल 12 जैव–कीटनाशकों का पंजीकरण किया गया है, जिनमें से 5 जीवाणु (चार *बेसिलस* प्रजातियां और एक *स्यूडोमोनास सफ्लोरेसेंस),* तीन कवक (दो ट्राइकोडर्मा प्रजातियां और एक बीवेरिया प्रजाति), दो वायरस *(हेलीकोवरपा और स्पोडोप्टेरा)* और दो पादप उत्पाद (नीम और सिंबो पोगन) हैं। विभिन्न जैव–उत्पाद के बीच, *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* (बीटी), *ट्राइकोडर्मा विरिडे, मेटारिज़ियम, ब्यूवेरिया बेसियाना,* न्यूक्लियर पॉलीहेड्रोसिस वायरस (एनपीवी) और नीम का पौधों के संरक्षण के लिये लोकप्रिय रूप से उपयोग किया जाता है। कई जैव–कीटनाशकों का क्षेत्र मूल्यांकन या तो अकेले या अन्य पौध संरक्षण विकल्पों के साथ संयोजन में उनके

प्रभाव और अनुकूलता को दर्शाता है। कई अध्ययनों ने उनकी आर्थिक व्यवहार्यता, पर्यावरण अनुकूलता और कृषि में स्थिरता की सुविधा के लिए संकेत दिये हैं। नीम आधारित छोटे पैमाने पर फॉर्मूलेशन का उत्पादन और फार्मूलेटर कीटनाशकों के रूप में विपणन किया जा रहा है। उनमें से ज्यादातर हैं नीम के तेल से बने अलग–अलग मात्रा में होते हैं।

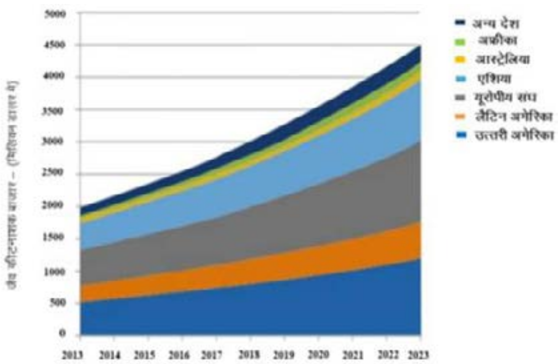

2013 से 2023 तक जैव कीटनाशको का वैश्विक बाजार

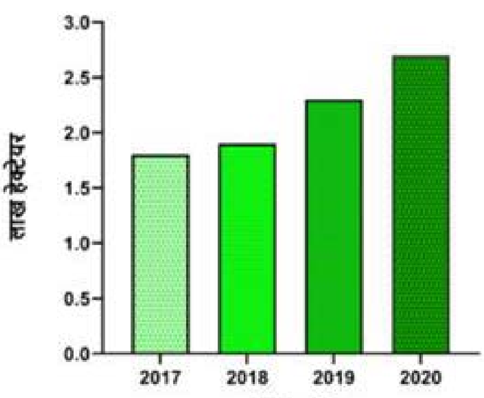

वार्षिक वृद्धि

वर्तमान में, बायोपेस्टीसाइड्स उपयोग किए जाने वाले पादप रक्षकों का केवल 2 प्रतिशत कवर करते हैं हालाँकि विश्वस्तर पर अतीत के दो दशक में इसकी विकास दर बढती प्रवृत्ति को दर्शाती है। जैवकीटनाशकों के वैश्विक उत्पादन का अनुमान 3,000 टन से अधिक होना लगाया गया है, जो प्रतिवर्ष तेजी से बढ़ रहा है। विश्वस्तर पर, जैवकीटनाशकों के उपयोग में हर साल 10 प्रतिशत की दर से लगातार वृद्धि हो रही है।

जैवकीटनाशकों का कीटों पर प्रभाव :–

लगभग 90 प्रतिशत माइक्रोबियल बायोपेस्टीसाइड्स केवल एक एंटोमोपैथोजेनिक जीवाणु, *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* से प्राप्त होते हैं। जैवकीटनाशक हानिकारक कीटों को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रुप से मार देते हैं। जैवकीटनाशकों का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव को निम्नलिखित चित्र में दिखाया गया है–

जैव कीटनाशकों की विषाक्तता का कीटों पर प्रभाव

भारत में जैव–कीटनाशकों को अपनाने में आने वाली प्रमुख बाधाएं :–

भारत में अधिकतर किसान आज भी रसायनिक कीटनाशकों का प्रयोग करते हैं, क्योंकि इन कीटनाशकों के विकल्प के रूप में बाजार में उपलब्ध विभिन्न जैव कीटनाशकों की उपयोगिता के बारे में जानकारी की कमी है, जो नीति नेटवर्क की कमजोरी को दर्शाता है। रासायनिक कीटनाशकों के सापेक्ष जैवकीटनाशकों के लिए अपरिपक्वता नीति नेटवर्क, सीमित संसाधन और क्षमताएं, विश्वास की कमी, नियामकों और उत्पादकों के बीच कुछ गंभीर समस्याएं हैं। जैव कीटनाशकों की क्रिया के तरीके की बेहतर समझ, उनके प्रभाव और नियामक मुद्दे जो उनको अपनाने में उत्पन्न होने वाली महत्वपूर्ण चुनौतियां हैं। चूंकि पर्यावरण सुरक्षा एक वैष्विक चिंता का विषय है इसलिए हमें किसानों, निर्माताओं और सरकारी एजेंसियों के बीच जागरूकता लाने की जरूरत है। नीति निर्माताओं और आम लोगों को जैव कीटनाशकों को अपनाने के लिए कीट प्रबंधन की आवश्यकताएँ हैं। जैवकीटनाशकों के उपयोग को कम करने वाली कुछ प्रमुख बाधाओ की चर्चा नीचे की गई है।

1. जागरूकता की कमी :–

भारत में जैवकीटनाशकों में रुचि रसायनिक कीटनाशकों से जुड़े नुकसान पर आधारित है, किसानों द्वारा इसे अपनाने के लिए अधिकतम लाभ के बारे में जानकारी की आवश्यकता है। व्यवहार में जैवकीटनाशकों को अपनाने में छोटे और बड़े किसानों के बीच एक स्पष्ट अंतर है। जैवकीटनाशकों का प्रयोग करने के लिए ज्यादातर समय छोटे किसान या तो अनजान हैं, या इनके प्रति रुचि नहीं दिखाते हैं।

2. जैव–कीटनाशकों के पंजीयन में कठिनाई :–

कीटनाशक अधिनियम (1968), 2000 में संशोधित, भारत सरकार के तहत एकमात्र कानून है जो जैवकीटनाशकों सहित सभी प्रकार के कीटनाशकों के आयात, निर्माण, बिक्री, परिवहन, वितरण और उपयोग को नियंत्रित करता है। जैवकीटनाशकों

के मामले में, शेल्फ–लाइफ, क्रॉस–संदूषण, नमी की मात्रा और पैकेजिंग में प्रयोग होने वाले पदार्थ पर विचार किया जाता है। जीवाणु और कवक जैव कीटनाशकों के मामले में, जैव–प्रभावकारिता डेटा को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर), राज्य कृषि विश्व विद्यालय (एसएयू), वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) या भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर) संस्थानों से उत्पन्न करने की आवश्यकता होती हैं।

3. जैवकीटनाशकों के लिए कठोर नीतियां :–

भारत में पहली बार 28 जुलाई 2000 को राष्ट्रीय कृषि नीति (2000) की घोषणा की गई थी। इस नीति में किसानों को प्रमाणित बीज, उर्वरक, पौध संरक्षण रसायन और जैव कीटनाशकों की पर्याप्त और समय पर आपूर्ति पर जोर दिया गया था। नीति में जैविक खेती के लिए प्रमाणित इनपुट के रूप में जैव उर्वरक, जैविक खाद, और जैवकीटनाशकों जैसे पोषक तत्वों के जैविक स्रोत शामिल थे। कीट नियंत्रण और रोग पूर्वानुमान के लिए बाँझ कीट तकनीकों, ट्रांसजेनिक कीड़ों, नवीन वनस्पति विज्ञान, अर्ध रसायन और एंडोफाइटिक माइक्रोबियल मेटाबोलाइट्स के अनुप्रयोगों को शामिल करके नए जैवकीटनाशकों और प्रौद्योगिकियों को विकसित करने पर मुख्य ध्यान केंद्रित किया गया था।

4. जैवकीटनाशकों के बारे में उपयोगकर्ता/उपभोक्ता की नकारात्मक धारणाएं :–

जैवकीटनाशकों के कम उपयोग के लिए उपयोगकर्ता/ उपभोक्ता की जागरूकता एक प्रमुख कारक है। कई किसान जैवकीटनाशक शब्द से परिचित भी नहीं हैं। कुछ स्थानो पर ऐसी घटनाएं होती हैं, जहां कुछ लोगों ने अविश्वसनीय और गलत परिणामों के कारण जैवकीटनाशकों का उपयोग करना बंद कर दिया है। इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि तैयार किए गए जैवकीटनाशक अपनी गतिविधि में विश्वसनीय, विशिष्ट, स्वदेशी और प्रकृति योग्य होने चाहिए। चूंकि किसान जैवकीटनाशकों के अंतिम उपयोगकर्ता हैं, इसलिए जैव–उत्पादों के बारे में उनके विचार जानना भी आवश्यक है क्योंकि यह कृषि प्रणालियों में उपयुक्त जैविक नियंत्रक उपायों के सुझावों और आवश्यकताओं का पूर्वाभास देते है।

5. अर्थव्यवस्था/सब्सिडी :–

उद्यमियों को मुफ्त प्रशिक्षण, जरुरत पडने पर संस्थागत ऋण का प्रावधान, आवश्यक सब्सिडी, बीमा, और संभावित करों से छूट, आदि देकर जैवकीटनाशकों के उत्पादन को प्रोत्साहित कर सकते हैं। छोटी–छोटी इकाई बनाकर स्थानीय स्तर पर विभिन्न प्रकार के जैवकीटनाशकों का उत्पादन कर स्थानीय किसानों को उपलब्ध कराया जा सकता है। इकाईयों को शुरू करने के लिए राज्य एवं केन्द्र सरकारों द्वारा छोटे उद्यमियों को आर्थिक सहायता उपलब्ध कराना चाहिए जिससे कि अधिक संख्या में इकाईयां स्थापित की जा सकें।

भारत में जैवकीटनाषकों को अपनाने में आने वाली मुख्य चुनौतियाँ :–

जैवकीटनाशकों को अपनाने में प्रमुख किसानों की अनभिज्ञता हैं, अतः जैवकीटनाशकों से परिचित किसी जानकार के साथ मिलकर काम करने की आवश्यकता है अतः कीटनाशक विक्रेताओं को जैवकीटनाशकों की उपयोगिता, लाभ तथा प्रयोग विधि के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। जैव–कीटनाशकों को अक्सर एक विशिष्ट कीट के लिए लक्षित किया जाता है, जबकि परंपरागत रसायन कीटनाशकों के उपयोग से एक ही बार में कई प्रकार के कीटों को मार सकते हैं। जैव–कीटनाशकों को अपनाने में आने वाली कुछ महत्वपूर्ण मुख्य चुनौतियों पर नीचे चर्चा की गई है:

1. बायो कंट्रोलएजेंट के चयन और विकास में कठिनाइयाँ :–

भारत में कुल जैवकीटनाशक उत्पादों में कवक का प्रतिशत सबसे अधिक है। बाजार में ट्राइकोडर्मा आधारित जैवकीटनाशकों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है परन्तु ट्राइकोडर्मा की केवल दो प्रजातियॉ ही कीटनाशक की तरह उपयोग की जा रही हैं। जो इस क्षेत्र में अनुसंधान की कमी या अपर्याप्त ज्ञान को दर्शाता है। अतः ट्राइकोडर्मा एवं कवक की अन्य प्रजातियों को भी जैवकीटनाशकों के रूप में चिहिन्त करने की आवश्यकता है। अब तक पादप रोगाणुओं के जैव नियंत्रण के संबंध में मुख्यतः ऐसे जीवाणुओं पर शोध किया गया है जो विषाणुजनक होते हैं। गैर–बीजाणुजनक जीवाणु, जैसे *सेराटिया एंटोमोफिला* और *क्रोमोबैक्टीरियम सबत्सुगे* आदि की कीटनाशक क्षमता का परीक्षण किया जाना चाहिए।

2. अच्छी फॉर्मूलेशन तकनीक की आवश्यकता :–

जैवकीटनाशक उत्पादन के लिए उच्चगुणवत्ता वाली निर्माण प्रक्रियाओं की कमी है। अभी भी सूक्ष्म जीव आधारित जैवकीटनाशकों की प्रमुख चुनौती समुचित वाहक सामग्री जिसमें सूक्ष्मजीव की वृद्धिदर को बढ़ाने की क्षमता हो। विषाणु आधारित जैवकीटनाशकों के उत्पादन संयंत्रों में

एक अलग कीट पालन की सुविधा होनी चाहिए और वायु परिसंचरण दूषित पदार्थों से मुक्त होना चाहिए।

3. निर्माण और पैकेजिंग के लिए अनुभवी लोगों की आवश्यकता :–

जैवकीटनाशकों के लिए विशिष्ट निर्माण एवं पैकेजिंग की आवश्यकता होती है जिससे कि प्रयुक्त सूक्ष्मजीव का सक्रिय अवस्था में भण्डारण किया जा सके। उद्योग के व्यक्तियों को वायरस आधारित जैव नियंत्रण उत्पादो के विकास के लिए आवश्यक निर्माण प्रौद्योगिकियों में गहन अनुभव होना चाहिए। भारत में पैकेजिंग, जैवकीटनाशकों के उपयोग को प्रभावित करने वाली प्रमुख बाधाओं में से एक है। पैकेजिंग इस प्रकार की होनी चाहिए जिसमें उत्पाद की गुणवत्ता सुनिश्चित हो ताकि अंतिम उपयोगकर्ता की अपेक्षाओं को पूरा किया जा सके।

4. प्रयोग तकनीक से अनभिज्ञता :–

जैवकीटनाशकों के कम लोकप्रिय होने का प्रमुख कारण वितरण एजेंटों को परिवहन, भण्डारण एवं अनुप्रयोग के प्रशिक्षण का अभाव है। अधिकांश भारतीय फर्म कोटिंग सामग्री के रूप में टैल्कम पाउडर (50–80 माइक्रोन कण आकार के साथ) का उपयोग कर रही हैं। परन्तु इसके प्रयोग एवं भण्डारण की पर्याप्त जानकारी न तो वितरकों को है नही किसानों को। इसलिए ठोस जैवकीटनाशक फॉर्मूलेशन का उपयोग सही ढंग न होने के कारण अपेक्षित परिणाम नहीं मिलते।

5. प्रतिरोध का विकास

समान्यता रोगाणुओं में जैवकीटनाशकों के प्रति कुछ वर्षों में ही प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न हो जाती है। जिससे जैवकीटनाशकों का प्रभाव कम हो जाता है। माइक्रोबियल रोगजनकों के विभिन्न समूहों में *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* के प्रतिरोध के विकास को सबसे अधिक सूचित किया गया है। पिछले कुछ वर्षों के भीतर, कम से कम 16 कीट प्रजातियों की पहचान की गई है जो प्रयोगशाला में *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* 8–एंडोटॉक्सिन के प्रतिरोध को प्रदर्शित करती हैं। प्रतिरोधों के विकास की समस्या को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है, क्योंकि कुछ समय बाद जैवकीटनाशकों का उपयोग विफल होने लगेगा।

6. प्रदर्शन और आयु :–

कुछ जैवकीटनाशक कम प्रभावी एवं लक्षित कीटों को ही मारने की उनकी क्षमता होती है। यू.वी. प्रकाश एवं शुष्कन प्रक्रिया सूक्ष्मजीव आधारित कीटनाशकों की प्रभाविता को कम कर देता है। ज्यादातर फुटकर और थोक ऑर्डर, तापमान और आर्द्रता के प्रति संवेदनशीलता के कारण तरल पर दानेदार फॉर्मूलेशन को प्राथमिकता दी जाती है।

जैवकीटनाशकों की सीमाएं :–

किसान रासायनिक कीटनाशकों के विकल्प के रूप में पौधों के उत्पादों का उपयोग करने के महत्व को महसूस करते हैं। प्रतिरोध प्रबंधन, जैसा कि रसायनिक कीटनाशकों के साथ होता है, का अभ्यास करना आवश्यक होगा। इन जैव उत्पादों को लोकप्रिय होने में अभी समय लगेगा। जैवकीटनाशकों की निम्नलिखित सीमाएँ हैं–

- जैवकीटनाशकों की अनुपलब्धता
- जैवकीटनाशक की सीमित आयु
- गुणवत्ता वाले जैवकीटनाशकों की अपर्याप्तता
- लगातार जैवकीटनाशकों के खेत में परिणाम की निगरानी
- प्रकाश और गर्मी के वातावरण में अस्थिरता
- खेत की परिस्थितियों में जैवकीटनाशकों की धीमी प्रक्रिया और अप्रत्याशित स्थिरता
- जैवकीटनाशकों के विकास और उत्पादन की महंगी विधि

निष्कर्ष :–

प्रचुर उपलब्धता एवं तीव्र प्रभाव के कारण आज भी रसायनिक कीटनाशक किसानों में अधिक लोकप्रिय हैं। हालांकि इनकी कीमत एवं पर्यावरणीय दुष्प्रभाव दोनों ही अधिक है। इनके प्रयोग से अनाज उत्पादन मे बहुत तेजी से वृद्धि हुई, कुछ समय बाद देखा गया कि रसायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से जीवों और मनुष्यों पर न केवल नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा बल्कि साथ ही साथ फसलों की उत्पादकता भी घटी है। इस नकारात्मक प्रभाव के कारण धीरे धीरे जैवकीटनाशकों के प्रति लोगो की जागरूकता बढ़ी है तथा यह रसायनिक कीटनाशकों के विकल्प के रुप में कई क्षेत्रों में प्रयोग भी हो रहे है। लेकिन भारत में अभी भी जैवकीटनाशकों के उत्पादन, भण्डारण, वितरण एवं प्रयोग का समुचित प्रबन्धन नहीं हैं। क्योंकि भारत में जैवकीटनाशकों के विकास से संबंधित वैज्ञानिक और तकनीकी हस्तक्षेप कम हैं। इसके अलावा जमीनी स्तर पर तंत्र की समझ की कमी, जैव–उत्पादों पर विश्वसनीयता की कमी और कीट नियंत्रक के बाजार में प्रवेश की अनुपस्थिति है। यूरोपीय संघ और संयुक्त राज्य अमेरिका में माइक्रोबियल बायोकंट्रोल एजेंटों के लिए रूपरेखा और निर्देश भी भारतीय प्रणाली की तुलना में कम जटिल और अधिक लचीले हैं। भारत में जैवकीटनाशकों के व्यापक उपयोग के लिए कुटीर उद्योगों के साथ–साथ बड़े उद्यमियों एवं सरकार को साथ मिलकर कार्य करना चाहिए और तंत्र की जटिलता को कम करते हुए इनके उत्पादन को बढ़ावा देना होगा। जैवकीटनाशकों को किसानों में लोकप्रिय करने के लिए स्थानीय वितरकों को प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है।

उन्नत उत्पादन तकनीक में पौध संरक्षण के उपकरण

नीरज त्रिपाठी[1], प्रमोद कुमार गुप्ता[1] एवं योगिता घरडे[2]

[1.] जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

[2.] भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत में हर साल किसानों द्वारा उत्पादित खाद्य पदार्थो का औसतन 20–25 प्रतिशत हिस्सा कीटों और बीमारियों द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। कीटों और फसल कटाई उपरांत होने वाली फसलों को क्षति, खाद्य सुरक्षा के लिए एक गंभीर खतरा बनी हुई है और कृषि रसायनों के महत्व को दर्शाती है। भारतीय कीटनाशक रसायन उद्योग 4.1 मिलियन यूएस डॉलर का बढ़ता उद्यम है। कीटों एवं रोगों के आक्रमण की सघनता एवं बारम्बारता पर कीटनाशक रसायन उद्योग की क्षमता निर्धारित होती है। घरेलू कीटनाशक उद्योग अनियमित मानसून पर निर्भर है। मानसून उचित समय पर आने और आवश्यक मात्रा में बारिश होने से कीटनाशकों और छिड़काव यंत्रों की मांग भी बढ़ जाती है। कृषि कार्य में कीटनाशक अंतिम इनपुट के रूप में देना होता है जिन्हे कीटों, खरपतवारों आदि से फसलों को नुकसान को रोकने के लिए उपयोग किया जाता है, जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है। कीटनाशकों को पहले तकनीकी ग्रेड उत्पाद (85 प्रतिशत या अधिक सक्रिय रासायनिक अवयवों) के रूप में निर्मित किया जाता है जो कि उच्च व्यवसायिक शुद्धता है। इसके बाद सक्रिय तत्व में वांछित सूत्रीकरण को प्राप्त करने के लिए इसके साथ अक्रिय अवयवों जैसे सॉल्वेंट्स, एडजुवेंट और फिलर्स मिलाये जाते है। सक्रिय संघटक कीट को मारता है जबकि अक्रिय घटक पौधों को संभालने, छिड़काव और कोटिंग देने में सहायता करता हैं। सन् 2017 के आंकड़ों के अनुसार भारत संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान और चीन के बाद अनुमानत 4.9 बिलियन डॉलर की क्षमता के साथ कीटनाशकों का चौथा सबसे बड़ा वैश्विक उत्पादक है और भविष्य में इसके 10 प्रतिशत वृद्धि होने की सम्भावना है। वैश्विक कीटनाशक बाजार में भारत की हिस्सेदारी लगभग 10 प्रतिशत है। भारत में कीटनाशकों की खपत 0.6 किलोग्राम/हैक्टेयर के साथ निम्न स्तर पर है जबकि अमेरिका और जापान में खपत मात्रा क्रमशः 5–7 और 11–12 किलोग्राम/हैक्टेयर है। भारतीय बाजार में कीटनाशकों की हिस्सेदारी 60 प्रतिशत है वही कवक, खरपतवारनाशी व अन्य के हिस्सेदारी क्रमशः 18, 16 और 6 प्रतिशत है। भारत में, कुल कीटनाशक उत्पादन का लगभग तीन प्रतिशत हिस्सा जैविक कीटनाशी का है। जैविक कीटनाशी का गैर विषैले प्रकृति का होने के कारण भविष्य में इसमें विकास की अभूतपूर्व संभावनाएं है। प्रमुख जैविक कीटनाशी *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस*, एनपीवी तथा ट्राइकोडर्मा है।

कृषि रसायनों के छिड़काव के निम्नलिखित उदद्श्य है:

1. खरपतवारों के कुप्रभावों को कम करने के लिए खरपतवारनाशी का छिड़काव करना
2. रोगजीवाणुओं को नष्ट करने के लिए रोगनाशी का छिड़काव
3. विभिन्न प्रकार के शत्रु कीटों का नाश करने के लिए कीटनाशी का छिड़काव
4. मैगनीज या बोरान जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों का छिड़काव

कीटनाशक शब्द का उपयोग समग्र रूप से कीटनाशकों, कवकनाशी, खरपतवारनाशी, कृन्तक नियत्रंक उद्यान रसायनों, लकड़ी के संरक्षक और घरेलू कीटाणुनाशक के लिए प्रयोग होता है। सामान्यतः कीटनाशकों का वर्गीकरण तीन प्रकार से किया जा सकता है।

(i) क्रिया विधि के आधार पर

(ii) लक्षित कीट प्रजातियों के आधार पर

(iii) कीटनाशकों की रासायनिक संरचना के आधार पर

कृषि उत्पादकता में सुधार के लिए कीटनाशक कैसे महत्वपूर्ण है?

पिछले 70 वर्षो में, भारत में कृषि रसायनो का उपयोग 30 गुना बढ़ गया है (तालिका–1)। कीटनाशकों का छिड़काव धूल या धुंध के रूप में पौधों और मिट्टी पर किया जाता है। ज्यादातर रसायन महंगे होते हैं और इनके उचित अनुपात में छिड़काव के लिए प्रभावी छिड़काव यंत्रों डस्टर और स्प्रेयर की आवश्यकता होती है।

तालिका 1: कृषि रसायनों के उपयोग का समय के साथ बढ़ता परिदृश्य

वर्ष	1950–51	1960–61	1970–71	1980–81	1991–92	1999–2000	2010–2011	2016–2017
उपयोग (कि.ग्रा./हे.)	0.02	0.06	0.15	0.26	0.38	0.35	0.50	0.60

कृषि रसायन छिड़काव यन्त्र

भारतीय बाजार में ये यन्त्र विभिन्न आकार व क्षमताओं में उपलब्ध हैं जो विभिन्न तकनीकों पर आधारित है। कीटनाशकों के बारे में किसान जागरूकता के निम्न स्तर के कारण भारत में प्रति हैक्टेयर कीटनाशक की खपत कम हुई है। इसलिए भारत में कीटनाशकों की प्रति हैक्टेयर खपत दुनिया में सबसे कम है। किसानों को कीटनाशक के फायदे और इसके सुरक्षित उपयोग के बारे में शिक्षित करने से देश में कीटनाशकों की मांग बढ़ेगी। खाद्यान्नों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए या तो उत्पादन के तहत क्षेत्र में वृद्धि की जानी चाहिए या मौजूदा भूमि की उत्पादकता में सुधार किया जाना चाहिए। चूंकि कृषि योग्य भूमि सीमित है, उत्पादकता बढ़ाना एकमात्र उपलब्ध विकल्प है। यह केवल उच्च उपज वाले बीज, उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। जैसे–जैसे फसल की पैदावार बढ़ती है, कीटों के हमले में वृद्धि होती है जिससे कीटनाशकों की मांग बढ़ती है। कीटनाशकों की मांग के बढने के साथ ही छिड़काव यंत्रों की उसी अनुपात में मांग बढ़ जाती है।

विभिन्न फसलों में खरपतवार एवं कीट नियंत्रण में मशीनीकरण के स्तर का परिदृश्य तालिका 2 में देखा जा सकता है। खाद्यान्न फसलों में सबसे अधिक मशीनीकरण 60–90 प्रतिशत तक पँहुच गया है। वही तिलहनी फसलों में इस मशीनीकरण का स्तर 60–80 प्रतिशत तक पँहुच गया है। चारे की फसल, सब्जी की फसल और बागवानी फसलों में कीट नियंत्रण संबंधी मशीनीकरण का स्तर क्रमशः 80–90, 80–90 व 40–50 प्रतिशत तक पहुँच गया है। बागवानी फसलों में मशीनीकरण का स्तर सबसे कम है जिसका मुख्य कारण वृक्षों की उंचाई है जिसके कारण उन पर छिड़काव कर पाना कठिन हो जाता है। वैसे तो बागवानी संबंधी स्प्रेयर उपलब्ध है लेकिन उनका प्रचलन अभी उच्च स्तर पर नहीं पहुंचा है।

तालिका 2: विभिन्न फसलों में खरपतवार एवं कीट नियंत्रण में मशीनीकरण का स्तर

क्रम संख्या	फसल	खरपतवार एवं कीट नियंत्रण, %
1.	धान	80–90
2.	गेहूं	70–80
3.	आलू	80–90
4.	कपास	50–60
5.	मक्का	70–80
6.	चना	60–70
7.	बाजरा	60–70
8.	तिलहन	60–80
9.	चारे की फसले	80–90
10.	सब्जी की फसले	80–90
11.	बागवानी फसलें	40–50

भारत में वर्ष 2013–14 के आंकड़ो के अनुसार (तालिका 3) मानव शक्ति एवं इंजन शक्ति से संचालित स्प्रेयर/डस्टर की संख्या क्रमशः 2214 व 796 हजार है। जो की वर्ष 2031–32 में अनुमानित आंकड़ों के अनुसार मानव शक्ति एवं इंजन शक्ति से संचालित स्प्रेयर/डस्टर की संख्या क्रमशः 2611 व 1824 हजार होने की सम्भावना है।

तालिका 3: भारत में मानव चलित एवं शक्ति चलित स्प्रेयर/डस्टर की संख्या

वर्ष	सुरक्षा उपकरण संख्या (हजार में)	
	मानव चलित	शक्ति चलित
1992–93	1827	303
2003–04	2046	561
2013–14	2214	796
2031–32	2611	1824

यदि शक्ति चलित स्प्रेयर/डस्टर की संख्या को प्रति हजार हैक्टेयर के अनुसार देखा जाये तो ये वर्ष 1972–73 के मुकाबले वर्ष 2012–13 में बढ़कर 22 प्रतिशत एवं वर्ष 2022–23 में बढ़कर 29 प्रतिशत होने का अनुमान है (तालिका 4)। भारत में पादप सुरक्षा उपकरणों की निर्माण इकाइयों की संख्या 300 के लगभग है।

तालिका 4: भारत में शक्ति चलित स्प्रेयर/डस्टर उपकरणों की संख्या परिदृश्य

वर्ष	1972–73	1982–83	1992–93	2002–03	2012–13	2022–23	2023–24	2024–25
संख्या प्रति 1000 है.	0.249	0.884	2.131	3.810	5.459	7.134	7.302	7.472

बूँदिका आकार का महत्व तथा मूल बातें

दरअसल बूँदिका आकार का उसके बहाव एवं पौधे के प्रभावित भाग तक पहुंचने में गहरा सम्बन्ध है। बूँदिका आकार एक प्रभावी कारक है तथा विभिन्न उद्देश्यों हेतु उपयुक्त बूँदिका की संस्तुति की गयी है (तालिका 5)। उड़ने वाले कीड़ो को निशाना बनाने के लिए बूँदिका का आकार 10–15 माइक्रोन मीटर संस्तुत है। जबकि रेंगने व चूसने वाले कीड़ो के लिए बूँदिका का आकार 30–35 माइक्रोन मीटर संस्तुत है। पौधे की सतह और मिट्टी की सतह पर छिड़काव के लिए बूंदो का भारी होना आवश्यक होता है जिससे वे बिना बहाव के उर्ध्वाधर दिशा में नीचे की ओर गिर सकें। पौधे के सतही हिस्से में रहने वाले कीटों आदि को निशाना बनाने के लिए बूँदिका का आकार 60–150 माइक्रोन मीटर संस्तुत है जबकि मिट्टी की सतह व खरपतवारनाशी के लिए 250–500 माइक्रोन मीटर संस्तुत है।

तालिका 5: विभिन्न उद्देश्यों हेतु उपयुक्त बूँदिका आकार

उद्देश्य	बूँदिका का आकार (माइक्रोन मीटर में)
उड़ते कीड़े	10–15
रेंगने एवं चूसने वाले कीड़े	30–35
पौध सतह	60–150
मिट्टी की सतह –फसल जमने से पहले खरपतवारनाशी का छिड़काव	250–500

इन बूँदिका के आकार को प्राप्त करने के लिए एक बेहद ही सरल उपकरण चंचु नलिका/नोजल का प्रयोग किया जाता है। नोजल का प्रयोग दबाव में द्रव की बूंदे एक स्वरूप में तोड़ने के लिए किया जाता है। नोजल के साधारण कार्यकारी सिद्धांत होने के बाद भी, बाजार में ये विभिन्न डिजाइन और रेंज में उपलब्ध है। एयर एटमाइजिंग नोजल सबसे छोटी बूंद के आकार का उत्पादन करते है, इसके बाद फाइन स्प्रे, हॉलो कोन, फ्लैट फैन और फुल कोन नोजल होते है। दबाव, द्रव में लगने वाले सतही तनाव और नोजल की संरचना बूँद के आकार के लिए मुख्य कारक है। इनके बदलाव होने पर निम्न लिखित प्रभाव हो सकते है:

(क) गिराव वेग बूँद आकार पर निर्भर है। छोटी बूंदों में एक उच्च प्रारंभिक वेग हो सकता है, लेकिन वेग जल्दी कम हो जाता है। बड़ी बूंद लंबे समय तक वेग बनाए रखती है और आगे की यात्रा करती हुई नीचे की ओर गिरती है।

(ख) तरल पदार्थ की सतह में तनाव वृद्धि होने पर बूँद के आकार में भी वृद्धि होती है।

(ग) उच्च दबाव के प्रभाव से छोटी बूँद निकलती है और कम दबाव से बड़ी बूँद निकलती है।

(घ) निम्न प्रवाह नोजल्स सबसे छोटी बूँदों का उत्पादन करती है और उच्च प्रवाह नोजल्स सबसे बडी बूँदों का उत्पादन करती है।

छिड़काव उपकरण के प्रकार

विभिन्न प्रकार के अनुप्रयोगों के लिए छिड़काव उपकरण के विभिन्न डिजाइन विकसित किए गए है। इसलिए छिड़काव उपकरण का उचित रूप में प्रयोग के लिए निर्माता के निर्देषों को सावधानीपूर्वक पढ़ा जाना चाहिए ताकि ये पता हो जाये कि उपकरण को किस क्षमता के लिए विकसित किया गया है, जिससे रसायन का सही मात्रा व रूप में छिड़काव किया जा सके।

1. उपयोगिता के आधार पर छिड़काव सम्बन्धी तकनीकी उपकरणों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है

(क) हस्त चलित

(ख) स्वचालित

- निम्न एचपी (160 एचपी – 250 एचपी)
- मध्यम एचपी (251 एचपी – 350 एचपी)
- उच्च एचपी (351 एचपी – 400 एचपी)

(ग) ट्रेक्टर से जुड़े

(घ) ट्रेक्टर से खींचने वाले

(ड़) हवाई विधि

2. क्षमता के आधार पर छिड़काव सम्बन्धी तकनीकी उपकरणों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है:

(क) अति निम्न आयतन छिड़काव यन्त्र (यू.एल.वी) जिनसे 5 ली. प्रति है. की दर से छिड़काव कर सकते है।

(ख) निम्न आयतन वाले छिड़काव यन्त्र (एल.वी) जिनसे 5 से 400 ली. प्रति हे. की दर से छिड़काव किया जा सकता है।

(ग) उच्च आयतन छिड़काव यन्त्र (एच.वी) जिनसे 400 ली. प्रति हे. से अधिक दर से छिड़काव किया जा सकता है।

3. फसल प्रकार के आधार पर छिड़काव सम्बन्धी तकनीकी उपकरणों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है:

(क) अनाजः मक्का, धान, गेहूं व अन्य

(ख) तिलहनः सोयाबीन, तोरिया, कैनोला, सूरजमुखी और कपास, मूंगफली, नारियल, जैतून, कनोला, कुसुम और कोपरा आदि।

(ग) फल एवं सब्जियांः फलों में आम, लीची, अनार, सेव, आदि एवं सब्जियों में फूलगोभी, पत्तागोभी, भिंडी, टमाटर, बैगन आदि।

(घ) अन्यः टर्फ घास, फूलों की खेती, स्थायी फसलें, चारागाह, घास के मैदान आदि।

4. तकनीकी आधार पर छिड़काव सम्बन्धी उपकरणों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है:

(क) हाइड्रोलिक नोजल स्प्रे तकनीक

(ख) एयर–असिस्टेड इलेक्ट्रोस्टैटिक स्प्रे तकनीक

(ग) परिवर्तनीय दर प्रौद्योगिकी (वीआरटी)

(घ) नियंत्रित छोटी बूंद आवेदन (सीडीए)

(ड़) अल्ट्रा–कम मात्रा छिड़काव तकनीक (यूएलवी)

(च) लक्षित डिस्पेंस तकनीक

(छ) अन्य सेंसर – आधारित तकनीक

बाजार में उपलब्ध स्प्रेयर को उपयोगिता के आधार पर वर्गीकरण को ध्यान में रखते हुए विशेष विवरण के साथ तालिका 6 में दर्शाया गया है।

तालिका 6: स्प्रेयर के प्रकार के आधार पर विशेष विवरण

क्र. स.	स्प्रेयर के प्रकार	शक्ति का स्रोत	टैंक आकार, (लीटर)	नोजल प्रकार	सामान्य काम के दबाव (बार इकाई में)	रसायन छिड़काव की दर, (लीटर/ मिनट)	वजन (किलोग्राम)	उपयोगिता
1.	नैपसैक हैंड स्प्रेयर	हस्त चलित	16	फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल	2–3	0.5–3.0	4–6	सब्जियां, अनाज, चाय, कॉफी आदि
2.	नैपसैक बैटरी संचालित स्प्रेयर	बैटरी चलित 8 घंटे कार्य करने में सक्षम	16–20	फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल	2–4	0.5–3.0	5–7	सब्जियां, अनाज, चाय, कॉफी आदि
3	नैपसैक पावर स्प्रेयर	स्वचालित	15–25	फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल	10–13	10–11	6–10	सब्जियां, अनाज,चाय, कॉफी के साथ –साथ बागानों, बागों और ऊंचे पेड़ो की पंक्ति में छिड़काव के लिए उपयुक्त
4	फुट एंड रॉकिंग स्प्रेयर	पैर चलित	कोई टंकी नही, 8 मीटर तक लम्बी नली	फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल	6–7	–	9–10	कपास, सोयाबीन, सब्जियां, चाय और कॉफी के बागानों, बागों और उंचे पेड़ो की पंक्ति और जमीन की फसलों के लिए उपयुक्त

क्र. स.	स्प्रेयर के प्रकार	शक्ति का स्रोत	टैंक आकार, (लीटर)	नोजल प्रकार	सामान्य काम के दबाव (बार इकाई में)	रसायन छिड़काव की दर, (लीटर/ मिनट)	वजन (किलोग्राम)	उपयोगिता
5.	ट्रैक्टर स्प्रेयर ट्रेल और माउंटेड प्रकार	ट्रैक्टर चलित	400–1000	एंटी ड्रिप डबल नोजल, 10–25 की संख्या में	6–7	36–50	150–200	ग्राउंड स्प्रे बूम के साथ–साथ कृषि फसलों में कीटनाशकों, खरपतवारनाशी और उर्वरकों के आर्थिक और प्रभावी अनुप्रयोग के लिए
6.	पावर मिस्टब्लोवर्स स्प्रेयर	स्वचालित	10–13	–	वायु वेगः 60 मीटर प्रति सेकंड	8 घन मीटर प्रति मिनट	10–55	बागों, चाय, कॉफी और अन्य फसलों में त्वरित छिड़काव के संचालन के लिए आदर्श
7.	हैंड कम्प्रेषन स्प्रेयर	हस्त चलित	3–15	–	4 बार	–	4–7	आलू, धान, जूट, मूंगफली और गन्ने में कीटों और रोगों को नियंत्रित करने के लिए छिड़काव के लिए उपयुक्त है
8.	अति निम्न आयतन स्प्रेयर	हस्त चलित	4	स्प्रे आंशिक आकार 5–50 माइक्रोन	–	0–13 लीटर प्रति घंटे	5–6	फार्म्स, नर्सरी, शेड नेट्स और ग्रीन हाउस में स्पॉट एप्लिकेशन, महंगे कीटनाशकों के छिड़काव के लिए उपयुक्त है
9.	एरियल स्प्रे	ड्रोन द्वारा	2–10	5–50 माइक्रोन	2–3	2	4–15	बागों, चाय, कॉफी और अन्य फसलों में त्वरित छिड़काव के संचालन के लिए आदर्श

नैपसैक स्प्रेयरः नैपसैक स्प्रेयर बाजार में तीन रूपों में उपलब्ध है– हस्त चलित, बैटरी चलित व स्वचालित (चित्र–1)। इन स्प्रेयर में टंकी की क्षमता 16 से 25 लीटर तक होती है और इनका वजन 4–10 किलोग्राम तक होता है। इनमें सामान्यतः फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल का उपयोग किया जाता है। हस्त और बैटरी चलित स्प्रेयर 2–4 बार के दबाव पर कार्य करते है, जबकि स्वचालित स्प्रेयर 10–13 बार के दबाव पर कार्य करते है। हाथ और बैटरी चलित स्प्रेयर द्वारा रसायन छिड़काव की दर 0.5–3.0 लीटर प्रति मिनट होती है वही जबकि स्वचालित स्प्रेयर के रसायन छिड़काव की दर 10–13 लीटर प्रति मिनट होती है। उपयोगिता के आधार पर यदि देखा जाये तो हाथ और बैटरी चलित स्प्रेयर का उपयोग कम उंचाई तक जाने वाली फसलें जैसे सब्जियां, अनाज, चाय, कॉफी आदि में होता है, जबकि स्वचालित स्प्रेयर का प्रयोग बागानों, बागों और ऊंचे पेडों की पंक्ति में भी किया जा सकता है।

(क) हस्त चलित नैपसैक स्प्रेयर'

(ख) बैटरी चलित नैपसैक स्प्रेयर'

(ग) स्वचालित नैपसैक स्प्रेयर

चित्र 1. नैपसैक स्प्रेयर के प्रकार (स्त्रोत : ASPEE website)

फुट एंड रॉकिंग स्प्रेयरः फुट एंड रॉकिंग स्प्रेयर को पैरों द्वारा चलाया जाता है और टंकी नही होती है और इनका वजन 9–10 किलोग्राम तक होता है (चित्र–2)। इनमें लगभग 8–10 मीटर लम्बी नली होती है जिसका प्रयोग दूर तक छिड़काव के लिए प्रयोग में किया जाता है। इनमें सामान्यतः फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल का उपयोग किया जाता है। ये स्प्रेयर 6–7 बार दबाव पर कार्य करते हैं। इन स्प्रेयर का प्रयोग कपास, सोयाबीन, सब्जियां, चाय और कॉफी के बागानों, बागों और ऊंचे पेड़ो की पंक्ति और जमीन की फसलों के लिए उपयुक्त होता है।

चित्र 2. फुट एंड रॉकिंग स्प्रेयर

ट्रेक्टर चलित स्पेयरः ट्रेक्टर कृषि कार्यो के लिए एक प्रमुख शक्ति का स्त्रोत है जिसका अनेक कृषि कार्यो में प्रयोग होता है। इनका प्रयोग रसायन छिड़काव के लिए भी किया जाता है। ट्रेक्टर से चलने वाले स्प्रेयर को दो रूपों में ट्रेक्टर से जोड़ कर और ट्रेक्टर से खींच कर चलाया जाता है (चित्र–3)।

चित्र 3: हाई क्लीयरेंस ट्रैक्टर चलित बूम स्प्रेयर

इन स्प्रेयर की टंकी की क्षमता 400–1000 लीटर तक होती है। इनमे एंटी ड्रिप डबल नोजल का प्रयोग लगभग 10–25 की संख्या में एक पंक्ति में किया जाता है जिसे बूम कहतें है। ये नोजल 6–7 बार के दबाव पर कार्य करते है। इनके द्वारा रसायन छिड़काव की दर 36–50 लीटर प्रति मिनट तक होती है। ये उच्च आयतन छिड़काव के लिए उपयुक्त है। इस तरह के स्प्रेयर का वजन 150–200 किलोग्राम तक होता है। ट्रेक्टर से चलने वाले स्प्रेयर की क्षेत्र क्षमता अधिक होती है। इन स्प्रेयर का प्रयोग ग्राउंड स्प्रे बूम के साथ–साथ कृषि फसलों में कीटनाशकों, खरपतवारनाशकों और उर्वरकों के आर्थिक और प्रभावी अनुप्रयोग के लिए होता है।

पावर मिस्टब्लोवर्स एंड डस्टरः पावर मिस्टब्लोवर्स एंड डस्टर स्वचालित होते है (चित्र 4 (क))। इनकी टंकी की क्षमता 10–13 लीटर तक होती है। ये रसायन को द्रव या चूर्ण के रूप में छिड़क सकते है। इन स्प्रेयर से रसायन को बड़ी तेज 60 मीटर प्रति सेकंड की गति से निष्कासित किया जाता है। इस तरह के स्प्रेयर का वजन 10–55 किलोग्राम तक होता है। ये स्प्रेयर त्वरित छिड़काव के लिए आदर्श माने जाते है।

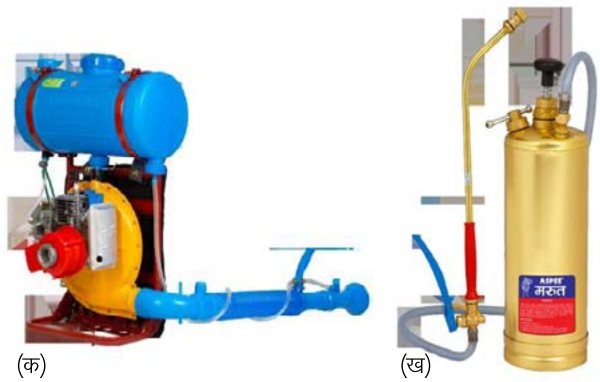

चित्र 4: पावर मिस्टब्लोवर्स एंड हैड कम्प्रेशन स्प्रेयर

हैंड कम्प्रेशन स्प्रेयरः हैंड कम्प्रेषन स्प्रेयर हस्त चलित होते है और इनकी टंकी की क्षमता 3–15 लीटर तक होती है (चित्र 4 (ख))। ये स्प्रेयर 4 बार के दबाव पर कार्य करते है और इनका वजन 4–7 किलोग्राम तक होता है। इनका प्रयोग आलू, धान, जूट, मूंगफली और गन्ने में कीटों और रोगों को नियंत्रित करने के लिए छिड़काव के लिए उपयुक्त होता है।

अति निम्न आयतन स्प्रेयर (यू एल वी): अति निम्न आयतन स्प्रेयर हस्त चलित होते है और इनकी टंकी की क्षमता 4 लीटर तक होती है (चित्र 5)। इन स्प्रेयर के नोजल द्वारा 5–50 माइक्रोन मीटर की बूँदिका के आकार को प्राप्त किया जा सकता है। इनके द्वारा रसायन के छिड़काव करने की दर 0–13 लीटर प्रति घंटे तक हो सकती है। इस तरह के स्प्रेयर का वजन सामान्यतः 5–6 किलोग्राम तक होता है। महंगे कीटनाशकों के स्पॉट छिड़काव के लिए, इस तरह के स्प्रेयर का प्रयोग खेत, नर्सरी,

चित्र 5. अति निम्न आयतन स्प्रेयर (यू एल वी)

शेड नेट्स और ग्रीन हाउस आदि जगहों में होता है।

एरियल स्प्रेः ड्रोन खेत में निश्चित मात्रा में कीटनाशक का छिड़काव के लिये ड्रोन का प्रयोग किया जा सकता है (चित्र 6)। ड्रोन का प्रयोग करके कीटनाशकों का छिड़काव पारम्परिक मशीनों की तुलना में लगभग पांच गुना तेजी से किया जा सकता है। दुनियां के कई देशों जैसे अमेरिका, इंग्लैंड, चीन आदि में ड्रोन का प्रयोग कीटनाशकों के छिड़काव के लए आरम्भ कर दिया है। हमारे देश में भी ड्रोन का कीटनाशकों के छिड़काव के लिए प्रयौग किया जाता है। इस तरह के स्प्रेयर के टंकी का आयतन 2–10 लीटर तक हो सकता है। इनके नोजल 2–3 बार दबाव पर काम करते है और 5–50 माइक्रोन मीटर की बूँदिका के आकार को निकालते है। स्प्रे पंप को ड्रोन की बैटरी द्वारा संचालित किया जाता है। ड्रोन स्प्रेयर का कुल वजन 4–15 किलोग्राम तक हो सकता है। इनका प्रयोग बागों, चाय, काफी और अन्य फसलों में त्वरित छिड़काव के लिए उपयुक्त होता है। ड्रोन एक बार में 10–15 मिनट की उड़ान भर सकता है।

चित्र 6. कीटनाशक का ड्रोन छिड़काव

स्प्रे नोजल के प्रकार :–

स्प्रे नोजल की विशेषताएं कई कारकों पर निर्भर करती है जैसे कि प्रकार, दबाव, दूरी, स्प्रे कोण, आफसेट कोण, स्प्रे पैटर्न गुणवत्ता, बहाव और आच्छादन। स्प्रे के चयन के समय इन कारकों को ध्यान में रखना चाहिए। एक नोजल के व्यापन (छिड़काव–चौड़ाई/क्षेत्र) की एक निश्चित सीमा होती है और अधिक व्यापन चौड़ाई को पाने के लिए नोजल को एक समूह में सीधी रेखा में लगाकर एक बूम का निर्माण किया जाता है। बूम के रसायन वितरण की गुणवत्ता भी कई कारकों पर निर्भर करती है जैसे कि नोजल प्रकार, बूम उंचाई, नोजल का घिसाव दर, दबाव में कमी, बूम की स्थिरता, हवा की गति व दिशा, स्प्रेयर की गति और उसके द्वारा होने वाले विक्षोभ आदि।

नोजल द्रव को छोटी–छोटी बूंदों में परिवर्तित करने के लिए मुख्यतः दो सिद्धांतों हाइड्रोलिक और एयर ऑटोमाइजेशन पर कार्य करते है। हाइड्रोलिक ऑटोमाइजशन को पाने के लिए द्रव को नोजल के सूक्ष्म छिद्र से उच्च दाब में प्रवाहित किया जाता है जिसके फलस्वरूप पानी को बहुत छोटी–छोटी बूंदों में तोड़ दिया जाता है, जबकि एयर ऑटोमाइजेशन प्रक्रिया में सम्पीड़ित हवा और निम्न दाब पर पानी को नोजल के सूक्ष्म छिद्र में से प्रवाहित किया जाता है जिसके फलस्वरूप पानी को बहुत छोटी–छोटी बूंदों में तोड़ दिया जाता है। इस प्रक्रिया में प्राप्त बूंदों का आकार हाइड्रोलिक ऑटोमाइजेशन की तुलना में छोटा होता है।

हाइड्रोलिक ऑटोमाइजेशन सिद्धांत पर कार्य करने वाले नोजल बनावट में सरल व सस्ते होते है। इन नोजल्स की परिचालन लागत भी कम पड़ती है। हालांकि उच्च दाब की आवश्यकता के चलते अधिक विद्युत उर्जा की खपत होती है और पम्प के पुर्जे जल्दी घिस जाते है। इस तरह के नोजल को ठीक से काम करने के लिए यह जरूरी हो जाता है कि पानी की गुणवत्ता अच्छी हो और नोजल जाम न हो। इस तरह के नोजल का प्रदर्शन कम वायु विक्षोभ की अवस्था में उत्तम रहता है। एयर ऑटोमाइजेशन सिद्धांत पर कार्य करने वाले नोजल आकार में बड़े होते है। इनमे नोजल अवरूद्धता की शिकायत नहीं आती है।

परिचालन स्थितियां निर्धारित करती है कि कौन सी नोजल का प्रकार और स्प्रे वितरण सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन दिखायेगा। नोजल्स को बूंदों के वितरण के स्वरूप के आधार पर मुख्यतः चार प्रकार में बांटा जा सकता है:

- हॉलो कोन नोजल
- फुल कोन नोजल
- फ्लैट फैन नोजल
- सॉलिड स्ट्रीम नोजल

इन नोजलों के कार्य करने के तरीके को चित्रमय प्रस्तुति के साथ चित्र 7 में दर्षाया गया है।

चित्र से यह स्पष्ट है कि हॉलो कोन, फुल कोन, फ्लैट फैन, सॉलिड स्ट्रीम नोजल से निकले वितरण का स्वरूप क्रमशः वृत्ताकार वलय, पूर्णतः गोल वलय, उत्तल संकुचित किनारों एवं सीधी धारा के रूप में होता है। नोजल के वितरण स्वरूप का परिक्षण स्प्रे पैटर्नेटर यन्त्र द्वारा किया जाता है। हॉलो कोन, फुल कोन, फ्लैट फैन व सॉलिड स्ट्रीम नोजल की पहचान स्प्रे पैटर्नेटर यन्त्र द्वारा प्राप्त वितरण स्वरूप को देखकर पता लगाया जा सकता है। इसके साथ ही इस परिक्षण से नोजल में होने वाले दोष को मानक वितरण स्वरूप से तुलना करके पता लगाया जा सकता है।

हॉलो कोन नोजल की विशेषताएं

इस तरह के नोजल्स पानी की छोटी–छोटी बूंदो का वृत्ताकार वलय बनाते है। इन नोजल में छिद्र बड़ा होने के वजह से अवरूद्धता की शिकायत कम होती है। इन नोजल द्वारा पैदा की गयी बूंदों का आकार अन्य नोजल की तुलना में छोटा होता है। सामान्यतः इस तरह के नोजल्स को धूल के कणों को नीचे गिराने के लिए प्रयोग किया जाता है।

फुल कोन नोजल की विशेषताएं

इस तरह के नोजल से छोटी–छोटी बूंदें पूर्णतः गोल वलय के स्वरूप में बाहर निकलती है। बूंदो का वेग दूरी तय करने के साथ बढ़ता जाता है। इन नोजल से बूँदें मध्यम व बड़े आकार की उत्पन्न की जाती है। इन नोजल को भी धूल के कणों को नियंत्रित करने के लिए उपयोग में लाया जाता है।

फ्लैट फैन नोजल की विशेषताएं

ये नोजल रसायन की छोटी–छोटी बूंदों के वितरण स्वरूप को उत्तम संकुचित किनारों, आयताकार अथवा समरूप में बाहर निकालते है। इन नोजल द्वारा बूंदो का आकार छोटे से मध्यम आकार का होता है। इन नोजल का प्रयोग संकीर्ण या आयताकार स्वरूप के स्थानों पर किया जाता है। फ्लैट फैन नोजल कृषि क्षेत्र में साधारण संरचना व सस्ता होने के कारण सबसे ज्यादा प्रयुक्त होने वाला नोजल है। इन नोजल का प्रयोग मुख्य रूप से कीटनाशक रसायन के बैंडिंग (पंक्तियों के बीच और उपर) और प्रसारण अनुप्रयोगों के लिए प्रयोग किया

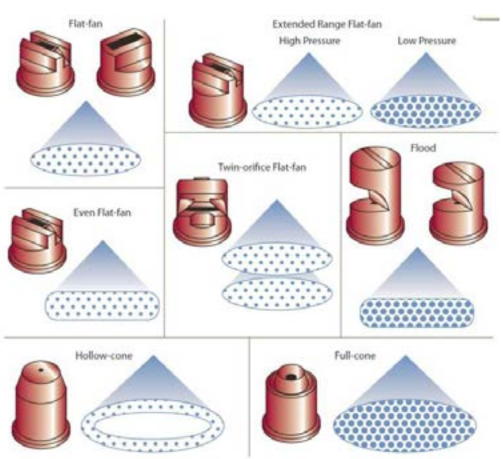

चित्र 7. नोजल के कार्य करने के तरीके का विवरण

जाता है। अधिक व्यापन के लिए इन नोजल को बूम के रूप में निश्चित प्रतिशत के अंशदान के साथ प्रयोग में लाया जाता है। फ्लैट फैन नोजल को बूम के रूप में निश्चित प्रतिशत के अंशदान के साथ प्रयोग में लाया जाता है। फ्लैट फैन नोजल कई संरचनाओं के साथ विभिन्न श्रेणियों में आता है जैसे कि मानक फ्लैट फैन नोजल, सम फ्लैट फैन नोजल, निम्न दाब फ्लैट फैन नोजल, द्विछिद्र फ्लैट फैन नोजल आदि। इन नोजल की नई संरचनाएं भी तैयार की गयी है जैसे कि टर्बो, फ्लड, रेनड्राप, एयर इंडक्शन नोजल जिनमें वायु प्रवाह द्वारा बूंदो के बहकर ले जाने से रोकने की क्षमता है। साधारण फ्लैट फैन नोजल 2–3 बार पर कार्य करते है। नोजल के व्यापन चौड़ाई को बढ़ाने के लिए उंचाई और स्प्रे कोण को बदला जा सकता है। फ्लैट फैन नोजल मुख्यतः 65, 80 और 110 डिग्री स्प्रे कोण में आते है। नोजल और लक्ष्य तक के बीच की दूरी को नोजल ऊंचाई कहते है और लक्ष्य मिट्टी की सतह, फसल सतह और फसल अवशेष हो सकते है। नोजल की 30 इंच तक की उंचाई तक उपयोग में लाने के लिए नोजल छोटी बूंदों का उत्पादन करते है जिस वजह से वायु विक्षोभ से प्रभावित होने की संभावना होती है अतः इन्हें अधिक उंचाई पर प्रयोग में नहीं ला सकते है। इसलिए नोजल और लक्ष्य के बीच अधिक ऊंचाई पर 65 या 80 डिग्री का स्प्रे नोजल को प्रयोग में लाना चाहिए।

सॉलिड स्ट्रीम नोजल की विशेषताएं

ये नोजल रसायन की छोटी–छोटी बूंदों के वितरण स्वरूप को एक सीधी धारा के रूप में बाहर निकालते है। इस तरह से ये नोजल विक्षोभ रहित प्रवाह को प्राप्त करने में सफल होता है। इनका प्रयोग तरल उर्वरकों को फसल के उपर से छिड़काव के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

स्प्रे नोजल चयन के लिए विशेषताएं

वांछित कीटनाशक का छिड़काव करने के लिए स्प्रे नोजल का सही चुनाव करना अति महत्वपूर्ण है। सटीक नोजल के प्रकार का चुनाव व क्षमता निर्धारित करने के लिए निम्न बिन्दुओं का पालन करना चाहिए।

क) सर्वप्रथम, कीटनाशक के डिब्बे पर अंकित जानकारी को पढ़ना चाहिए जैसे कि छिड़काव की दर व नियंत्रित होने वाले कीट, जरूरी बूँदिका आकर व नोजल का प्रकार। यदि जानकारी पट्टिका पर नोजल का प्रकार अंकित नहीं है तो बूँदिका आकार से नोजल का चुनाव करें।

ख) अब यह निर्णय ले कि छिड़काव किस तरह के यन्त्र से करना है और उसका शक्ति स्त्रोत क्या है जैसे कि हस्त चलित, बैटरी चलित, स्वचालित स्प्रेयर या ट्रेक्टर से जोड़ कर या खींच कर आदि। इसके बाद कार्यकारी स्थितियों का निर्धारण करें जैसे कि छिड़काव गति, नोजल से नोजल की दूरी, नोजल से लक्ष्य की दूरी व नोजल की छिड़काव दर। इन कारकों के चुनाव से वायु विक्षोभ का प्रभाव, क्षेत्र क्षमता और कीटनाशक प्रभावकारिता का निर्धारण होगा।

खंड- स

भारत में कुपोषण की स्थिति

अरूणिमा कुमारी, कुमारी स्मिता एवं रीचा कुमारी
डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, (बिहार)

हमारा शरीर स्वस्थ रहने तथा दैनिक कार्यों के लिए भोजन से ऊर्जा एवं पोषक तत्व जैसे प्रोटीन वसा, विटामिन, कार्बोहाइड्रेट तथा खनिजों को प्राप्त करता है लेकिन जब हम भोजन एवं पौष्टिक पदार्थों का सेवन अनियमित एवं अव्यवस्थित रूप से करने लगते हैं तो हमारे शरीर को पूर्ण पोषण नहीं मिल पाता और हम कुपोषण के शिकार हो जाते हैं।

कुपोषण के प्रकार

मानव शरीर में उपस्थित पोषक तत्वों के आधार पर कुपोषण को दो भागों में बांटा जा सकता है

(क) अल्प पोषण– अल्प पोषण में मानव शरीर में एक या फिर एक से अधिक पोषक तत्वों की कमी हो जाती है।

(ख) अति पोषण– पोषक तत्वों की अधिकता के कारण मानव शरीर में उत्पन्न विकृतियाँ (जैसे– पेट का बाहर आना इत्यादि अति पोषण को परिभाषित करता है।

बच्चों में कुपोषण के लक्षण

विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा यूनिसेफ ने कुपोषण के पहचान के लिए निम्नलिखित तीन लक्षणों को मुख्य माना है–

- नाटापन– जब बच्चे की लम्बाई उसकी आयु की अनुपात में कम हो तब बच्चा नाटा कहलाता है।
- निर्बलता– जब बच्चे का वज़न उसके लम्बाई के अनुपात में कम हो तब बच्चा निर्बल कहलाता है।
- कम वज़न– जब आयु के अनुपात में बच्चे का वजन कम हो तब बच्चा अंडरवेट कहलाता है।

कुपोषण के कारण

कुपोषण के कुछ प्रमुख कारण निम्नलिखित हैंरू–

- अपर्याप्त आहार
- भोजन में पौश्टिक तत्वों की कमी
- धार्मिक कारण
- आर्थिक कारण
- ज्ञान का अभाव
- अवशोषण एवं दोषपूर्ण पाचन
- भोजन संबंधित दोषपूर्ण आदतें
- अत्यधिक शराब का सेवन
- लिंग भेद
- बाल विवाह

निष्कर्ष

कुपोषण से बचने के लिए भोजन में गेंहू, चावल, मोटे अनाज (कदन्न), दाल एवं हरी पत्तेदार सब्जियां, फल, सलाद, दूध, अंडा, मीट, मछली एवं कम मात्रा में मसाले लेना चाहिए। कुपोषण से बचने के लिए बच्चो, महिलाओ, वयस्कों एवं वृद्धों को पर्याप्त एवं संतुलित भोजन लेना चाहिए तभी कुपोषण से बचा जा सकता है। भुखमरी सूचकांक 2021 में कुल 116 देशों में भारत का स्थान 101वाँ है। भारत ने अपने पड़ोसी देशों पाकिस्तान (99वें), नेपाल (81वें) और बांग्लादेश (84वें) की तुलना में खराब प्रदर्शन किया है। जो स्पष्ट करता है कि भारत की एक बहुत बड़ी आबादी को दो वक़्त की रोटी भी नसीब नहीं होती है जिस कारण वो कुपोषण से पीड़ित हैं। हालांकि भारत सरकार एवं राज्य सरकारों द्वारा अनेक योजनाएं बनाकर इसे नियंत्रित करने का प्रयास किया जा रहा है परंतु वैश्विक भुखमरी सूचकांक एक अलग ही चित्र प्रदर्शित करता है। 2020 में वैश्विक भुखमरी सूचकांक में भारत 94वें स्थान पर था, किन्तु 2021 में इसका स्थान बढ़कर 101वाँ हो गया है। 14 अक्टूबर 2022 को जारी ग्लोबल हंगर इंडेक्स (GHI) 2022 में भारत को 121 देशों में से 107वां स्थान दिया गया है।

रतनजोत एक विषाक्त पौधा : जागरूकता आवश्यक

चन्द्रशेखर खरे[1], जितेन्द्र कुमार खरे[2]
[1.] कृषि विज्ञान केन्द्र– जांजगीर–चांपा (छ.ग.)
[2.] कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंन्द्र–जांजगीर–चांपा (छ.ग.)

भारत देश के विभिन्न जिलों में आए दिन रतनजोत के सेवन से बच्चे गंभीर होने की घटना में दिन प्रति दिन इजाफा हो रहा है वहीं छत्तीसगढ़ के जांजगीर–चांपा जिले सहित वर्तमान में 2013–17 के दौरान केवल छ.ग./म.प्र. के अनेक जिलों में 146 बार ऐसी घटना दैनिक समाचार पत्रों द्वारा प्रकाष में आई हैं। बच्चों में रतनजोत की विषाक्ता पर जागरूकता लाना अति आवश्यक है क्योंकि अज्ञानतावश बच्चे पुष्प एवं फल की बनावट से उत्सुकताश रतनजोत को खा जाते हैं जिससे समाज एवं बचपन को क्षति हो रही है एवं हमारे देश का भविष्य खतरे में है। हमारे देश में जानबूझकर या अनजाने में लाये गये बहुत से विदेशी मूल के पौधे आज पारिस्थितिकी के लिए हानिकारक साबित हो रहे हैं जैसे आस्ट्रेलियाई मूल का यूकेलिप्टस जिसे कभी "हरा सोना" की संज्ञा दी गई थी आज उसके दुष्प्रभावों के कारण इसे पारिस्थितिक आतंकवादी घोषित किया है। अज्ञानता और उचित इलाज के अभाव में बच्चों में शारीरिक विकृति, यहां तक की मृत्यु तक हो सकती है।

क्या है रतनजोत (बगरण्डा) आइये जानें:–

परिचय:– रतनजोत एक वनस्पति की प्रजाति है,जो मैक्सिकों एवं दक्षिण अमेरिकीय मूल की पौधा है इसे वन रेड एवं सफेद अरण्ड के नाम से भी जाना जाता है पूरे विश्व में जेट्रोफा की 175 प्रजाति पायी जाती हैं।

वैज्ञानिक नाम:– *जेट्रोफा करकस* जो कि उष्णकटिबंधीय सदाबहार मुलायम काष्ठ वाला झाड़ीनुमा वनस्पति है यह पुष्पीय पौधा यूफोर्बियेसी कुल का पौधा है। स्वस्थ पौधे की उंचाई करीब 3–4 मीटर तक होती है इसकी पत्तियों हृद्याकार होती है वर्ष के सितंबर–अक्टूबर माह में पुष्प प्रकट होते हैं, यह कीट परागित वनस्पति है इसके फल हरे होते हैं जो पकने के पष्चात काले हो जाते हैं प्रत्येक फल में 3–4 बीज होते है।

स्थानीय नाम:– रतनजोत, बगरण्डा, जंगली अरंडी, बंगरेड़, जमाल घोटा आदि नामों से छ.ग. में जाना जाता है साथ ही 40 से 45 प्रतिशत तेल प्रतिशतता के कारण इसे बायोडीजल के रूप में रोपित किया जा रहा है।

रतनजोत की आक्रमकता :–

- रतनजोत एक अत्यंत ही कठोर प्रवृत्ति का पौधा होता है जो किसी भी प्रकार की मिट्टी में उगने की क्षमता रखता है इसकी वृद्धि दर अत्यंत ही तीव्र होती है इसमें प्रचुर प्रजनन क्षमता होती है यह कायिक प्रजनन से भी अपने को विस्तार करने की क्षमता धारण करता है, भारत में इसका कोई भी प्राकृतिक शत्रु नहीं है और शाकभक्षी पौधे भी इस पौधे का तिरस्कार करते हैं।
- रतनजोत जिस स्थान पर उगता है या उगााया जाता है वहां अपना एकाधिकार स्थापित कर लेता है इसी गुण के कारण भविष्य में यह पौधा देश में खतरनाक खरपतवार का विकराल रूप धारण कर सकता है जिससे पारिस्थितिक तंत्र को भारी क्षति हो सकती है।

जागरूकता हेतु ध्यान देने योग्य उपाय:–

- बच्चों के माता–पिता, पालकों, शिक्षकों, आंगनबाड़ी कार्यकताओं, सामाजिक कार्यकताओं एवं विद्यार्थियों सहित सभी से विनम्र अपील है रतनजोत या बगरण्डा विषाक्त जहरीला पौधा है इसे न खायें इस पर अपने अपने स्तर पर जागरूकता लाने चर्चा करने की नितांत आवश्यकता है।

- यदि किसी बच्चे में सांस लेने में तकलीफ हो या जी मचले या पेट में जलन होने की षिकायत या अत्याधिक गैंस बनने, आंखो में धूंधलापना छा जाना, लाल दिखना, पेट फूलना, चक्कर आना जैसे लक्षण दिखे या लगे तुरंत अपने परिजन एवं नजदीकी डाक्टर के पास ले जाये, सूचना दें।
- बच्चे रतनजोत अज्ञानता से लेते हैं, इस विषय पर हमें उन्हें जागरूक करने की आवश्यकता हैं।
- चिकित्सकीय ईलाज से ही भयावह स्थिति में बचा जा सकता है।

रतनजोत पर वैज्ञानिक पहलूः–

- ⊙ भारत में रतनजोत का अंधाधुंध रोपण पारिस्थितिक दृष्टिकोण से अदुरदर्षी कदम...

  डॉ. अरविंद सिंह, इं.गा.कृ.वि.वि. रायपुर

- ⊙ रतनजोत बेहद नुकसानदेह है इसमें पाये जाने वाले करसिन की मारक क्षमता इस हद तक है कि इसका इस्तेमाल जैविक हथियार बनाने में किया जाता है।

  डॉ. पंकज अविधिया, इं.गा.कृ.वि.वि. रायपुर

- ⊙ रतनजोत एक विषपौधा है इससे भारतीय वानस्पतिक जैवविविधता को क्षति पहुंचाने के साथ सुदूर आदिवासी

छत्तीसगढ़

रतनजोत बीज खाकर 40 बच्चे हुए बीमार

डोंगरगढ़ | डोंगरगढ़ ब्लॉक के ग्राम सहसपुर में गुरुवार को रतनजोत के बीज खाने से 40 बच्चे बीमार पड़ गए। एक साथ इतने बच्चे बीमार पड़ने पर गांव में हड़कंप मच गया। बच्चों को इलाज के लिए डोंगरगढ़ हॉस्पिटल में भर्ती किया गया। डॉक्टरों ने जांच के बाद बताया कि सभी बच्चों की हालत सामान्य है। शाम 4 बजे प्राइमरी और मिडिल स्कूल की छुट्टी होने के बाद बच्चे रतनजोत के बीज खा लिए। पहले दो-तीन बच्चे खाने लगे, उन्हें देखकर बाकी भी खाना शुरू कर दिए। करीब 7 बजे से बच्चों की तबियत बिगड़नी शुरू हो गई।

रतनजोत बीज खाने से 42 बच्चे गंभीर

डोंगरगढ़ @ पत्रिका. समीप ग्राम मोहारा के पास स्थित ग्राम पंचायत सहसपुर में रतनजोत का फल खाने से प्रायमरी व मिडिल स्कूल के 42 बच्चे गंभीर अवस्था में डोंगरगढ़ सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र में भर्ती कराये गये।

  अंचलों के भविष्य तथा जीवन को भी खतरा उत्पन्न हो गया है।

  डॉ. चन्द्रशेखर खरे, कृषि वैज्ञानिक (प्रक्षेत्र प्रबंधक) शस्य विज्ञान

रासायनिक नियंत्रणः–

1. रतनजोत विषपौध से ग्रसित खेतों या क्षेत्रों में ग्लाइफोसेट का छिड़काव करें।

यांत्रिकीय नियंत्रणः–

1. अधिकाधिक रतनजोत उपजे क्षेत्र में इसे उखाड़कर जलाउ लकड़ी के रूप में उपयोग करें।

रिफ्रेंस के लिए प्रकाशित समाचार जागरूकता हेतु .....

छत्तीसगढ़ (18 अक्टूबर 2017) के कोरबा जिले में जिला कार्यक्रम अधिकारी ने आंगनबाड़ी कार्यकर्त्ता सहायिकाओं को जमकर फटकार लगाई है दरअसल फल के धोखे में रतनजोत खाकर बीमार पड़े आंगनबाड़ी केंद्र के बच्चों की सुरक्षा में कोताही रते जाने को लेकर उन्होंने सख्त हिदायत दी है–महिला एवं बाल विकास विभाग ने जिले के सभी आंगनबाड़ी केंद्रों के कार्यकर्ताओं को हिदायत नोटिस जारी कर हिदायत दी गई है– इस दौरान आंगनबाड़ी केंद्रों के आसपास मौजूद तमाम विषैले पौधों की कटाई करने के साथ साथ बच्चों पर नियमित नज़र रखने का निर्देश जारी किया है–गौरतलब है कि बीते बुधवार को करतला ब्लॉक के ग्राम चैनपुर सौरापारा में संचालित आंगबाड़ी केंद्र के 9 बच्चे रतनजोत खाकर बीमार हो गए थे– आनन फानन में सभी बीमार बच्चों को इलाज के लिए अस्पताल ले जाया गया था– जहां इलाज के बाद सभी की हालत सामान्य हो गई है बहरहाल– मामले में महिला एवं बाल विकास विभाग के जिला कार्यक्रम अधिकारी आनंद प्रकाश किस्पोट्टा ने कहा कि आंगनबाड़ी केंद्रों के आसपास लगे सभी झाड़ फ़ानूस को साफ करने का आदेश दिया है–उन्होंने कहा कि पहले से भी सफाई अभियान के तहत ये कार्रवाई प्रचलन में है– हालांकि रतनजोत के पौधों को लेकर अलग से कोई निर्देश जारी नहीं किया गया था– लेकिन बीते दिनों की घटना को देखते हुए सरपंच और अन्य स्थानीय लोगों के समन्वय कर इस पर कार्रवाई की जाएगी।

वृक्ष की अभिलाषा (कविता)

धर्मेन्द्र कुमार खरे,
संयुक्त जन जागरूकता अभियान–पामगढ़
जांजगीर, चांपा (छ.ग.)

मैं ही द्वार कुटी का तेरे,
और कृषक का चीर साथी,
शैशव में पलना हूं तेरा,
श्वासों का अंतिम साथी,
मैं उदर भोजन भूखों का,
सुषमा का आकार सुमन,
मानव एक निवेदन तुमसे,
नष्ट न करना मेरा जीवन......

पूसा, बिहार–कृषि शिक्षा की जन्मस्थली (कविता)

सुनील कुमार
डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा
समस्तीपुर (बिहार)

माँ सीता मिथिलांचल की, जगत की है ये शान,
फिप्स हेनरी यू.एस.ए. को तब आया इसका ध्यान।
विश्व मानचित्र के शिखर पे पाया हमने स्वाभिमान,
जब जनक विदेह की धरा पर पूसा हुआ उदयमान।
सन् 1947 में अपना देश हुआ था आजाद मगर,
इससे पूर्व ही विश्व में फैल गया पूसा का मान।
इसके पूर्व की गरीमा को सुनो लगा कर ध्यान,
समझोगे क्यूँ है विश्व में पूसा की ख्याति सम्मान।
अंग्रेजी के चार शब्दों के मेल से बना है पूसा नाम,
फिप्स हेनरी यू.एस.ए. का था वो व्यक्ति शौर्यवान।
1784 में पूसा बना सैनिकों का अश्व प्रजनन संस्थान,
स्थापित किया जिसे ईस्ट इंडिया कम्पनी ने आलीशान।
1905 में फिप्स ने पूसा को दिया कृषि शोध संस्थान,
ऐसी सौगात देख किसान के चेहरे पे आयी मुस्कान।
1934 के भुकम्प ने किया बिहार को अति लहुलुहान,
ध्वस्त हुआ पूसा की संस्था रहा न नौलखा संस्थान।
इस त्रासदी को देख चिन्तित हुए सारे विद्वान,
1936 में तब पूसा ने किया दिल्ली को प्रस्थान।
1970 में पूसा कृषि विश्वविद्यलय बना प्रथम राष्ट्रपति के नाम,
श्री जननायक कर्पुरी जी की सेवा का था यह परिणाम।
कृषि विश्वविधालय पूसा का है मात्र यही अरमान,
कृषि, शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसार है जिसकी जान।
अन्तराल के बाद अवतरित हुआ एक ऐसा नेता महान,
जिनका नाम है राधा मोहन सिंह जो है बिहार की शान।
झोंक दिया अविरल तन–मन, दिन–रात बिना किए विश्राम,
2016 में राज्यस्तरीय विश्वविद्यालय को बना दिया राष्ट्रीय संस्थान।
विश्व विजयी बन कर आयी जग में है पूसा श्रीमान,
आन, बान और शान जिसकी रही है प्राचीन पहचान।
आओ मिल–जूल कर हम गाऐ पूसा का गौरव गान,
जय हो पूसा, जय बिहार हो, जय हो हिन्दुस्तान।

खेती से क्यो भाग रहें है लोग? (कविता)

जी.आर. डोंगरे,
भाकृअनुप– खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

खेती से क्यो भाग रहें है लोग?
क्या खेती का कार्य कठिन है?
क्या खेती का कार्य लाभविहीन है?
या कहें कृषक परंपरागत खेती में ही लीन है?
या कहें कृषि क्षेत्र में घट रही जमीन है?
या कहें ग्रामीण परिवेश ही दिशाहीन है?
या कृषक संसाधनों में दीन हीन है?
या कृषक परिवार कर्ज महामारी से गमगीन है
या मनरेगा जैसी योजनाओं से मजदूर हीन है
या शहरों की ओर पलायन का सीन है
खेतीहर भूमि की जोत दिनोंदिन घट रही है
शहरीकरण से जमीन क्रांकीट से पट रही है
जैव विविधता और हरियाली घट रही है
कृषि लागत से किसान की हिम्मत घट रही है
मौसम की मार से खेती आमद घट रही है
मंहगाई चढ़ रही है पर अनाज पुराने रेट पर ही बट रहीं हैं
किसान धरती का भगवान धनहीन है
दलाल, व्यापारी तिजौरी भरने में लीन है
इसलिए किसान को शहर की जिंदगी भाने लगी है

गॉव छोड़कर आधी अबादी शहर आने लगी है
कल कारखानों की जिंदगी रास आने लगी है
धरती पुत्र किसान की मां धरती से अब दूरी है
थोड़े से रूपयो की नौकरी बस जरूरी है
नौकरी से निश्चिन्तता की आस है विश्वास है
खेती की अनिश्चित्ता से किसान निराश है
इसलिए तो अभाव के नींद से जाग रहे हैं लोग
शहरों की ओर अंधाधुंध भाग रहें हैं लोग
सरकार भी योजनाओं से कोशिश कर रही है
आमद दुगनी कर किसान की झोली भर रही है
खेती की उपजाऊ प्राकृतिक रूप से बनाना होगा
नवीन तकनीक को अपनाना होगा
खाद, बीज, सिंचाई ठीक करना होगा
अनाज का भण्डारण, विपणन सुधारना होगा
फसल का जब उचित मूल्य पर विक्रय होगा
प्राकृतिक अपदाओं का उचित प्रबंधन होगा
तभी कृषि का उपवन सुंदर चमन होगा
तभी भारत का किसान सुख से जागेगा
और शहर से गॉव की ओर फिर से भागेगा।

घास की आत्मकथा

मुकुन्द कुमार
भाकृअनुप– भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उ.प्र.)

घास–जात हम, अपना कोई भरम नहीं है, माटी पकड़े आए हैं, माटी ही हमें बचाएगी

अपनी जड़ से जड़ता को तोड़ते, हर किसी से जोड़ते बनके खयाली।
गर्मी की कठिन लपट–लू में भी हम सहेजकर रखते हैं अपनी हरियाली।।
घास–जात होते हुए भी, हाथी से लेकर चींटी तक हमें खाएगी।
माटी पकड़े आए हैं, माटी ही हमें बचाएगी।।

जीवन–मरण का समय हो,सूखा में हम हरियाली के अपवाद हैं।
मरुस्थल या खण्डहर में उग आने की विलक्षण क्षमता का भी अपना स्वाद है।।
हमारी तुच्छ पहचान हमारे ही बलबूते प्रसिद्धि पाएगी।
माटी पकड़े आए हैं, माटी ही हमें बचाएगी।।

घास–जात हम, बुनते रहना है हमको, धरती के मन की हरीतिमा।
अपना कोई भरम नहीं है, घृणा–बैर का हमारा कोई करम नहीं है।।
हम खर है, हमारे पतवार से ही सबके जीवन में खुशहाली आएगी।
माटी पकड़े आए हैं, माटी ही हमें बचाएगी।।

आदत है कठिनाइयों में हमको जीने की, हमको मंजूर नहीं जिद्द छोड़ने की।
रख लक्ष्य ऊंची उड़ानों की हिम्मत से न हार तू।।
चार दिन की जिंदगानी है फिर ये खुशियाँ वापस ना आएगी।
माटी पकड़े आए हैं, माटी ही हमें बचाएगी।।

फसलें है हमारी सखी–सहेली, हम वहाँ भी पहुँच जाते, जहाँ हो बड़ी हवेली।
ऐसी कोई जगह बची नहीं, जहाँ हमने अपनी सृष्टि रची नहीं।।
उन्नत खतरनाक रसायन वाली दवाएं ही हमें मिट्टी मे मिलाएगी।
माटी पकड़े आए हैं, माटी ही हमें बचाएगी।।

फसल में उग आएँ खरपतवार जो ज्यादा, कर देते ये फसल की उपज को आधा

ब्रह्मप्रकाश
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उ.प्र.)

हमारे द्वारा बोयी गई फसल के पौधों के अलावा उगे अन्य
सभी पौधे कहलाते हैं खरपतवार।
गेहूं की फसल में उगे चना व मसूर के पौधे, गन्ने की
फसल में उगे गेहूं के उगे पौधे भी होते हैं खरपतवार।।

खेतों मे किसान द्वारा बिना बोए स्वतः उगने वाले सभी
प्रकार के अवांछित पौधे कहलाते हैं खरपतवार।
जो प्रकाश, पोषक तत्वों, जल व स्थान के लिए मुख्य फसल
के पौधों से करते हैं प्रतिस्पर्धा लगातार।।

इसके अलावा मृदा में एलीलोपैथिक प्रभाव डालकर भी फसल
की वृद्धि में हैं डालते बाधा।
किसान को आर्थिक क्षति पहुंचाते हैं करके फसल की उपज
में कमी कभी कम कभी ज्यादा।।

खरपतवार उपज से अधिक क्षति पहुंचाते हैं जितनी पहुंचाते
हैं विभिन्न पशु, कीट व रोग।
सरसों के साथ आर्जीमोन के बीज का मिश्रण होने पर नहीं
करना चाहिए मानव को उपयोग।।

उत्तरप्रदेश में प्रमुखता से होते हैं खरपतवार ज्वार, मोंथा,
हिरन खुरी, पार्थीनियम व दूब।
मोंथा व दूब दोनों में ही वानस्पतिक प्रसार होने से मुख्य
फसल की उपज पर पड़ता है प्रतिकूल प्रभाव खूब।।

खरपतवार पानी, धूप, पोषक तत्वों व स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा
कर फसल की उपज कर देते कम।
फसल की वृद्धि रोककर उसके संचालन में बाधा बनकर
फसल की गुणवत्ता कर देते कम।।

फसल के पौधों के लिए हानिकारक रसायनों का उत्पादन
करके आर्थिक लाभ को कर देते हैं कम।
खरपतवार बीज, जड़, स्टोलन, प्रकंद, तना व कलम का
उत्पादन करके फसल प्रभावित कर ही लेते हैं दम।।

यांत्रिक विधि में भौतिक साधनों का उपयोग करके
खरपतवारों को हटाकर समाप्त है किया जाता।
ठसके अंतर्गत किसी भी खरपतवार के अंकुर निकलते ही
उन सबको हैं नष्ट कर दिया है जाता।।

फसल वृद्धि के आरंभिक चरण में खुरपी, कस्सी, कुदाल, हैंड
हो आदि जैसे औजारों का करतेहैंउपयोग।
बैल या ट्रैक्टर से चलने वाले कल्टीवेटर, हैरो व रोटावेटरसे
खरपतवारों के नष्ट करने हेतु करते हैं उपयोग।।

उत्तरप्रदेश में कुदाली द्वारा हाथ से होइंग करने की सदियों
पुरानी प्रथा का आज भी होता है प्रयोग।
श्रम प्रधान प्रक्रिया होने के बावजूद खरपतवार नियंत्रण के
इस तरीके का आज भी हो रहा है उपयोग।।

जहां मजदूरो ंकी उत्पादकता अत्यंत दुर्लभ है तथा बड़ा क्षेत्र
विभिन्न फसलों से होता है आच्छादित।
वहाँ बैल या ट्रैक्टर द्वारा खींचे जाने वाले देशी हल या
कल्टीवेटर का उपयोग है अत्यंत प्रचलित।।

फसल पैटर्न व उसमें अपनाई जाने वाली कर्षण क्रियाएँ
महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर रोकती हैं इन का प्रसार।
निचले क्षेत्र वाले धानमें शुष्क भूमि के विपरीत पूरी तरह से
अलग–अलग प्रकार के पाए जाते हैं खरपतवार।।

गन्ने के खेतोंमें खरपतवारों को नियंत्रित करने हेतु ट्रेश
मल्चिंग एक प्रभावी एवं किफायती है तरीका।
इस पद्धति में गन्ने की पंक्तियों के मध्य लगभग 10 सें.मी.
मोटे ट्रेश का कवर प्रदान है किया जाता।।

खरपतवार अनुसंधान निदेशालय का 22 अप्रैल 1989 को राष्ट्रीय
खरपतवार विज्ञान अनुसंधान केंद्र के रूप में आया अस्तित्व।
कमलागत वाली तथा पर्यावरण हितैषी खरपतवार प्रबंधन की
नई तकनीकों के विकास का इस पर है दायित्व।।

गत 34 वर्षों से विविध फसल प्रणालियों में टिकाऊ खरपतवार
प्रबंधन तकनीकों के विकास में संस्थान रहा मददगार।
खरपतवार प्रबंधन की तकनीकों को अनुसंधान एवं प्रदर्शनों के
माध्यम से प्रसार करने हेतु किसान जताते हैं आभार।।
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा
खरपतवारों के प्रबंधन हेतु किए जा रहे हैं नवीनतम अनुसंधान।

भारत के कृषि क्षेत्र में उत्पादन बढ़ाने हेतु खरपतवार अनुसंधान
निदेशालय दे रहा हर संभव उल्लेखनीय योगदान।।

"मै किसान हूँ"

जी.आर.डोंगरे
भा.कृ.अनु.परिषद्–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

अन्नदाता मेरा नाम
खेती करना मेरा काम
धोती-कुर्ता मेरी शान
पर घट रहा है मेरा मान
गरीबी, लाचारी मेरी पहचान
गाँव-गंवार मेरा अपमान
मेरी मेहनत से लोग अनजान
सर्दी, वर्षा, धुप पड़े
पर मुझे कहाँ चैन पड़े
फसल को देना रोज ध्यान
तब आयेगी खेती में जान
मैं हूँ कृषक सीधा-सादा
मुझे नहीं है शान ज्यादा
मुझे मिलते बीज नकली
दिखने में लगते असली-असली
कभी मिलते रसायन नकली
पैकिंग सील-ठप्पा असली
मुझे न इनकी सच्ची पहचान
इससे मैं हूँ बहुत परेशान
नकली बीज आधे उगे
नकली रसायन से ना रोग भगें
खरपतवारों पर न रोक लगे
गाँवों में न उचित दुकान
लगते फिर भी ऊँचे दाम

गाँवों में बिजली का रोना
सिंचाई बिन कैसे हो बोना
समय पर कभी न मिलती खाद
कैसे करूँ मैं फसल आबाद
सब करके फिर ओला-पाला
कीट-व्याधियों का गड़बड़ झाला
प्रकृति की भी पड़ती मार
तब होती किसानी की हार
कर्जे का बढ़ता व्यवहार
भूखा सोता घर परिवार
गहाई कर होता तैयार
गंड्डी में होती अनाज भरमार
भावों में होता चढ़ाव उतार
इस पर बिचोलियों की भरमार
ना मिल पता अनाज का दाम
होता खेती घाटे का काम
बढ़ जाता है कर्जा दाम
इन सबका बुरा अंजाम
अन्नदाता का ए पैगाम
बढाओ खेती उत्पाद के दाम
समय पर दो सच्चा आदान
बना दो खेती को लाभ का काम
तभी बढ़ेगी अन्नदाता की शान
जय जवान, जय किसान, जय विज्ञान

ग्लोबल वार्मिंग एक बढ़ती समस्या

राहुल ओझा, वर्षा गुप्ता, दीप सिंह सासोड़े, एकता जोशी, निशा सिंह
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

आज के युग में मनुष्य दिनों दिन कई तरह की नई तकनीके विकसित कर रहा है। विकास के लिए मनुष्य कई तरह से प्रकृति के साथ खिलवाड़ कर रहा है। जिससे वजह से प्रकृति के संतुलन को बनाये रखने में बड़ी मुश्किल हो रही है। इन सबके कारण धरती को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जिनमें से ग्लोबल वार्मिंग एक बहुत ही भयंकर समस्या है। ग्लोबल वार्मिंग हमारे देश के लिए ही नहीं बल्कि पूरे विश्व के लिए बहुत बड़ी समस्या है। सूरज की रोशनी को लगातार ग्रहण करते हुए पृथ्वी दिनों दिन गरम होती जा रही है। जिससे वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड का स्तर बढ़ रहा है। इस समस्या से न केवल मनुष्य बल्कि धरती पर रहने वाले प्रत्येक प्राणी को नुकसान पहुँच रहा है। इस समस्या से निपटने के लिए लोगों को इसका अर्थ, कारण और प्रभाव पता होना चाहिए। जिससे जल्द से जल्द इसके समाधान तक पहुँचा जा सके। इससे मुकावला करने के लिए हम सभी को एक साथ आना चाहिए। जिससे धरती पर मनुष्य के जीवन को बचाया जा सके।

ग्लोबल वार्मिंग क्या है – ग्लोबल का अर्थ पृथ्वी और वार्मिंग का अर्थ गरम होता है। अर्थात् इसका अर्थ पृथ्वी के निकटस्थ सतह वायु और महासागर के औसत तापमान में हो रही वृद्धि और उसकी निरंतरता से है। आसान भाषा में समझे तो ग्लोबल वार्मिंग का अर्थ पृथ्वी के तापमान में वृद्धि और इसके कारण मौसम में होने वाले परिवर्तन से होता है। जिसके कारण वारिश के तरीके में बदलाव हिमखण्डो और ग्लेसियरों के पिघलने, समुद्र के जलस्तर में वृद्धि और वनस्पति तथा जन्तुजगत पर प्रभाव के रूप में सामने आते हैं।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण :–

1. ग्रीन हाउस गैस – ग्लोबल वार्मिंग के कारण होने वाले जलवायु परिवर्तन के लिए सबसे अधिक जिम्मेदार ग्रीन हाउस गैसें हैं। ग्रीन हाउस गैसें वे गैसें होती हैं जो सूर्य से मिल रही गर्मी को अपने अंदर सौख लेती हैं। ग्रीन हाउस गैसों में सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण गैस कार्बन डाई ऑक्साइड होती है। जिसे हम जीवित प्राणी अपने सांस के साथ उत्सर्जित करते हैं। पर्यावरण वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी के वायुमण्डल में कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा लगातार बढ़ रही है। जिससे पृथ्वी का तापमान भी बढ़ रहा है। कार्बन डाई ऑक्साइड के अलावा अन्य गैसें जैसे नाइट्रोजन ऑक्साइड, क्लोरो फ्लोरो कार्बन, ब्रोमाइन कम्पाउंड आदि होते हैं। जो कि अपने पास गरम विकीरण को सौख लेते हैं। जिससे धरती की सतह गरम होने लगती है।
2. जंगलों की कटाई :– मनुष्य ने धरती के वातावरण को संतुलित बनाये रखने वाले पेड़ पौधों को काटकर वातावरण को अत्यधिक गरम कर दिया है। जिसके कारण समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है। समुद्र के बढ़ते हुए जल स्तर से दुनिया के कई हिस्से आने वाले समय में लीन हो जायेंगे। जिससे भारी तबाही मचेगी। यह हमारी पृथ्वी के लिए बहुत ही हानिकारक सिद्ध होगा।
3. ओजोन परत में कमी आना :– ओजोन परत का काम धरती को नुकसानदायक किरणों से बचाना है। जबकि धरती की सतह का ग्लोबल वार्मिंग बढ़ना इस बात का संकेत है कि ओजोन परत में क्षरण हो रहा है। जिससे सूरज की हानिकारक अल्ट्रा वाइलेट किरणें जीव मण्डल में प्रवेश कर जाती हैं और ग्रीन हाउस गैसों के द्वारा उन्हें सौख लिया जाता है। जो अन्ततः ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ाती हैं। अंर्टाटिका में ओजोन परत में कमी आना भी ग्लोबल वार्मिंग का एक कारण है। क्लोरो फ्लोरो कार्बन गैस के बढ़ने से ओजोन परत में कमी आ रही है। यह ग्लोबल वार्मिंग का मानव जनित कारण है। क्लोरो फ्लोरो कार्बन गैस का इस्तेमाल फ्रीज में, कई जगहों पर ओद्योगिक तरल सफाई में एरोसोल प्रणोदक की तरह होता है जिसके बढ़ने से ओजोन परत में कमी आती है।
4. उर्वरक और कीटनाशक :– खेतों में फसलों को कीड़ों से बचाने के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले उर्वरक और कीटरनाशक पर्यावरण के लिए हानिकारक हैं। ये केवल मिट्टी को ही नहीं बल्कि पर्यावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड गैसों को छोड़ते हैं। जो ग्लोबल वार्मिंग के लिए जिम्मेदार है।
5. औद्योगिकीकरण :– शहरीकरण को बढ़ावा देते हुए शहरीय इलाकों में कारखाने और कंपनियाँ लगातार बढ़ती जा रही हैं। जिनसे निकलने वाले विषैले पदार्थ, प्लास्टिक, रसायन और धुँआ वातावरण को गरम करने का काम कर रहे हैं।

6. प्रदूषण :– वायुमण्डल के तापमान में लगातार हो रही वृद्धि के कारणों में प्रदूषण भी एक प्रमुख कारण है। प्रदूषण कई तरह का होता है। जैसे वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, भूमि प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण आदि। प्रदूषण के कारण वायुमण्डल में कई तरह की गैसें बनती जा रही हैं। यह गैसें ही तापमान वृद्धि का मुख्य कारण है। जिससे ग्लोबल वार्मिंग हो रही है।

ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव –

- ग्लोबल वार्मिंग बढ़ाने वाले साधनों के कारण कुछ वर्षों पहले जहाँ मोनटाना ग्लेशियर राष्ट्रीय पार्क में 150 ग्लेशियर हुआ करते थे। लेकिन इसके प्रभाव की वजह से अब उनकी संख्या सिर्फ 25 रह गयी है।
- बढ़े जलवायु परिवर्तन से तूफान और खतरनाक होते जा रहे हैं। जिसकी वजह से तापमान में भी वृद्धि हो रही है। सन् 1895 के बाद से साल 2012 को सबसे गरम साल के रूप में देखा गया है और साल 2003 के साथ 2013 को 1880 के बाद से सबसे गरम साल के रूप में देखा गया है।
- ग्लोबल वार्मिंग की वजह से बहुत सारे जलवायु परिवर्तन हुए हैं। जैसे गर्मी के मौसम में बढ़ोत्तरी, ठण्डी के मौसम में कमी, तापमान में वृद्धि, वायुचक्रण के रूप में बदलाव, बिन मौसम बरसात, वर्ष की चोटियों का पिघलना, ओजोन परत में क्षरण, भयंकर तूफान, चक्रवात, बाढ़, सूखा आदि।
- अगर इस तरह से ग्लोबल वार्मिंग बढ़ती रहेगी तो जो भी वर्फीले स्थान हैं वो पिघलकर अपना अस्तित्व खो देंगे। जिससे समुद्र के जल स्तर में वृद्धि होगी और भयंकर तूफान, चक्रवात से जूझना पड़ेगा।
- कार्बन डाई ऑक्साइड गैस के बढ़ने की वजह से कैंसर जैसी बीमारी हो सकती हैं।
- ग्लोबल वार्मिंग के अधिक बढ़ने से ऑक्सीजन की मात्रा में भी कमी होती जा रही है। जिससे ओजोन परत कमजोर होती जा रही है।
- ग्लोबल वार्मिंग की वजह से रेगिस्तान का विस्तार होने के साथ–साथ पशु पक्षियों की कई सारी प्रजातियाँ विलुप्त होती जा रही हैं।

ग्लोबल वार्मिंग के रोकथाम के उपाय –

- सरकार, व्यापारिक नेतृत्व, निजी क्षेत्र, एन.जी.ओ. आदि के द्वारा जागरूकता अभियान चलाया जाना चाहिए जिसमें किसी भी एक देश के काम करने से नहीं बल्कि विश्व को इस पर काम करना पड़ेगा।
- ग्लोबल वार्मिंग से बहुत तरह की हानियाँ हुई हैं। जिन्हें ठीक तो नहीं किया जा सकता लेकिन ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ने से रोका जा सकता है। जिससे बर्फीले इलाकों को पिघलने से बचाया जा सके।
- वाहनो और उद्योगों से निकलने वाली हानिकारक गैसों को कम किया जाना चाहिए।
- जो चीजें ओजोन परत को हानि पहुँचाती है उन सभी चीजों पर प्रतिबंध लगना चाहिए।
- जिन वाहनों से प्रदूषण ज्यादा होता है उन पर रोक लगनी चाहिए और इलेक्ट्रीक गाड़ियों का अधिक उपयोग करना चाहिए क्योंकि इनसे प्रदूषण कम होता है।
- घर और ऑफिस में कम से कम एयर कंडीशनर का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि एयर कंडीशनर से निकलने वाले क्लोरो फ्लोरो कार्बन गैस वायुमण्डल को गरम करती है।
- पेड़ो की हो रही अत्यधिक कटाई को रोका जाना चाहिए और अधिक से अधिक पेड़ लगाये जाने चाहिए।
- जिन वस्तुओं (जैसे– पॉलीथीन) को नष्ट नहीं किया जा सकता उन्हें री–साइकिलिंग की सहायता से दोबारा उपयोग में लाया जाना चाहिए।
- पैकिंग करने वाले प्लास्टिक के साधनों का प्रयोग कम से कम करना चाहिए।
- जल संरक्षण और वायु संरक्षण का प्रयास किया जाना चाहिए।
- तेल जलाने और कोयले के इस्तेमाल, परिवहन के साधनों और बिजली के सामानों के स्तर को घटना चाहिए जिससे ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को कम किया जा सके।

वर्ष 2022–23 में भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की गतिविधियों एवं किये गये प्रयासो का संक्षिप्त विवरण

निदेशालय में राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन एवं प्रचार–प्रसार तथा समय–समय पर इसके प्रयोग एवं प्रगति का अवलोकन करने हेतु राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन किया गया है। समिति के प्रयासो के परिणाम स्वरुप संस्थान के सभी अनुभागों में हिन्दी में कार्य करने के लिये जो उत्साह उत्पन्न हुआ है, वह राष्ट्रीय गौरव और स्वाभिमान का विषय है।

राजभाषा हिन्दी के प्रयोग एवं प्रचार–प्रसार के क्षेत्र मे सर्वाधिक व सराहनीय कार्यो के लिए निदेशालय को 16 जुलाई, 2022 में परिषद के स्थापना दिवस के अवसर पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग में उल्लेखनीय योगदान के लिए "राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार 2020–21" के **प्रथम पुरस्कार** से सम्मानित किया गया एवं निदेशालय द्वारा प्रकाशित पत्रिका तृण संदेश को "गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार 2021" में **तृतीय पुरस्कार** से सम्मानित किया गया।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति कार्यालय क्रंमाक 02 द्वारा वर्ष 2021 के दौरान सरकारी कामकाज में राजभाषा के उल्लेखनीय एवं सराहनीय प्रचार–प्रसार हेतु दिनांक **16 दिसम्बर, 2022 को प्रशंसा पत्र** प्रदान किया गया।

दिनांक 16 जुलाई, 2022 राजर्शि टंडन प्रथम पुरस्कार

दिनांक 16 जुलाई, 2022 गणेश शंकर विद्यार्थी तृतीय पुरस्कार

वर्ष 2022–23 में खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के माध्यम से निदेशालय द्वारा हिन्दी में हुई प्रगति एवं गतिविधियों का विवरण इस प्रकार है–

दिनांक 16 दिसम्बर, 2022 प्रशंसा पत्र

त्रैमासिक बैठको का आयोजन

निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की त्रैमासिक बैठकों का नियमित आयोजन किया गया। हिन्दी राजभाषा कार्यान्वयन समिति की अप्रैल से जून, 2022 तिमाही की बैठक दिनांक 30/04/2022, जुलाई से सितम्बर, 2022 की तिमाही बैठक दिनांक 31/08/2022, अक्टूबर से दिसम्बर 2022 की तिमाही बैठक दिनांक 31/10/2022 एवं जनवरी से मार्च 2023 की तिमाही बैठक दिनांक 10/02/2023 को निदेशालय के सभागार में आयोजित की गई।

उक्त बैठकों में निदेशालय के समस्त अनुभाग प्रभारी, अधिकारी एवं समिति के पदाधिकारी सम्मिलित हुए। बैठक में कार्यान्वयन से संबंधित बिंदुओं पर विचार किया गया एवं पिछली बैठक के कार्यवृत्त को पारित किया गया। राजभाषा कार्यान्वयन समिति के प्रभारी द्वारा पिछली तिमाहियों का विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया, जिसमें राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3(3) के अनुपालन की स्थिति के संदर्भ में बताया गया, तत्पश्चात् पिछली तिमाहियों के अंतर्गत जारी त्रैमासिक प्रतिवेदनों, कागजातो, मांगपत्रो एवं जांच बिन्दुओं इत्यादि से संबंधित चर्चाएं की गई, साथ ही माननीय संसदीय राजभाषा समिति को दिये गये आश्वासनो के संबंध में संबंधित अनुभागो को उचित कार्यवाही करने हेतु पत्र भी जारी किये गये।

बैठकों में राजभाषा वार्षिक कार्यक्रमों में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने तथा राजभाषा विभाग एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद से प्राप्त निर्देशो/आदेशो/समीक्षाओं के अनुपालन पर चर्चा की गई और इन बैठकों में लिये गए निर्णयो को लागू करने के लिए कार्यवाही की गई।

राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम का क्रियान्वयन

भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुसार संस्थान द्वारा संपादित कार्यो में हिन्दी का क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिए गृहमंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा जारी राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम में दिये गये निर्देशों के अनुसार कार्यवाही के लिए सभी अनुभागो को राजभाषा संबंधी नियमों/निर्देशों से अवगत कराया गया तथा इन नियमों के अनुसार कार्यवाही सुनिश्चित करने का अनुरोध किया गया।

हिन्दी पखवाड़े का आयोजन–

निदेशालय में राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा दिनांक 14 सितंबर, 2022 को हिन्दी दिवस एवं दिनांक 14/09/2022 से 29/09/2022 तक हिन्दी पखवाड़े का आयोजन किया गया। जिसमें निदेशालय के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया।

हिन्दी पखवाड़े के समापन के दौरान मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. एस.पी. तिवारी, कुलपति, नाना जी देशमुख पशु चिकित्सा विज्ञान विश्व विद्यालय उपस्थित रहें। कार्यक्रम का शुभारंभ मां सरस्वती को माल्यार्पण कर भा.कृ.अनु.प. के महिमा गान से किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. एस.पी. तिवारी ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि भारत एक ऐसा देश है जहां के 70 से 75 प्रतिशत लोग हिन्दी भाषा को समझते, पढ़ते एवं बोलते है। हिन्दी अन्य सभी भाषाओं के बीच एक सम्पर्क भाषा का कार्य करती है। भाषा समाज, संस्कृति, इतिहास, राष्ट्र की अस्मिता और उसके भावी लक्ष्यों की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है। आजकल कम्प्यूटर, लैपटॉप एवं मोबाइल पर हिन्दी का प्रयोग करके नयी–नयी तकनीकी जानकारी को हिन्दी भाषा में कृषको तक पहुचांया जा रहा है। निदेशालय के उत्कृष्ठ कार्यो हेतु वर्ष 2022 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा प्रदान किये गए राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार 2020–21 एवं गणेश शंकर विद्यार्थी हिंदी पत्रिका पुरस्कार 2021 हेतु बधाई दी।

इस अवसर पर निदेशालय द्वारा प्रकाशित वार्षिक हिन्दी पत्रिका "तृण संदेश" के सत्रहवे अंक, निदेशालय के वार्षिक प्रतिवेदन 2021 का हिन्दी संस्करण एवं भा.कृ.अनु.प. –खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की महत्वपूर्ण उपलब्धियां 2021–22 (हिन्दी संस्करण) का विमोचन मुख्य अतिथि एवं निदेशक/अध्यक्ष राजभाषा द्वारा किया गया।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान निदेषालय में तात्कालिक निबंध प्रतियोगिता, हिंदी शुद्धलेखन प्रतियोगिता, कम्प्यूटर में यूनिकोड में टाइपिंग प्रतियोगिता, आलेखन एवं टिप्पणलेखन प्रतियोगिता, वाद–विवाद प्रतियोगिता, आशुभाषण प्रतियोगिता एवं प्रश्न मंच प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। हिन्दी पखवाड़े का समापन एवं पुरस्कार वितरण दिनांक 29/09/2022 को किया गया। समारोह में विजयी प्रतियोगियों को प्रमाणपत्र/पुरस्कार वितरित किये गये।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान निदेशालय में विभिन्न प्रतियोगिताएँ संपन्न कराई गई। जिसमें विजयी प्रतियोगियों के नाम नीचे सूची में दिये गये है।

1. **तात्कालिक निबंध प्रतियोगिता** – यह प्रतियोगिता दिनांक 17 सितम्बर, 2022 को दोनो समूहो (अ एवं ब) के लिए किया गया।

समूह 'अ'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	डॉ. सुशील कुमार	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री आलोक कुमार सेन	द्वितीय पुरस्कार

समूह 'ब'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्रीमती कुंदा विरूलकर	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री अनुराग मिश्रा	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री सुमित गुप्ता	तृतीय पुरस्कार
4.	श्री दाऊद रजा खान	प्रोत्साहन पुरस्कार
5.	श्री अभिषेक अहिरवार	प्रोत्साहन पुरस्कार

2. **हिंदी शुद्धलेखन प्रतियोगिता**– इस प्रतियोगिता का आयोजन दिनांक 19 सितम्बर, 2022 को किया गया।

समूह 'अ'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्री आलोक कुमार सेन	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री सौमित्र बोस	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री पंकज शुक्ला	तृतीय पुरस्कार

समूह 'ब'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्रीमती कुंदा विरूलकर	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री संगीता उपाध्याय	द्वितीय पुरस्कार
3.	सुश्री सौम्या मिश्रा	तृतीय पुरस्कार
4.	श्रीमती नीलम राजपूत	प्रोत्साहन पुरस्कार

3. **कम्प्यूटर में यूनिकोड में टाइपिंग प्रतियोगिता** – इस प्रतियोगिता का आयोजन दिनांक 20 सितम्बर, 2022 किया गया जिसमें निदेशालय के दोनो वर्ग के अधिकारी एवं कर्मचारी सम्मिलित हुए।

समूह 'अ'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	डॉ. मुनि प्रताप साहू	प्रथम पुरस्कार
2.	डॉ. पवार दीपक विश्वनाथ	द्वितीय पुरस्कार
3.	इंजी. चेतन सी.आर.	तृतीय पुरस्कार

समूह 'ब'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्री सुमित गुप्ता	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री मोहन लाल दुबे	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्रीमती इति राठी	तृतीय पुरस्कार
4.	श्री आदर्श रामटेके	प्रोत्साहन पुरस्कार
5.	श्रीमती नीलम चौरसिया	प्रोत्साहन पुरस्कार

4. **वाद–विवाद प्रतियोगिता** –दिनांक 21 सितम्बर, 2022 को वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

क्रं.	नाम	स्थान
1.	डॉ मुनि प्रताप साहू	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री सुशील कुमार	द्वितीय पुरस्कार
3.	सुश्री प्रीति ठाकुर	तृतीय पुरस्कार
4.	श्री राहुल दुबे	प्रोत्साहन
5.	श्री अनुराग मिश्रा	प्रोत्साहन

5. **आशुभाषण प्रतियोगिता** – इस प्रतियोगिता का आयोजन दिनांक 22 सितम्बर, 2022 को किया गया।

समूह 'अ'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	डॉ. सुशील कुमार	प्रथम पुरस्कार
2.	डॉ. मुनि प्रताप साहू	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री पंकज शुक्ला	तृतीय पुरस्कार
4.	श्री दिबाकर रॉय	प्रोत्साहन पुरस्कार

समूह 'ब'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्री अनुराग मिश्रा	प्रथम पुरस्कार
2.	श्रीमती इति राठी	द्वितीय पुरस्कार
3.	सुश्री प्रीति ठाकुर	तृतीय पुरस्कार
4.	श्री अंजनीकांत चतुर्वेदी	प्रोत्साहन पुरस्कार

6. **आलेखन एवं टिप्पण प्रतियोगिता**– दिनांक 23 सितम्बर, 2022 को निदेशालय के दोनो समूहो के अधिकारियों एवं कर्मचारियों हेतु किया गया था।

समूह 'अ'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	डॉ सुशील कुमार	प्रथम पुरस्कार
2.	डॉ. मुनि प्रताप साहू	द्वितीय पुरस्कार

समूह 'ब'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्रीमती कुंदा विरूलकर	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री मोहनलाल दुबे	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्रीमती इति राठी	तृतीय पुरस्कार
4.	श्रीमती आरती उपाध्याय	प्रोत्साहन
5.	श्री राकेश रजक	प्रोत्साहन

7. **प्रश्न–मंच प्रतियोगिता**– दिनांक 24 सितम्बर, 2022 को प्रश्न मंच प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें निदेशालय के अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा बनाई गई 09 टीमों (प्रत्येक टीम में 04 सदस्य) के प्रतिभागी एवं अन्य स्टाफ सदस्य सम्मिलित हुए।

क्रं.	नाम	रूपये
	प्रथम पुरस्कार	
1.	इंजी. वैभव चौधरी	600x4=2400/-
2.	श्री जे.एन. सेन	
3.	श्री अखिलेष पटेल	
4.	सुश्री शीतल उपाध्याय	

	द्वितीय पुरस्कार	
1.	डॉ पवार दीपक विश्वनाथ	500x4=2000/-
2.	श्री आलोक कुमार सेन	
3.	श्रीमती इति राठी	
4.	श्री सुमित गुप्ता	
	तृतीय पुरस्कार	
1.	डॉ दिबाकर रॉय	400x4=1600/-
2.	श्री धनश्याम विश्वकर्मा	
3.	डॉ. मुनि प्रताप साहू	
4.	श्रीमती कुंदा विरूलकर	

8. **नगद पुरस्कार** – वर्ष भर शासकीय कार्यो का संपादन हिन्दी में करने एवं 20,000 से अधिक शब्द हिन्दी में लिखने हेतु प्राप्त आवेदनों एवं चल शील्ड हेतु आवेदित किये गये अनुभागों के अभिलेखों का निरीक्षण सत्यापन/पुरस्कार चयन समिति द्वारा किया गया। समिति की अनुशंसा के अनुसार निम्न पुरस्कार निर्धारित किये गए है।

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्री फ्रांसिस जेवियर	प्रथम पुरस्कार
2.	श्रीमती इति राठी	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री भगुन्ते प्रसाद	तृतीय पुरस्कार

9. वर्षभर हिन्दी में सर्वाधिक कार्य करने वाले अनुभाग को चलित शील्ड–

1. क्रय एवं भण्डार अनुभाग – प्रथम
2. प्रक्षेत्र अनुभाग – द्वितीय
3. पी.एम.ई. अनुभाग – तृतीय

10. **हिंदीत्तरभाषी प्रतियोगी हेतु पुरस्कार** – डॉ. के.के. बर्मन को प्रदान किया गया।

11. **अन्य पुरस्कार/ स्मृति चिन्ह** –

1. राजभाषा कार्यान्वयन समिति का सम्मान।
2. हिन्दी पखवाड़े के आयोजन से संबंधित विभिन्न समितियों के सदस्यो का सम्मान।
3. निर्णायक मंडल के सदस्यो का सम्मान।
4. विशेष सहयोग हेतु कर्मचारियों का सम्मान।
5. वाहन चालकों का सम्मान।

राजभाषा वार्षिक पत्रिका के सत्रहवें अंक का प्रकाशन–

तृण संदेश पत्रिका के सत्रहवे अंक अप्रैल 2021 से मार्च 2022 का प्रकाशन किया गया, जिसमें खरपतवार प्रबंधन से संबंधित महत्वपूर्ण लेखो को स्थान दिया गया है। पत्रिका को स्लोगन एवं महापुरुषो के कथनों से प्रभावशाली बनाया गया।

हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन–

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा वर्ष 2022–23 के दौरान हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया गया, जिसका विवरण निम्नानुसार–

1. दिनांक 21 जून, 2022 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन **"उर्वरको का दक्ष एवं संतुलित उपयोग"** विषय पर निदेशालय के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों हेतु किया गया, जिसमें डॉ. विजय कुमार चौधरी, वरिष्ठ वैज्ञानिक द्वारा व्याख्यान दिया गया।
2. दिनांक 13 जुलाई 2022 को निदेशालय द्वारा एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन **"आजादी के 75 वर्ष और सरकारी कामकाज में राजभाषा हिन्दी का महत्व"** विषय पर सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियो हेतु किया गया। जिसके वक्ता श्री शोभन चौधुरी, अपर महाप्रबंधक, पश्चिम मध्य रेलवे, जबलपुर रहे।
3. दिनांक 22 सितम्बर, 2022 को निदेशालय द्वारा हिन्दी पखवाड़े के दौरान एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन **"कार्यालयीन कार्य में कार्यक्षमता वृद्धि हेतु हिन्दी प्रतियोगिताओं का महत्व"** विषय पर सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियो हेतु किया गया। जिसके वक्ता श्री मनोज कुमार, मुख्य तकनीकी अधिकारी, राजभाषा प्रकोष्ठ, नई दिल्ली रहे।
4. दिनांक 23 दिसम्बर, 2022 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन **"कृषि कार्य में उन्नत तकनीकी का उपयोग"** विषय पर सभी कृषकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियो हेतु किया गया। जिसके वक्ता श्री आर.एस. उपाध्याय, मुख्य तकनीकी अधिकारी रहे।

समाचारों में भाकृअनुप- खरपतवार अनुसंधान निदेशालय

ICAR-DWR in the NEWS

राज एक्सप्रेस

खरपतवार अनुसंधान निदेशालय द्वारा 34 वें स्थापना दिवस का आयोजन

पीपुल्स समाचार

सरकारी कामकाज समय से तथा पारदर्शी तरीके से किया जाए - डॉ. चौधरी

पीपुल्स समाचार

कृषि उत्पादन में आत्मनिर्भरता एवं भविष्य की चुनौतियां : डॉ. घोष

दैनिक भास्कर

राजभाषा प्रयोग-प्रसार के लिए मिला राष्ट्रीय पुरस्कार

जबलपुर। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा खरपतवार अनुसंधान निदेशालय को वर्ष 2020-2021 के दौरान राजभाषा हिन्दी के प्रयोग-प्रसार के क्षेत्र में सर्वाधिक कार्य करने के लिए राजर्षि टंडन

किसान सम्मान सम्मेलन आयोजित

दैनिक जग संवाद

गाजरघास के दुष्प्रभावों के प्रति जागरूक करना जरूरी

राज एक्सप्रेस

अधिक से अधिक हो सार्वजनिक और निजी सहयोग: डॉ. हिमांशु

अग्निबाण

सर्वोच्च सत्ता

प्रोडक्शन बढ़ाने गाजरघास को नष्ट करना जरूरी : डॉ. मिश्र

खरपतवार अनुसंधान निदेशालय में मनाया गया 17 वां राष्ट्रीय गाजरघास जागरूकता सप्ताह

The Hitavada

Directorate of Weed Research organises workshop under *Azadi Ka Amrut Mahotsav*

जय लोक

गाजरघास के दुष्प्रभावों के प्रति आमजन को जागरुक करना आवश्यकः डॉ. मिश्र

हरिभूमि

खरपतवार अनुसंधान निदेशालय ने मनाया 34वां स्थापना दिवस

तकनीकी विकास के साथ ही तकनीकी विस्तार जरूरीः कुलपति डॉ. पीके बिसेन

दैनिक भास्कर

हिन्दी के सर्वाधिक प्रयोग-प्रसार के लिए मिला सम्मान

जबलपुर। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, कार्यालय क्रमांक-2 द्वारा वर्ष 2021 के दौरान राजभाषा हिन्दी के प्रयोग-प्रसार के क्षेत्र में सराहनीय कार्यों के लिए खरपतवार अनुसंधान निदेशालय को लगातार द्वितीय वर्ष भी सम्मानित किया गया। गत दिवस आयोजित बैठक के दौरान उपमहाप्रबंधक, पमरे एवं अन्य अतिथियों की गरिमामयी उपस्थिति में निदेशालय को यह सम्मान प्रदान किया गया। इस अवसर पर अध्यक्ष राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं निदेशालय के निदेशक डॉ. जेएस मिश्र ने प्रयास को सराहा। इस दौरान डॉ. पीके सिंह, सह अध्यक्ष राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं बसंत मिश्रा, प्रभारी राजभाषा उपस्थित रहे।

पीपुल्स समाचार

हम सोचते हिंदी में हैं मगर बोलते अंग्रेजी हैं : पीके बिसेन

दो दिवसीय राष्ट्रीय हिंदी कार्यशाला का समापन

सी टाइम्स

राष्ट्र की अस्मिता और उसके भावी लक्ष्यों की अभिव्यक्ति का माध्यम है हिंदी : प्रो. मिश्रा

दैनिक दिशा भ्रमण

जबलपुर, मंगलवार, 27 सितंबर 2022

आक्रामक खरपतवार पर 5 दिवसीय प्रशिक्षण

खरपतवार के आक्रमण से फसलों को बचाना आवश्यक - डॉ.मिश्र

दैनिक आर्यावर्त खबर

देशभक्ति से ओतप्रोत सांस्कृतिक कार्यक्रम, उत्पादकता बढ़ाने गाजरघास को नष्ट करना जरुरी : डॉ. मिश्र

स्वतंत्र मत

डॉ. जेएस मिश्र को प्रतिष्ठित नास फैलोशिप अवार्ड

संरक्षित कृषि व खरपतवार प्रबंधन पर अनुसंधान के लिए मिला सम्मान

सी टाइम्स

मृदा स्वास्थ्य बनाए रखने संतुलित व दक्ष उर्वरकों का उपयोग जरूरी : डॉ. मिश्र

पीपुल्स समाचार

आक्रामक खरपतवार जमीन की उर्वरा शक्ति को कर रहा प्रभावित: डॉ जेएस मिश्र

पांच दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम हुआ शुरू

जबलपुर जनपक्ष

आक्रामक खरपतवार पर 5 दिवसीय प्रशिक्षण

खरपतवार के आक्रमण से फसलों को बचाना आवश्यक : डॉ.मिश्र

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

ISBN: 978-81-958133-7-7

मुद्रक: सेमफोर टेक्नोलॉजीज प्राइवेट लिमिटेड
3, गोकुल बराल स्ट्रीट, पहली मंजिल, कोलकाता, 700 012
मो. +91 9830249800

भाकृअनुप
ICAR

भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय

जबलपुर, (म.प्र.)

(आई.एस.ओ. 9001 : 2015 प्रमाणित)

DWR